ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, श्रृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। **श्रृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ 19 03 1973 पुष्प 50 राष्ट्र कैसे ऊँचा बनता है?

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान् और प्रतिभाशाली कहलाए जाते हैं। उसी की चेतना से यह जगत् चेतनित हो रहा है। जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् है, उनको जो क्रिया में लाने वाला है अथवा क्रियाशील बना रहा है वह एक मनोनीत चेतना कहलाई जाती है। उसी की चेतना में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड क्रियाशील दृष्टिपात आ रहा है।

आज का हमारा वेद का ऋषि हमें यह कह रहा है कि यह नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है और यह कह रहा है हे मानव! तू अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाने का प्रयास कर। ऊर्ध्वागति में कौन जाता है? ऊर्ध्वागति हम किसे कहते हैं? हमारे आचार्यों ने यह माना है कि सर्वत्र इन्द्रियों में उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन अथवा उसकी महानता निहित रहती है। हमारी प्रत्येक इन्द्रियों में धर्म और मानवता समाहित रहती है। तो हमें विचारना चाहिए कि मानव का धर्म और मानवता दोनों का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्योंकि धर्म उसे कहा जाता है, जिसको मानव अपने में धारण कर लेता है और धर्म उसे कहते हैं जो धर्म मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है। वह धर्म नहीं कहा जाता वह स्वतः ही उसमें निहित रहता है। प्रत्येक इन्द्रियाँ धर्म की उस सूत्र में पिरोई हुई रहती हैं जिस सूत्र को धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जाता है। वह जो धर्म है वह मुनिवरों! इन्द्रियाँ वृहे व्रत लोकाम् धर्मरूपी सूत्र में यह संसार पिरोया हुआ है। यह नाना लोक लोकान्तर पिरोएं हुए रहते हैं परन्तु आज हमें धर्म को जानना है। मैंने धर्म के सम्बन्ध में बहुत सी विवेचना पुरातनकाल में प्रगट करते हुए कहा है कि मानव को वास्तव में धर्म को जानना चाहिए। क्योंकि धर्म एक सूत्र है जिस सूत्र में प्रत्येक परमाणु पिरोया हुआ है। लोक लोकान्तर पिरोया रहता है

और वह ऋत् और सत् में भ्रमण करता हुआ मानव को उज्ज्वलता प्रगट करता रहता है, उज्ज्वलता देता रहता है।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आश्रम में विद्यमान रहते थे। ब्रह्मचारियों के मध्य में विराजमान हो करके वह ब्रह्मचारियों से उच्चारण कर रहे थे, हे ब्रह्मचारियो! आओ धर्म के ऊपर चिन्तन करना प्रारम करेंगे। वह काल जब स्मरण आने लगता है तो हृदय गद् गद् हो जाता है। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी प्रातःकालीन नाना समिधाओं को ले करके आचार्यों के चरणों में ओत प्रोत हो गए और ऋषि से कहते हैं महाराज! हम याग करना चाहते हैं। ब्रह्मचारी जब कहते हैं कि याग करना चाहते हैं तो ऋषि कहते हैं कि याग किससे कर रहे हो? उन्होंने कहा याग में समिधाओं के द्वारा कर रहा हूँ। समिधा किसे कहते हैं? समिधा उसे कहते हैं जो अग्नि को, चैतन्य अग्नि को उद्बुद्ध कर देती है। परन्तु अग्नि कैसे उद्बुद्ध होती है? यह समिधाओं के द्वारा होती रहती हैं और समिधा जब अग्नि में प्रवेश कर जाती है तो अग्नि उद्बुद्ध हो जाती है। इसी प्रकार हमारे यहाँ समिधा जहाँ काष्ठ की समिधा होती हैं, जहाँ वृक्ष की समिधा होती हैं वहाँ मुनिवरों! देखो, मानव के शरीर में जो याग होता है उसकी समिधा क्या है? ब्रह्मचारियो! तुम्हारे हृदय में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है उसकी समिधा क्या है, उसका वाजस्व कौन है? उसका उद्बुद्ध करने वाला कौन है? वेद के ऋषि ने जब ऐसा कहा तो ब्रह्मचारी कहते हैं हे प्रभु! हमारे शरीर की जो अग्नि उद्बुद्ध होती है उसकी समिधा ज्ञान है, उसकी समिधा विवेक है जिसको धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन धन्य हो जाता है और यह संसार उद्बुद्ध स्वाहा कह करके अपनी वाणी से आन्तरिक अपने को बाह्य जगत् में प्रवेश करा देता है और कहीं कहीं बाह्य जगत् की अग्नि को आन्तरिक जगत् में प्रवेश करा देता है। तो परिणाम क्या? यह जो विशाल अग्नि है उस अग्नि को हम अपने में धारण करना चाहते हैं जो अग्नि लोकों में सूर्य को वर्चस्व बना रही है, तेजोमयी बना रही हैं। वही अग्नि है जो पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश हो करके नाना प्रकार के खाद्य और खनिजों को उद्बुद्ध कर रही है। वही तेजोमयी अग्नि है जो नाना प्रकार की वनस्पतियों को ऊँचा बना

रही है। वही अग्नि है जो माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु प्रवेश करता है। उस एक बिन्दु के प्रवेश करने पर परमाणुओं की व्यवस्था, परमाणु विभक्त हो जाते हैं और परमाणु अपने अपने आँगन में गति करना प्रारम्भ करते हैं और जब माता के गर्भस्थल में परमाणु गति करते हैं, उन्हीं परमाणुओं से वह धर्मम् जबपृहे लोकाः, वेद का ऋषि कहता है अपने अपने धर्म और अपनी अपनी आभा में, अपने अपने कारण में प्रत्येक परमाणु लय हो करके, हम जैसे प्यारे पुत्रों! का निर्माण माता के गर्भस्थल में होता है। मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है कि जब मेरी प्यारी माता अनुसन्धान करती रही हैं। मुझे वह काल स्मरण है जब यहाँ मेरी प्यारी माता याग कर रही है और जब वह याग करती है तो उसका याग कैसा भव्य है कि उसका कोई व्रत करने वाला हो, अनुसन्धान करने वाला हो तो ब्रह्मलोक को प्राप्त हो जाती है। मेरी प्यारी मां, हे मां! तू वास्तव में जीवन को उद्बुद्ध करने वाली है, प्रकाश में ले जाने वाली है। ममतव को धारण करती हुई तू शरीर की अग्नि को उद्बुद्ध करने वाली है। वही अग्नि उद्बुद्ध हो करके अमृत में प्रवेश हो जाती है, अमृत में उसका परिवर्तन हो जाता है। वह माता का कितना व्यापक धर्म है और उस धर्म को जो अपना लेता है वह कर्त्तव्यवाद की वेदी पर विराजमान हो करके अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाता है, महान् बना लेता है।

आज मैं मुनिवरों! देखो, विशाल या विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ, आज हम संक्षिप्त परिचय देने आए हैं और वह परिचय क्या है कि वैदिक ऋषियों ने नाना रूपों में इस संसार की कल्पना की है। इस संसार को याज्ञिक पुरुषों ने यज्ञमयी माना है परन्तु देखो, यज्ञ में जिस भी वाक् को लेना प्रारम्भ करोगे वही वाक् अनन्तता में तुम्हें दृष्टिपात आता रहेगा। प्रत्येक मानव विज्ञान के युग में प्रवेश करना चाहता है, वैज्ञानिक बनना है। आज मेरे प्यारे! महानन्द जी मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा देते रहते हैं। परमाणुवाद की विचारधारा पर ले जाना चाहते हैं परन्तु आज से हमने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था कि संसार में मानव को अपने जीवन में शक्ति को उत्पन्न करना है। वह शक्ति जो अभ्यास गति बन करके, ओजस्व वर्चो बन करके मानव

जीवन को महान् बना देता है अथवा पवित्र बना देता है। जिस पवित्रता का स्वरूप मानवीय जीवन में एक आभा बन करके रहता है अथवा विचित्र बन करके रहता है।

आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ। एक समय का वाक् है मुनिवरों! देखो, ऋषि ब्रेनकेतु महाराज थे, ब्रेनकेतु ऋषि महाराज जो दद्दक गोत्रीय कहलाते थे, परन्तु देखो, वह उनका जो संस्कार हुआ वह शांडिल्य गोत्र में हुआ। उनका संस्कार जब शांडिल्य गोत्र में हुआ तो वह नित्य प्रति याग करते थे। केसा याग करते थे मुनिवरों! नाना साकल्य भयंकर वनों से एकत्रित करते रहते और याग करते रहते थे, वह विश्व ब्रह्माण्ड को, इस वायुमण्डल को पवित्र बनाते रहते थे और यह कहा करते थे कि सुगन्धि देना ही हमारा कर्त्तव्य है, सुगन्धि में लाना ही हमारा कर्त्तव्य है। तो इसीलिए संसार में प्रत्येक मानव को सुगन्धि को लाना है वह सुगन्धि यागों के द्वारा आती है, वह विचारों के द्वारा आती है, वह सुगन्धि राष्ट्र के द्वारा भी आती है। जिस राजा के राष्ट्र में मुनिवरों! देखो, सुगन्धि होती रहती है और सुगन्धि केसी होती रहती है? मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि वह राजा सुगन्धि सुगन्धि की स्थापना करता है, जिस राजा का जीवन सुचरित्र होता है। सुचरित्र जो जीवन होता है वह पाण्डित्य को ले करके, भव्य ज्ञान को ले करके वह अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाता है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब महाराजा जाद्दवी अपने आसन पर विद्यमान हैं परन्तु देखो, ब्राह्मण समाज यह उच्चारण करता है चलो राजा जाद्दवी के द्वारा ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त करेंगे। तो मुनिवरों! देखो, वह महाराजा जालवी के आश्रम को नाना ब्राह्मण, वेद के जिज्ञासु वह महर्षि राजा जालवी के द्वार पर पहुंचते हैं। जाद्दवी राजा मनु वंश में हुआ है। महाराजा जाद्दवी के समीप जब नाना ब्राह्मण पहुंचे, तो ब्राह्मणों ने यह विचारा, ऋषियों ने कि हम इसको मन ही मन में प्रणाम कर लेते हैं, हम मन ही मन में नमस्कार कर लेते हैं परन्तु जब तक हमें यह प्रतीत न हो कि यह राजा ब्रह्मज्ञानी है अथवा नहीं है। तो उन ऋषियों में से मुनिवरों! देखो, ब्राह्मणों में एक ब्राह्मण की चुनौती हुई, ब्राह्मण को निर्वासन किया और यह कहा कि तुम इस राजा से यह प्रश्न करो और राजा इसका क्या उत्तर देगा और उसके मस्तिष्क को दृष्टिपात करो

कि यह वातव में ब्रह्मवेत्ता है या नहीं। तो मुनिवरों! कहा जाता है कि उनमें से महाराजा वरुण महर्षि वरुण ने महर्षि गौतम के पिता ने महाराजा जाद्दवी के मस्तिष्क को दृष्टिपात करके यह कहा कि महाराज! तुम जो प्रातःकाल याग करते हो वह कितनी समिधाओं से करते हो? तुम मुनिवरों! देखो, उस समय महाराजा जालवी कहते हैं कि जो याग किया मैंने प्रातःकाल में वह तीन प्रकार की समिधा थीं, वह तीन समिधाओं से मैं याग करता हूँ। वह तीन समिधा क्या हैं? महाराजा जालवी कहते हैं कि तीन जो समिधा हैं वह तीन समिधा जिससे मैं अग्न्याधान करता हूँ, अग्नि को प्रदीप्त करता हूँ वह तीन प्रकार की समिधा मेरे यहाँ ज्ञान, कर्म और उपासना कहलाई जाती हैं। वाह रे राजन्! राजा जालवी क्या उत्तर देते हैं ऋषि को कि मैं अपने हृदय में उन अग्नियों को उद्बुद्ध कर रहा हूँ और प्रातःकाल में उद्बुद्ध करता हूँ, उन्हीं अग्नियों से मैं याग करता रहता हूँ, उसी बाह्य जगत् में याग करता हूँ, तीन समिधाओं से याग करता हूँ। तीन समिधा क्या हैं? ज्ञान, कर्म और उपासना के ऊपर चिन्तन प्रारम्भ रहता है। परन्तु उन्हीं को बाह्य जगत् में जाता हूँ तो अग्न्याधान करता हूँ, वह काष्ठ की तीन समिधा ले करके वह तीन ही क्यों मानी जाती हैं? क्योंकि वह त्रैत वाद को मुझे जागरूक बनाना है। मेरे हृदय में जो तीनों गुण हैं रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण यह तीन समिधा को ले करके मैं अग्न्याधान करता हूँ। इसलिए कर रहा हूँ कि बाह्यजगत् भी मेरा यह लोक परलोक यह त्रीवर्द्धम्, त्रीव्रतों में मेरा यह संसार पवित्र बन जाए। मैं राष्ट्र को तीन विभाग में विभक्त करना चाहता हूँ। ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य और शूद्र एक शूद्र को मैं नहीं ले रहा हूँ, तीनों विभागों में मैं अपने राष्ट्र का मैं अपनी प्रजा को एक सूत्र में लाना चाहता हूँ। इस प्रकार का विचार जब मुनिवरों! देखो, राजा ने महाराजा जाद्दवी को दिया तो ब्रह्मवेत्ताओं को, जिज्ञासुओं को प्रतीत हो गया कि राजा तो ब्रह्मवेत्ता है, और ब्राह्मण है।

मुनिवरों! उसके समीप विद्यमान हो गए और यह कहा कि महाराज! हम आपसे वह जानना चाहते हैं कि यज्ञमान तीन से याग कर रहा है वह तीन आपने प्रथम कैसे कहा था कि मैं ज्ञान, कर्म और उपासना के द्वारा याग कर रहा हूँ। ज्ञान, कर्म और उपासना के द्वारा याग कर रहा हूँ। ज्ञान, कर्म और उपासना में क्या क्या दोनों में अन्तरद्वन्द

माना गया हैं राजा करते हैं कि ज्ञान कहते हैं इस संसार के प्रत्येक पदार्थ का ज्ञान हो जाना और प्रत्येक पदार्थ को ज्ञान में लाना ही उसका मुझे एक समिधा बनानी हैं, समिधा का अभिप्राय यह है जो मेरा विचार है, मेरा जो संकीर्णवाद है, वह व्यापक बन करके वह ज्ञान में परणित हो जाए, ज्ञान में आभाहित हो जाए, ज्ञान और विज्ञान होगा तो मैं कर्म कांड की पगडन्डी को जान सकता हूँ। कर्मकांड में मेरी निष्ठा हो जाए, कर्मकांड में मैं आभा में निहित हो जाऊँ तो वह मेरी उज्ज्वल समिधा है। ज्ञान, कर्म और उपासना उसके पश्चात् परमात्मा को अपने को समर्पित कर सकता हूँ, परमात्मा को समर्पित करना बहुत अनिवार्य है जिस प्रकार माता अपने बालक को गर्भस्थल में धारण करती हुई अपने को बालक में रत्त कर देती है, इसी प्रकार देखो, मैं अपने को रत्त करना चाहता हूँ। वह तीन समिधा हैं, समिधा का अभिप्राय यह कि मेरी अन्तिम जो समिधा है मेरे शरीर और विचारों की समिधा बन करके वह अग्न्याधान जब परमात्मा ब्रह्म को प्राप्त होती चली जाएँ, ब्रह्म में निष्ठित हो जाऊँ ऐसा विचार वह दे रहा था। परन्तु आगे ब्राह्मणों ने कहा कि प्रभु वह तीन प्रकार की समिधा कौन सी हैं जिनसे यह राष्ट्र ऊँचा बनता है, राष्ट्र को भव्य बनाया जाता है। उस समय राजा ने कहा कि तीन प्रकार की समिधा वह कहलाती हैं जो राष्ट्र को ऊँचा बनाती हैं। सबसे प्रथम जिसमें चटाचट होती हो, जिसमें चरणिन्त होती हो, उसका अभिप्राय यह कि मेरे राष्ट्र मे बुद्धिमान विश्ेष हों ओर बुद्धिमान के द्वारा यह राष्ट्र, समाज ऊँचा बनता है। जब बुद्धिमान जिस भी काल में होते हैं, जिस गृह में बुद्धिमान पुरुष होते हैं उस राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। परन्तु इसी प्रकार मेरी वह प्रारम्भ की जो समिधा है उससे हो मैं अपने राष्ट्र में ब्राह्मणों को ओजस्वी बनाता हूँ। मुनिवरों! देखो, राजा जाह्नवी कहते हैं कि मेरे यहाँ एक समय ब्रह्मपवेत्ता स्वर्णसकेतु ऋषि महाराज आए और स्वर्णकेतु ऋषि महाराज ने यह कहा कि महाराज! मेरे जो आचार्य हैं, मेरे जो पितर हैं, आचार्य मैं उनके कुल में अध्ययन कर रहा हूँ परन्तु उनके कुल में बुद्धिमान तो बहुत हैं परन्तु वहाँ भवन् देखो, द्रव्र् की हीनता हो गई है। मैं द्रव्य चाहता हूँ तो मुनिवरों! देखो, महाराजा जाह्नवी कहते हैं ब्रह्मवेत्ताओं से मैंने द्रव्य को प्रदान किया ओर यह कहा कि जाओ

ब्रह्मचारी ले जाओ क्योंकि विद्यालय पवित्र होने चाहिएँ विद्यालय में बुद्धिमत्ता होनी चाहिए इससे मेरा राष्ट्र पवित्र बन जाए। महाराजा जाह्नवी ने कहा कि मेरी सबसे प्रथम समिधा ब्राह्मण मेरे राष्ट्र में हाँ, द्वितीय मेरे यहाँ क्षत्रिय हों जिन क्षत्रियों से मेरा राष्ट्र बलिष्ठ होता है, पवित्र बनता है और उनमें धर्म पिरोया हुआ रहता है। इसी प्रकार तृतीय जो समिधा है वह वैश्य होनी चाहिए, वैश्य अपने द्रव्य को, कृषक उद्यम कने वाला हो, कृष्क से जो द्रव्य आता है और भी नाना प्रकार का व्यापार बनज होता है, जिससे राष्ट्र की आभा बनती है, पवित्रतम बनती हैं। आज वह मेरे यहाँ ऊँचे होने चाहिएँ, सुचरित्र होने चाहिएँ, उनकी किसी प्रकार की हीनता न हो तो मेरा राष्ट्र पवित्र होगा। परन्ु देखो, उसे समय उन्होंने कहा तो प्रभु! आप जिन याज्य से अग्न्याधान करते हो वह समिधा कौन सी है? उन्होंने कहा वह समिधा मेरे यहाँ जिससे मैं प्रातःकालीन याग करता हूँ, मैं और मेरी पत्नी जो याग करते हैं सबसे प्रथम हम ब्रह्म हम ब्रह्म चिन्तन करते हैं, ब्रह्मयाग करते हैं और ब्रह्मयाग के पश्चात् हम देवपूजा करते हैं और देवपूजा के पश्चात् हम अतिथि की सेवा करते हैं। यह तीन याग हमारे राष्ट्र में तीन प्रकार की यह समिधा कहलाती हैं। सबसे प्रथम ब्रह्म का चिन्तन होता है, ब्रह्म के चिन्तन का अभ्रिपय यह कि ब्रह्म की आभा में रमण करते रहते हैं। यह ब्रह्म क्या है? हमारे यहाँ प्रथम नियम माना है पवित्रवत् मे कि पति पत्नी अपने अपने स्थान पर विद्यमान हो करके प्रातःकाल अपने आसन को साफ करके ब्रह्म का चिन्तन करते हैं और चिन्तन करने की है ब्राह्मणों! मेरे राष्टञ में कोई ऐसा गृह नहीं है जिस गृह में ब्रह्म का चिन्तन न होता हो। पति पत्नी ब्रह्म का चिन्तन न करते हों, एक आसन पर विद्यमान हो करके ब्रह्म क्य ाहै ब्रह्म किसे कहते हैं? यह ब्रह्म में हम अपने उस मानवीय आभा को पिरोने वाले हैं तो वह ब्रह्म का चिन्तन प्रत्येक राजा के प्रत्येक समाज में, गृह मे होता रहता है, जिससे गृह में सात्विकता आ जाए, मानवता आ जाए और मानवता आ करके शिष्टाचार आ जाए, सदाचार आ जाए, क्योंकि ब्रह्म के चिन्तन से नाना लाभ होते हैं। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति पत्नियों के गृह में सन्तान बुद्धिमान होती है।

राजा जाह्नवी ने बहुत पुरातनकाल में कहा था। मेरे यहाँ मेरे राष्ट्र में भोगवाद नहीं है,

मेरे राष्ट्र में तो केवल शिष्टाचार है, चार है, मेरे राष्ट्र में याग होते हैं और याग भी भिन्न भिन्न प्रकार के, माता पिता यह चाहते हैं कि हमे सन्तान को जन्म देना है, हमें सन्तान को उत्पन्न करना है तो माता पिता चिन्तन करते हैं और चिन्तन करने के पश्चात् वह अपनी अपनी हवि को अपने अपने आसन पर परणित कर देते हैं। उससे सुसन्तान का जन्म होता है और वह जो सुसन्तान है वही गृह को ऊँचा बनाती है और जो माता पिता अपने बाल्य को ऊँचा नहीं बना सकते, महान् नहीं बना सकते, ब्रह्मचारिष्यामि नहीं बना सकते उन माताओं का जीवन न होने के तुल्य कहलाता है। वह माता सौभाग्यशालिनी होती है जो माता अपने गर्भस्थल में माता मल्दाल्सा की भांति अपने प्यारे पुत्र को गर्भाशय में ब्रह्म का उपदेश देने वाली है। वह गृह धन्य होते हैं, वह राष्ट्र धन्य होता जिस राजा के राष्ट्र में ब्रह्म का चिन्तन होता हो। प्रत्येक गृह अपने आश्रम में ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हों और उसके पश्चात् वह देवपूजा करने वाले हों, देवपूजा कौन करता है? देवपूजा वह माता पिता करते हैं जिनके गृह में सुगन्धि होती है, बाल्य ऊँचे बनते हैं। माता पिता प्रातःकालीन देवपूजा करते हैं, देवपूजा किसे कहत हैं? समिधा को अग्न्याधान किया, अग्नि प्रदीप्त हो गई है और उसमें स्वाहा कहते हैं अपनी वाणी को अग्नि की तरंगों पर विश्राम करा करके वह द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है, वह द्यौ लोक में प्रवेश कर जाती है। वह देवपूजा केसा स्वच्छ हृदय है, परामात्मा की वाणी से कहता आचार्य उदबुध स्वाहा अग्नि मानव उद्बुद्ध कहता है और स्वाहा अग्नि कह रहा है। हे उद्बुद्ध होने वाली अग्नि! तू अन्तरिक्ष में रमण करने वाली है तू द्यौ लोक का प्राप्त होने वाली है। वह माता पिता धन्य हैं जो अपनी वाणी को द्यौ लोक में पहुंचा देते हैं अन्तरिक्ष में पहुंचा देते हैं। अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके यह वाणी अपने स्वरूप को ले करके द्यौ लोक को प्राप्त हो जाती है। परिणाम क्या? देवताओं का दूत कौन है? वह देवताओं का दूत ही तो अग्नि कहलाती है। अग्नि महान् है। तृतीय जो समिधा है जो जीवन में प्रदीप्त होती है वह अतिथि की सेवा है। अतिथि की सेवा किसे कहते हैं? और बुद्धिमान का जब सवगत होता है तो बुद्धिमान प्रसन्न होता है, योगेश्वर प्रसन्न होता है और जब वह प्रसन्न होता है तो मुनिवरों! देखो, अपने पुण्य को दे करके

वह वहाँ से प्रस्थान करता है जो उसने अध्ययन किया है शिक्षाओं का आकृत किया है। उस शिक्षा को गृह को दे करके वह अपने आसन को प्रस्थान करता है।

तो मुनिवरों! उस समय महाराजा जाह्नवी ने जब यह ब्रह्मवेत्ताओं को कहा, तो उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! उन्होंने कहा प्रभु! हम तो आत्मा की समिधा को जानना चाहे हैं प्रभु! जिससे आत्मवेत्ता बनता है पुरुष। यह तो हमने साधारण उपदेश आपसे पाया है, परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि आत्मा का उत्थान कौन सी अग्नि से, कौन सी समिधा से होता है, जिससे हम आत्मवेत्ता बनें और आत्मा में प्रवेश करते हुए आत्मवत् को प्राप्त होते रहें। मेरे प्यारे! महाराजा जाह्नवी ने कहा कि आत्मा का उत्थान करना है। हे ब्रह्म जिज्ञासुओं! हे आत्मा! के जिज्ञासुओं! आ यदि तुम यह चाहते हो कि हम आत्मा का कल्याण चाहते हैं आत्मा को ऊर्ध्वागति में ले जाना चाहते हैं जो ब्रह्मचरिष्यामि देवतव ब्रह्म लोकाः आज मैं तुम्हें एक ही वाक् प्रगट करा देता हूँ जहाँ यह जो ब्रह्म की चर्या है, ब्रह्मचर्य जो हमारे शरीर में प्रवास है, गति कर रहा है इसको प्राण के द्वारा प्राण रूपी तरकस से तीन की भांति इसका आजस्व करा दो और उससे आत्मा मनस्तत्व पृहे लोकाः एक ही लक्ष्य रहता है कि आत्मा को जानना है। जब उस पर, धनुष पर तीन रख लिया जाता है तो उसका लक्ष्य ब्रह्म का प्राप्त करना, वह ब्रह्म का यह प्राण प्राणायाम करना ओर प्राण के द्वारा इस आत्मा को जानना क्योंकि मन को आत्मा के, आत्मा मन को प्राण रूपी तरकस के ऊपर तीन की आभा में अभ्यस्त करा देना चाहिए, जिससे यह आतम में प्रवेश कर जाए और आतम्वत् जो है यह आत्मा का ज्ञान ही संसार में एक मानवता को प्रवेश करा देता है। आत्मज्ञान है जो राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, आत्म ज्ञान है जो मोक्ष को ले जाता है, आत्मा का जो बलिष्ठ प्राणी होता है वह सन्तान से हीन नहीं हो सकता। वह अपने जीवन में ऊँचे कर्मों से हीनता को पाप्त नहीं होता। इसीलिए मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने प्यारे महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा था कि मानव को अपनी आत्मा को ऊर्ध्वा बनाना चाहिए। आत्म्वत् जो पुरुष होता है उसके शरीर में वीरतव होता है और हो वीरतव होता है वह देखो, जहाँ देवयाग करता है, वहाँ पितर याग में सफलता को प्राप्त होता है। मैंने बहुत पुरातन

काल में अपने वाक्यों को प्रगट करते हुए कहा था जिस संसार में मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है अपने जीवन में आत्म तत्वों को प्राप्त करना है, आत्म् ब्रह्मलोकों को प्राप्त करना है।

आज का हमारा यह वाक् क्या कह रहा है? आज मैं यह महाराजा राजा जाह्नवी के वाक्यों को प्रगट कर रहा हूँ। महाराजा जाह्नवी जहाँ ब्रह्मवेत्ता जहाँ वह राष्ट्र में कुशल थे, वहाँ आत्मवत् को जानते थे, वहाँ ब्रह्मवेत्ता भी कहलाए जाते थे। ब्रह्म जिज्ञासुओं ने जब यह वाक् प्रगट किया तो उस समय उन्होंने कहा कि महाराज! आत्मा का संतान का क्या संग्रह है। आज जो आपने सन्तान को कहा है, अथवा पुत्र को कहा है। उस समय महाराजा जाह्नवी कहता है कि यह मानव के जीवन में स्वाभ्भाविक परिणाम की इच्छा होती है। एक मानव माता पिता जो अपने गृह में कर्म करते हैं, तो कर्म कने के पश्चात् मानव को परिणाम की इच्छा होती है। उस परिणाम में मारनव का यह स्वभाव बन जाता है कि वह पितरयाग करता है और पितर बनने की उसे स्वतः एक आत्मा की पिपासा जारूक होती है। इसीलिए मैंने यहाँ पुत्र की आभा उच्चारण की है। महाराजा जाह्नवी के इन वाक्यें को पान करने वाले ऋषियें ने कहा कि प्रभु हम यह जान सकते हैं कि आत्मा के मोक्ष का पुत्र का क्या सम्बन्ध है? उन्होंने कहा कि मोक्ष का और पुत्र का विशेष कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु जो मानव त्याग पूर्वक रहता है इस संसार में त्याग से रहता है क्योंकि पितर जो होता है और पुत्र होता है वह माता पिता का हृदय होता है। परन्तु वह जो हृदय है वही तो हृदय वर्चोसि बना देता है और जो हृदय है, एक हृदय को त्याग करके एक हृदय को देवगति को प्राप्त कराता हुआ वह मोक्ष की पगडन्डी को प्राप्त कर लेता है। परन्तु देखो, मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने वाक्यें को निर्णय देते हुए कहा था। महाराजा जाह्नवी ने जब यह वाक् कहा तो ऋषिवर उनके वाक्यों से सन्तुष्ट होने लगे। उन्होंने कहा कि महाराज! मोक्ष में क्या होता है? पुत्र की आभा तो समाप्त हो जाती है। उन्होंने कहा कि जैसे मानव यह आत्मा और परमात्मा का पुत्र है और मोक्ष में जाने के पश्चात् वह परमात्मा को प्राप्त हो जाता है, परमात्मा में आभाहित आनंद को प्राप्त हो जाता है, परमात्मा में आभाहित आनन्दी को प्राप्त हो

जाता है। इसी प्रकार पुत्र बनने में ही मानव अपने ब्रह्म वेग ब्रह्मज्ञान को प्राप्त कर सकता है। जैसे आर्चा कुल में प्रवेश हो करके शिष्य जब ब्रह्मज्ञान की आभा में रमण करता है और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करपने के लिए उसकी उत्कृष्ट इच्छा होती है तो मुनिवरों! वह पुत्र बन करके, शिष्य बन करके उनके चरणों को छू करके वह ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करता है। क्योंकि देखो, वह उसका पुत्र है, क्योंक पुत्र ही पिता के आँगन का प्राप्त हो जाता है। पिता मान आँगन में प्रवेश करके जैसे मोक्ष मं जाने वाला आत्मा प्रकृति की तरंगों को त्याग करके वह परमात्मा ब्रह्म रूपी पितर के द्वार पर प्रवेश कर जाता है, इसी प्रकार शिष्य अपने गुरु के द्वार में प्रवेश कर जाता है, वह ब्रह्मज्ञानी बनता है। ब्रह्मज्ञानी बन करके उसको क्रिया में लाता है क्रिया में ला करके वह रजोगुण, तमोगुण को समाप्त करता है वह उनमें प्रवेश करके ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

आज मैं विश्ेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने को आया हूँ आज मैं तुम्हें यह वाक् प्रगट करने को आया हूँ कि राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। जब राजा के राष्ट्र में राजा ब्रह्मवेत्ता होता है तो उस समाज के उस प्रजा के वैभव को कोई भी मानव नष्ट नहीं कर सकता, क्योंकि उसका राजा ब्रह्मवेत्ता है, वह ब्रह्मवेत्ता बन करे ब्रह्म में लीन रहता है, ब्रह्म में समादिष्ट रहता है। अपने वैभव की उसे चिन्ता नहीं होती वह अपने कर्त्तव्य का पान कर रहा है। प्रातःकाल याग कर रहा है मानव समय पर अपने अन्न का शोधन कर रहा है। तो वह जो राजा है, वह ऊँचा है तो इसी लिए वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि राजा तो ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। राजा ब्रह्मवेत्ता वह होता है, जो ब्रह्मचरिष्यामि जो ब्रह्म को जान लेता है, ब्रह्म के परिमाणुओं को जान लेता है वह देवता बन जाता है वह प्रत्येक परमाणु पर अपना अनुशासन कर लेता हे और जो अनुशासन नहीं कर सकता वह प्राणी नहीं कहलाता संसार में, वह पामर कहलाता जाता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को प्रत्येक मे पुत्री को प्रत्येक माता को प्रत्येक ऋषि मुनि को अपने जीवन में अनुसन्धान की आवश्यकता है और प्रतिभा को प्राप्त करने की आवश्यकता है जिससे यह संसार ऊँचा बनता है, महान् बनता है, पवित्र बनता है और उस पवित्रता को लाने के लिए मानव को तप की आवश्यकता

होती है। यह है आज का हमारा वाक् आज वेद का ऋषि यह क्या कह रहा है? आज के वेद के ऋषि की वार्त्ता को श्रवण करके हमारा अन्तरात्मा गद् गद् हो गया। यह कहा है कि हम प्रत्येक रूप मं याग करते हैं, और यही हमारा धर्म है और धर्म और मानवता का दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है ओर मानवता धर्म से ही संसार ऊँचा बनता है, धर्म में पिरोया हुआ है यह संसार। क्योंकि वाणी से ले करके मानव की प्रत्ेयक इन्द्रियाँ धर्मा में पिरोई हुई हैं, जिज्ञासु होता है, जो विवेकी होता है, वही उनको अपने में धारण करता है, अन्यथा इनको धारण नहीं किया जाता है।

मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ। आज मैं तुम्हें यह वाक् प्रगट रने आया था कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को अपने जीवन को ऊँचा बनाना है और मानवीयता को महानता के मार्ग पर ले जाना है परमात्मा को प्राप्त होना है, दर्शन को पाना है। हे मानव! मानव का दर्शन क्या है मानव को अपने स्वतः अन्तरात्मा में प्रवेश हो करके जानना चाहिए कि उसको स्वतः मानवीय दर्शन क्या है। सवतः अपने को जानना ही एक मानवता है। जो यगा हो रहा है। वह यागाम् ब्रह्म समिधा सवहा, वह स्वाहा कह करके याग कर रहा है, स्वाहा का अभिप्राय क्या? जिससे अग्नि उद्बुद्ध होती है, स्वाहा से अग्नि उद्बुद्ध होती है। इस स्वाहा को हमने, मेरे प्यारे! आचार्य ऋषि मुनियों ने वेद से जाना तो ऐसा कहा है कि जो मानव अग्नि के समीप विद्यमान हो करके स्वाहा कहता है उसकी वाणी का परिमाणुवाद जितने आकार का वह मानव शरीर बना हुआ है उतने ही आकार का परमाणुवाद मुनिवरों! दरेखो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाता है। स्वाहा स्वच्छ होना चाहिए। स्वाहा हृदरय से स्वच्छ होना चाहिए, जिससे कि वायुमण्डल पवित्र बन जाए, गृह पवित्र बन जाए। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, मैने वह अध्ययन किया हुआ अध्याय जो किसी काल में ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ेन यह याग किया था अपने गृह में एक याग किया था। याग करने के पश्चात् अपनी पत्नी से कहते हैं कि हे देवो! एक सन्तान को जन्म देना है। जन्म देने से पूर्व एक याग करना है। उन्होंने छेः माह तक ब्रह्मचर्य को धारण करके उन पति पत्नी ने मुनिवरों! देखो, भयंकर वनो में साकल्य एकत्रित किया औषधियों

एकत्रित कने के पश्चात् उन्होंने याग किया और वह स्वाहा उच्चारण किया स्वच्छ हृदय से, स्वच्छ मन्त्र हैं, कहाँ व्यंजन आना चाहिए कहाँ स्वर होना चाहिए। याग करने के पश्चात् उनके यहाँ एक महान् बालक का जन्म हुआ। तो हमारे यहाँ यगा की बहुत महिमा मानी गई है। प्रत्येक शुभ कर्म याग के द्वारा सम्पन्न होते हैं।

आज का वाक् अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हमें परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान : श्री ब्रजेश कुमार त्यागी ईकडी समय : रात्री 8.30 बजे

२ 16 08 1983 पुष्प 50 राजा नल का दीपमालिका आदि का वर्णन

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं। मानो उसी की चेतना से यह जगत् चेतनित हो रहा है, वह इस ब्रह्माण्ड के कण कण में ओत प्रोत हैं। कोई भी पर्वतों की ऐसी गुफा नहीं है जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो, कोई समुद्रों की तरंगें ऐसी नहीं हैं जहाँ उस मेरे देव की आभा विद्यमान न हो। बेटा! वह सर्वत्रता में ओत प्रोत है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अनुसन्धान करता रहा है अथवा उसकी महिमा को गान रूपों में गाता रहा है।

आज हमारा वेदमन्त्र में कुछ वायु सूक्तों का पठन पाठन हो रहा था, क्योंकि यह जो वायु है यह एक सूत्र कहलाता है। मानो वायु सूक्त और विष्णुसूक्तों में केवल गान की महिमा का वर्णन आता रहा है। मानव जब गान गाता है तो यह संसार गान गाने वाले का मोहित हो जाता है। उसकी ममता में रमण करने लगता है जैसे पांडितव जब वाणी से यथार्थ उच्चारण करने लगता है, तो मानव कहता है यह पांडितव है जो उच्चारण कर रहा है, यह यथार्थ है, वह सत्यवादी है। क्योंकि वह हृदय से सत्य का प्रतिपादन कर

रहा है, सत्य की महानता का वर्णन कर रहा है क्योंकि सत्य की विवेचना करता हुआ आचार्य अपनी ऊर्ध्वागति में परम्परागतों से ही, यह रमण करता रहा है।

मुझे वह परम्परा का एक वाक् स्मरण आ रहा है मानो उद्दालक गोत्र में एक ऋषि थे, जिनका नामोकरण श्वेता श्वेति था परन्तु श्वेत्ता ऋषि एक समय अपने चित्त के मण्डल को जानने के लिए गान गाने लगा मानो वह श्रोत्रों में जो भी शब्द आता रहा, एक गान के रूप में एक ध्वनि के रूप में उसको अपने में धारण करता रहा, परन्तु बारह वर्ष हो गए उस ध्वनि को श्रवण करते हुए, वे ध्वनि मानव के श्रोत्रों में प्रवेश हुई अन्तरिक्ष में उसका समन्वय हो गया। मानो देखो, सूत्र होता है सूत्रों में एक ध्वनि होती है मेरे पुत्रों! देखो, लोक लोकान्तरों की एक माला होती है सौर मण्डलों को एक दूसरे से समन्वय होता है, तो मानो उसमें एक ध्वनि होती है जो उस ध्वनि को मुनिवरों! श्रवण कर लेता है वह चित्त के मण्डल की धाराओं को जानने वाला बनता है, तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने, अनुसन्धान किया, इस वायु सूक्त को ले करके, वायु की आभा को ले करके मानो उसके ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ किया, आज मैं तुम्हें कोई ऐसे विशेष, मानो गम्भीर विषय को लेना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय केवल यह कि हमारे यहाँ एक ध्वनि होती रहती है और वह ध्वनि मानो देखो, श्रोत्रों में आती रहती है। वही ध्वनि रात्रि के काल में, मानो देखो, मध्य रात्रि के काल में ध्वनि उत्पन्न होती है। वह ध्वनि का समन्वय मेरे पुत्रों! देखो, सूर्य की तरंगों से संबंधित रहता है, सूर्य की किरणों से जब समन्वय करता है तो वही ध्वनि द्यौ लोक में प्रवेश करती है। मेरे पुत्रों! वही ध्वनि विद्युत् की धाराओं में रमण करती है और वही ध्वनि जब विद्युत् की धाराओं में गति करने लगती है तो वही ध्वनि मेरे प्यारे! मानवीय शरीर में ब्रह्मरन्ध्र में एक ध्वनि होती है, इसको हमारे अनहद् ध्वनि कहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, यह बडा एक विशेष विचित्र चर्चा करने लगा हूँ। यह योगेश्वर और व्याकरण वाले पण्डितव योगेश्वर योगीजनों की यह चर्चाएँ हैं बेटा! वही ध्वनि जब ब्रह्मरन्ध्र में होती है तो ध्वनि का सम्बन्ध अग्नि की धाराओं से होता है। मुनिवरों! देखो, जब प्राण अग्नि में तन्मय होता है, तो उस समय दीपामालिका बन जाती है, ध्वनियों की दीमालिका बन जाती है।

परन्तु वही दीपमालिका जब मेरे प्यारे! देखो, प्राणायाम करने वाला साधक जब प्राण को गान गाता हुआ मेरे प्यारे! जब गान गाता है तो दीपमालिका, मानो देखो, दीपावली बन जाती है। अन्धकार छाया हुआ है, एक योगी गान गा रहा है और गान गाता हुआ दीमालिका का गान गाता है तो दीप मानो देखो, वह प्रकाशित हो जाते है।
तो मेरे प्यारे! वैदिक साहित्य में बहुत सी चर्चाएँ आती रहती हैं, विद्या की विवेचना होती रहती हैं। आज मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना नहीं, केवल देखो, अन्तःकरण की विवेचना, जो मानव चित्त का मण्डल बना हुआ है उन मण्डलों में शब्द निहित रहते हैं। चित्र निहित रहते हैं जिनको मुनिवरों! देखो, अपने में धारण करता हुआ मानव अपनेपन की धाराओं को अपनाता हुआ, महान् बन जाता है।
तो आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना ने देता हुआ, केवल ध्वनि गानम् ब्रह्म वाचाः मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब बेटा! हमारे यहाँ एक ऋषि हुए हैं जिन ऋषि का नाम तुंगभद ऋषि कहलाता है। उन्हें तुंगभद ऋषि कहते थे। मेरे प्यारे! एक राजा हुए हैं सतोयुग के काल में जिनका नाम महाराजा नल कहलाता था। महाराजा नल जब देखो, उनके चरणों में ओत प्रोत होता था, बाल्यकाल में उन्हीं के द्वारा वह शिक्षा अध्ययन करते थे। तो वह जो तुंगभद मानो देखो, ऋषि थे मानो देखो, वह दीपमालिका गान जानते थे क्या मानो देखो, कैसे दीपक में प्रकाश आ जाता है इस ध्वनि के कारण मानो शब्दों से प्राणायाम के द्वारा मुनिवरों! कैसे मस्तिष्क ललाहट में प्रगट होता हुआ मानो देखो, दीपमालिका बन जाती है। तो मुनिवरों! देखो, महाराजा वह बाल्यकाल का नाम, राजा नल का बाल्यकाल का नाम देखो, श्वेतकेतु ब्रह्मचारी था। जब श्वेतकेतु ब्रह्मचारी उनके यहाँ अध्ययन करते थे बाल्काल में, उसको दीपमालिका का उन्होंने मानो अध्ययन कराया। अध्ययन में इतने पारंगत हो गये, क्या वह दीमालिका जब गान गाते थे, तो दीपकों में प्रकाश आ जाता था। जैसे दीपमालिका एक मानो हमारे यहाँ एक पर्व होता है जिसको दीपमालिका कहते हैं। मानो देखो, दीपको का प्रकाश हो जाता है तो उस समय देखो, ध्वनि के द्वारा प्राण और ललाहट का दोनों का समन्वय करते हुए जब वह गान गाते थे, तो मुनिवरों! देखो, नगर के दीपक मानो प्रकाशित हो

जाते थे।

तो मेरे प्यारे! मुझे वह काल, मानो देखो, कुछ उनका साहित्य स्मरण आता रहता है जब वह बाल्यकाल में पारायण हो गये। पारायण होते हुए सम्भवः देवो ब्रह्मवाचाः ब्रह्मवर्चोसि देवाः क्योंकि ब्रह्म और चरी दोनों का समन्वय होता है क्योंकि वह जो श्वेत्तावृत्ति ब्रह्मचारी थे मानो देखो, वह सैदव ब्रह्मचर्य में रत्त रहते थे। तो नरा नृत्यतम् वृहीव्रताम् मानो देखो, उनके गुरु ने पूज्य ने जब उसे दीक्षित बनाया तो उसका नामकरण भी नल के रूप में परिणित किया था। उसका नामोकरण नल के रूप में जब परिणित हो गया, जब वह भोजनालय तपाने लगते थे तो अग्नि में ऐसा सुन्दर भोजन तपाते थे। यह भी एक विद्या होती है, वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार की विद्याएँ हैं। मेरी प्यारी माता भोजनालय में परिणित हो जाती है, तो गायत्री छन्दों का पठन पाठन करती हुई मानो अपने पुत्र को महान् बना देती है।

ऐसा मुझे स्मरण है बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है महर्षि गौतम ऋषि का मुनिवरों! देखो, और अगस्त मुनि का जीवन स्मरण आता रहता है। अगस्त मुनि की माता का नाम शनैः देवस्या था, मानो उनका नाम शनैः दिव्या वर्णोति कहलाता था। मेरे प्यारे! एक समय बाल्यकाल में जब वह बालक पांच वर्ष का था, पांच वर्ष के पुत्र ने माता से यह कहा हे माता! तुमने मुझे संस्कारों से जन्म दिया है, परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि मुझे तू बारह वर्ष का भोज्य प्रदान कर जिससे मेरा अन्तरात्मा उस अन्न से पवित्र हो जाए। मेरे प्यारे! देखो, माता ने, स्नेह ने वह वाक् स्वीकार कर लिया। स्वीकार करके माता भोजनालय एकान्त हृदय और मन की सन्तुलना को करती हुई, मानो देखो, वह भोजन करा, भोजन को तपाती थी अग्नि में। तपाने के पश्चात् बाल्य को भोजन कराती थी। बारह वर्ष के पश्चात् मेरे प्यारे! महर्षि अगस्त मुनि महाराज आत्मा और परमात्मा की प्रतिभा को जान करके विज्ञान की धाराओं को अन्न में जितने विज्ञान की तरंगें होती हैं उन सबको जान करके वह महान बन गया, मानो वह पवित्र बन गया।

तो विचार क्या? मानो देखो, माता जब भोजन बनाती है, भोज्य तपाती है अग्नि में, तो योगेश्वर बना देती है। मानो गायत्री का जपन हो रहा है, ध्वनियां वेदों की गान गा रही

है, माता भोज्य बना रही है परन्तु जब वह तरंगों वाले भोजन को बाल्य पान करता है, तो बेटा! बालक महान् बन जाता है, पवित्र बन जाता है। माता वही सौभाग्यशाली होती है मेरे पुत्रों! देखो, जिस माता के गर्भ से बालक मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता या ब्रह्मविचारक बन जाए जिससे वे परमपिता परमात्मा के क्षेत्र में महानता को प्राप्त हो जाए।

तो मेरे प्यारे! देखो, यही मानो देखो, महाराजा नल के जीवन का मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भी मुझे इसकी वार्त्ता प्रगट कराते रहते थे। ये वार्त्ताएँ मेरे हृदय में आती रहती थीं। मानो देखो, महाराजा नल जब वह गान गाते थे तो रात्रिकाल में दीपालिका देखो, नगरों की बन जाती थी। वह इतने पारायण बन गएं थे। मेरे पुत्रों! देखो, जब उनके राष्ट्र के बंटवारे के ऊपर कुछ भिन्नता आई, तो मुनिवरों! देखो, महाराजा नल का संस्कार भी हो गया था। महाराजा नल का जब संस्कार महारानी दमयन्ती के द्वारा हुआ तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मा वाचप्रही लोकाम् वसुरध्रम् ब्रहे मुनिवरों! देखो, महाराज पुष्कर ने जब उनके राष्ट्र को अपना लिया और 12 वर्ष का उन्हें वन व्रत की प्राप्ति हो गई। तो भयंकर वन में पति पत्नी दोनों ने गमन किया और भयंकर वनों में मेरे पुत्रों! देखो, महाराजा नल ने उस ब्रह्म अस्वतो में मानो देखो, पत्नी को भी त्याग दिया। त्याग देने के पश्चात् मुनिवरों! देखो, वह तो तुंगभद राजा के यहाँ मुनिवरों! देखो, राष्ट्र में चले गएं और महारानी दमयन्ती मानो गमन करती हुई, एकान्त रह गई तो वनों में भ्रमण करती हुई अपने पिता के द्वार चली गई। मेरे प्यारे! देखो, जब महारानी दमयन्ती को यह प्रतीत हो गया कि मेरा स्वामी कहां है तो यह प्रतीत हुआ कि स्वामी मानो देखो, तुंगध्वज राजा के यहाँ हैं, तो वह कैसे आएँ। मानो ब्रह्म वाचप्रही लोकाम् उन्होंने पत्रिका स्वतः इस प्रकार कि हमारे यहाँ, राजा के नामोकरण से, एक स्वयंवर होने वाला है। तो स्वयंवर के नामों से वह पत्रिका महाराजा तुंगध्वज राजा के यहाँ प्रकाशित की गई तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा भई नलव्रहे! उनका नाम वहाँ राजा नल का नाम शैवकृत्तिका वर्णित करते रहते थे। राजा ने कहा हे सेवक! मानो देखो, यह पत्रिका आई है चलो कुन्दनो धानम जती ब्रह्माः यह एक राजा हैं जो

तुंगधानिक नामक राजा हैं, उनकी कन्या का नाम मानो देखो, स्वत्तकब्रहे, राजा नल कहीं मृत्यु को प्राप्त हो गएं हैं, परन्तु उनकी कन्या का पुनः संस्कार होना, स्वयंवर होना नियुक्त किया है। नियुक्ति की है राजा ने तो मैं वहाँ जाने वाला हूँ कैसे जा सकता हूँ। केवल दिवस दो हैं, दो ही दिवस हैं और देखो, मार्ग बहुत दूरी का है, यह कैसे जा सकते हैं? तो उन्होंने कहा मैंने महाराजा नल ने कहा कि मैंने गति बढ़ाई है मैं उसका सारथी रहा हूँ, यदि आपकी इच्छा हो तो मानो मैं तुम्हारे वाहन की कृतियाँ कर सकता हूँ। तो मुनिवरों! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। मेरे प्यारे! वाहन को ले करके जब मुनिवरों! देखो, महाराजा नल वहाँ से गमन करते हैं, तो गमन करते समय जब वह गति कर रहे थे, तो महाराजा तुंगध्वज राजा का मुनिवरों! देखो, उनका एक वस्त्र भूमि पर गिर गया। तो उन्होंने हे सारथी! मेरा तो वस्त्र गिर गया है उन्होंने कहा कि वह तो मानो देखो, सौ योजन दूरी जा लिया है तुम कहाँ हो सम्भोवृत्ती! मेरे प्यारे! आश्चर्य में हो गएं राजा क्या इतना गति से वाहन चल रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, वह सायंकाल को ही मुनिवरों! देखो, राजा सैनकृत्ती के यहाँ वह विद्यमान हो गये। एक मानो देखो, वाटिका थी, उस वाटिका में राजा का देखो, स्थान निवास बनाया गया। राजा को स्थिर किया गया, मानो नाना प्रकार के पदार्थों से उनका स्वागत हुआ। तो मुनिवरों! देखो, वह महारानी दमयन्ती ने विचारा कि मेरे स्वामी से तो मुझे दृष्टिपात आते हैं। परन्तु देखो, जो एक कन्या और एक पुत्र था वह समीप लाए गये, तो मोह की उन्हें प्रतीति हुई परन्तु फिर भी उन्हें विश्वास न हुआ। उन्होंने कहा राजन्! तुम्हारा जो सारथी है यह भोज्य बहुत सुन्दर प्रियता से बनाना जानता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने भोज्य का निर्माण किया, भोज का आकृत किया, तो मुनिवरों! वह पान किया, तो वास्तव में उसी प्रकार का देखो, रसना को स्वादन आने लगा जैसे महाराजा नल मानो देखो, वह भोजनालय में निर्माण करते थे। तो ऐसे ही दृष्टिपात आने लगा तो महारानी प्रसन्न हो गई। परन्तु देखो, यह विचारा कि यह भी एक कृतियों में हैं। मैं मानो देखो, दीपक मालिका जानती हूँ। वे भी दीपक गान जानते हैं, उस दीपक गान के सम्बन्ध में उन्होंने कहा, प्रार्थना की, हे देव! आप वास्तव में हैं तो वही

परन्तु मुझे अभी शंका है। मैं यह चाहती हूँ कि आप दीपामालिका गान रूपों से गाइये। जिस दीपक गान के राग के गाने से दीमालिका बन जाती है नगरों में। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा हे देवी! मैं इस गान को गाने योग्य नहीं हूँ क्योंकि मेरा हृदय नहीं कह रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वह दमयन्ती अपने कक्ष में चली गई सायंकाल का समय था, परन्तु देखो, अपने आसनों पर विद्यमान हो गये। एक वाक् और कहा था उन्होंने अपनी पत्नी से देवी! यह तुमने क्या रचना रची है। तो महारानी ने कहा प्रभु! रचना क्या है यहाँ राजा कोई नहीं है, तो आपको नियुक्त करने के लिए मैंने इतना परिश्रम किया है मानो कोई राजा नहीं है कोई स्वयंवर रचना नहीं है। तो मुनिवरों! देखो, वह जब अपने कक्ष में चले गए, तो रात्रि का मध्य काल जब समाप्त हुआ, तो मुनिवरों! उस समय महाराजा नल प्रसन्न हुए और प्रसन्न होकर उन्होंने प्राण और मन दोनों का एकाग्र किया। एक सूत्र में सूत्रित करके उन्होंने गान गाया, जब गान गाने लगे तो मुनिवरों! कहते हैं ऐसा मुझे स्मरण कराया जब गान गाया, तो मानो देखो, सर्वत्र नगर की एक दीपमालिका बन गयी। जब दीपमालिका बन गई तो राजा, मानो दमयन्ती के पिता जो राजा थे वह अपने आसन को त्याग करके अपनी महारानी से बोले देवी! मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि कहीं नल हमारे नगर में विद्यमान हैं। मानो नल ही इस प्रकार का गान जानता है जो दीपमालिका नगरों की बन जाती है। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने यह कहा कि दीपमालिका बनती रहती है, दीपमालिका का प्रसंग आया तो मेरे प्यारे! देखो, दीपावली बन गई नगर की देखो, उनके, उनके राजगृह की मानो भी दीपावली बन गई नगर की देखो, उनके, उनके राजगृह की भी दीपावली की भांति एक दीप आकृत्तियाँ बन गई। महारानी दमयन्ती को यह विश्वास हो गया कि यही मेरा स्वामी प्रायः मानो देखो, यह मेरा पूज्य देव है। मेरे प्यारे! प्रातःकालीन मानो देखो, वह राजा नल के समीप जा के चरणों का स्पर्श किया। हे देव! वास्तव में आपने दीपमालिका बना दिया हमारे नगर को। मेरे प्यारे! देखो, राजा को तुंगध्वज को यह प्रतीत हुआ कि तो यह नल था तुम्हारे यहाँ सेवकाई का कार्य करता रहा, वाहन इत्यादियों का क्रियात्मक कर्म कराता रहा। तो मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है ऐसा मुझे नृत्य कराया है कि

राजा ने सम्भो देवं ब्रह्मा कृति लोका अस्वता मेरे प्यारे! देखो, महारानी दमयन्ती ने उसे जान करके उनके चरणों की और महाराजा तुंगध्वज के मानो देखो, उनके वाहन में बिठा उनके गृह में पुनः लौटा आये। राजा के चरणों को स्पर्श किया कि महाराज! मेरे यहाँ कुछ समय तक वास किया मैं ता बड़ा कृति में अभागा हूँ। मैं आपको जान नहीं पाया हूँ, मेरा यह बड़ा दुर्भाग्य रहा है। राजा नल ने कहा कोई कार्य नहीं, मेरा यह आपत्तिकाल है। मेरा आपत्तिकाल भी समाप्त हो गया। मेरा बारह वर्ष का काल समाप्त हो गया और देखो, मेरे जीवन की प्रतिभा एक महान् बन गई है।

तो मेरे प्यारे! देखो, मैं उच्चारण कर रहा था यह दीपमालिका का वर्णन आज के हमारे वैदिक साहित्य में, मानो देखो, वायु को वाहन बना करके एक दीपमालिका का वर्णन आता रहता है। गान के रूप में गान गाने वाले की कोई सीमा नहीं होती। एक गान गा रहा है माता प्रसन्न हो रही है, बाल्य गान गा रहा है माता प्रसन्न हो रही है। एक गान ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म का गान गा रहा है समाज प्रसन्न हो रहा है। मेरे प्यारे! एक गान गाता हुआ अन्तर्हृदय में उसका हृदय स्वतः प्रसन्न हो रहा है। तो गान गाने वाले कुछ योगेश्वर इस प्रकार के भी हुए हैं जिन्होंने शब्द विज्ञान के ऊपर मुनिवरों! देखो, बहुत अनुसन्धान किया है। जिन्होंने मेरे पुत्रों! देखो, गान के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया है। यह जो गायत्री है मानो जो माँ के रूप में गायी जाती है। क्योंकि गान कौन गाता है गायत्री क्या है? जो मुनिवरों! देखो, गाई जाती है, प्रत्येक वेद के मन्त्र को गायत्री कहते हैं। कौन गाता है गायत्री क्या है जो मुनिवरों! देखो, गायी जाती हो प्रत्येक वेद के मन्त्र को गायत्री कहते है हमारे यहाँ गायत्री नामोकरण एकोकी का ही नहीं कहलाता। मानो देखो, यह गायत्री इसीलिए विशेष मानी जाती है कि इसमें चौबीस अक्षर माने गए हैं, इसीलिए मानव का शरीर भी चौबीस खम्बों वाला है, यह ब्रह्माण्ड भी चौबीस खम्बों वाला है। मेरे प्यारे! देखो, इसमें चौबीस खम्बे हैं दस प्राण हैं, दस इन्द्रियाँ हैं और मुनिवरों! मन, बुद्धि, चित्त तो अहंकार कहलाता है। यह चौबीस खम्बों वाला मानो ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है। यही मानव के शरीर में है, यह चौबीस खम्बों वाला ब्रह्मा मानो देखो, मानवीय शरीर कहलाता है। जिसके ऊपर यह आधारित रहता है

प्राणेश्वर अपनी आभा में गति करता रहता है। तो परिणाम क्या? मानो देखो, जब वह गान गाता है, गान गाता हुआ बेटा! मैंने एक वार्त्ता मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन की थी क्या गान गाने वाला गाता ही रहता है स्वरों में गाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब माता मल्हार गान गाती है, तो मेघो से वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, जब मानव पाण्डितव गान गाता है, तो उसकी पाण्डितव की धारा अन्तरिक्ष में ओतप्रोत हो जाती है। मेरे पुत्रों! देखो, यज्ञमान जब यज्ञशाला में स्वाहा कह करके हृदय से गान गाता है तो मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला की तरंगों के साथ में उनके जो स्वाहा शब्द हैं वह अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो जाते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है इसके ऊपर नाना वैज्ञानिक हुए हैं जिन वैज्ञानिकों ने बहुत अनुसन्धान किया है यह विज्ञान महाराज महर्षि भारद्वाज मुनि की यज्ञशाला में भी विद्यमान था। यही विज्ञान मेरे पुत्रों! देखो, उद्दालक गोत्र के शिकामकेतु ऋषि के आश्रम में भी यह विज्ञान पनपता रहा है। मैं इस विज्ञान के ऊपर कोई विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ। परन्तु विचार यह है कि ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण भी हुआ है जैसे शब्द है, शब्द के साथ में उसका चित्र मेरे पुत्रों! देखो, यन्त्रावलियों में दृष्टिपात आता रहा है। यज्ञोमयी ब्रह्मा वाचाः इस शब्द को लेकर के रचना की गई है। तो विचार क्या? मेरे पुत्रों! वेद कहता है कि यह शब्द विज्ञान है, सात्विकता में रमण करने वाला जो सत्यता में रहने वाला है उसके ऊपर मानव को सदैव चिन्तन और मनन करना चाहिए। हृदय से मानो उनके ऊपर विचारशील बन करके अपनी आभामें आभावित रहना चाहिए जिससे मानव का जीवन पवित्रता में रमण करता हुआ, हम वैदिक विज्ञान को वैदिक गान को अपने साकार रूप में ला करके मुनिवरों! देखो, दर्शाते रहें, विचार विनिमय करते रहें।

तो आओ मेरे प्यारे! विचार क्या है? एक पाण्डितव गान गा रहा है, माता अपने पुत्र से कहती है हे बालक! तू सदैव सत्यवादी बन। मानो देखो, सत्यवादी बनने के लिए माता ही प्रेरणा क्यों देती है, आचार्य क्यों प्रेरणा दे रहा है सत्य उच्चारण करने की। इसीलिए दे रहा है क्योंकि माता का हृदय है, वह बाल्य माता का हृदय है और आचार्य का देखो,

कुल कहलाता है। वह विद्यालय में कुल है माता का हृदय है पिता की श्रुति है। मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्रीय हे ब्रह्मवर्चोसि! तू ब्रह्मवर्चोसि बन, ब्रह्मवर्चोसि का अर्थ है कि वह सत्यवादी बन मानो सार्थकता में रमण कर रहा है जो प्राण और मन दोनों को एक सूत्र में लाना जानता है। जो ऋचा की प्रतिभा को मानो देखो, लोकों की श्रुतियों में कटिबद्ध कर देता है, वही तो सत्य में रमण करता है। मेरे प्यारे! जब मैं अन्तरिक्ष को मानो देखो, गान रूप में प्रवेश करता हूँ जैसे लोक लोकान्तर हैं। मानो एक दूसरा एक दूसरे के प्रति गान गा रहा है गान का अभिप्रायः है उसे उल्लास दे रहा है। जैसे मानो देखो, माता की परिक्रमा करने वाला पुत्र है, कहीं माता पुत्र की परिक्रमा कर रही है और क्योंकि उसी से माता का शब्द का निर्माण हुआ है, वह गान गाना है। परन्तु देखो, वही वृत्तियों में वह पुत्र माता की, माता पुत्र की परिक्रमा कर रही है। परिक्रमा का अर्थ है गान गाना। मानो देखो, कहीं मुनिवरों! देखो, पुत्र माता का गान गा रहा है, उसकी प्रसन्नता में मानव मग्न हो रहा है, गान गाता है हृदय से गा रहा है, ममता कर रहा हैं मेरे पुत्रों! इसी प्रकार कहीं पिता की परिक्रमा कर रहा है, पिता पुत्र की परिक्रमा कर रहा है। वह गान रूपों में सत्यता से उपदेश दे रहा है। विचार विनिमय क्या? मेरे पुत्रों! देखो, इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी एक दूसरे की परिक्रमा कर रहा है। एक वेद का पठन पाठन करने वाला भयंकर वनों में गान गा रहा है, सिंहराज उस ध्वनि को श्रवण कर रहा है। सर्पराज आ करके उसके चरणों में ओतप्रोत हो रहा है। वह गान की महिमा है, पुत्रों! जो गाता है हृदय से जब गाता है तो मेरे पुत्रों! देखो, गान को पान करता हुआ परमात्मा के गान से उसका समन्वय हो जाता है। विचार क्या मुनिवरों! देखो, यह लोक में एक प्राणी दूसरे की परिक्रमा कर रहा है। मानो देखो, यहाँ बलो वृतां ब्रह्मे वाचा यहाँ बैल की बलि का वर्णन आता है गान गाने के रूप में मेघ गान गाता है।

मुझे स्मरण आता रहता है शतपथ ब्राह्मण के ऋषि ने एक बहुत ही ऊँची वार्त्ता प्रगट की है। देखो, वेद का, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि कहता है क्या एक समय याग हो रहा था वाजपेयी याग। जब याग हो रहा था, तो याग को मानो देखो, वह ब्रणी अस्तो काला हिरण याग को ले गया और याग को ले जा करके उसने वत्रासुर को अर्पित कर दिया।

वत्रासुर ने मुनिवरों! देखो, उसकी वृष्टि कर दी और वृष्टि करके वहाँ बैल की, गो के बछड़े की वहाँ बलि का वर्णन आया। क्या बलि का वर्णन बलि का अभिप्रायः यह है कि पुरुषार्थ करना बलि से पुरुषार्थ करके इस पृथ्वी पर यह जो वृष्टि वृत्रासुर ने की इस पृथ्वी के गर्भ से मुनिवरों! नाना प्रकार का खाद्य पदार्थों को उत्पन्न करने का नाम भी बेटा! गान रूप में परणित किया गया है। वैदिक साहित्य वालों ने बहुत से ऊँची युक्तियाँ देते हुए कहा है कि गान कौन गाता है? इन्द्र गान गा रहा है, तरंगों के द्वारा मानो देखो, याग को मुनिवरों! देखो, धुन्ध ले गया, धुन्ध ने उसी को वत्रासुर को प्रदान कर दिया। वत्रासुर नाम मेघों का कहा गया है, वह मेघों ने उसकी धीमी वृष्टि कर दी है। मेरे पुत्रों! देखो, उससे अन्न की उत्पत्ति हो गयी, मानव अन्न की परिक्रमा करने लगा या अन्न मानव की परिक्रमा, उससे गान गाने लगा अन्नादम् भूतस्तो लोकाम् देवाः हे अन्नादम् भूतऽस्तोः मेरे पुत्रों! इस प्रकार का गान जब स्वर ध्वनियों में परणित होता है, मुझे ऐसा स्मरण है जहाँ मानव यह गान गाता है, वहाँ मल्हार एक गान होता है, जिससे मेघ उत्पन्न हो करके वृष्टि होनी प्रारम्भ हो जाती है। ये चर्चाऐं तो मैं कहाँ तक करता रहूँगा यह तो वैदिक साहित्य की चर्चाएँ हैं। मैं बेटा! काल आता रहेगा मैं वर्णन करता रहूँगा।

परन्तु आज का विचार विनिमय क्या कि हे गायत्री मां! तू गाई जाती है। प्रत्येक वेदमन्त्र को गायत्री कहते हैं, गान रूपों में तू गाई जाती है। मेरे पुत्रों! जब गाई जाती है तो गान गाने वाला गान ध्वनि से गा रहा है, मानो देखो, इसी प्रकार एक दूसरा प्राणी, प्राणी की परिक्रमा कर रहा है। प्राणी ही नहीं एक लोक दूसरे लोक की परिक्रमा कर रहा है जैसे यह पृथ्वी है यह सूर्य की परिक्रमा कर रही है। सूर्य बृहस्पति की परिक्रमा कर रहा है, बृहस्पति आरुणि मण्डल की परिक्रमा कर रहा है। आरुणि मण्डल ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, ध्रुव मण्डल जेठाय नक्षत्र की परिक्रमा कर रहा है, जेठाय नक्षत्र स्वाति नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहा है। जेठाय नक्षत्र आस्वेतु मण्डल की परिक्रमा कर रहे हैं। आस्वेतु मुडल अचंग मण्डलों की परिक्रमा कर रहे हैं, अचंग मण्डल क्रीति मण्डलों की परिक्रमा कर रहे हैं, प्रीति मण्डल कौणकेतू मण्डल की परिक्रमा कर रहे

हैं, कोणकेतू मण्डल गन्धर्व लोकों की परिक्रमा कर रहे हैं, गन्धर्व लोक इन्द्र की परिक्रमा कर रहे हैं। बेटा! देखो, यह मानो इन्द्र से ले करके, पृथ्वी से ले करके बेटा! एक सौर मण्डल बन गया है। एक सौर मण्डल मानो यह विशाल इसमें अरबों खरबों लोक लोकान्तर गतियां कर रहे हैं। मुनिवरों! देखो, परिक्रमा गान के रूप में सूत्र के रूप में इनका सूत्र बना हुआ है एक चेतना है जो मेरे प्यारे! इनको एक दूसरे में पिरो रहा है। वह पिरोने वाली चेतना ही बेटा! एक महान् है, वही सूत्र कहलाता है ये नाना सौर मण्डल आकाश गंगा में गति कर रहे हैं। आकाश गंगा में मानो देखो, गणना करने वालों ने यहाँ तक गणना ही है कि आकाशगंगा में लगभग मानो लगभग एक खरब के लगभग सौर मण्डल कहलाते हैं और ऐसी ऐसी आकाशगंगाएँ जिन आकाशगंगाओं में एक प्रकार के मानो खरबों में सौर मण्डल हैं ऐसी ऐसी आकाशगंगाएँ ऋषि मुनियों की विज्ञानशाला में लगभग नौ सौ बहत्तर आकाश गंगाएँ दृष्टिपात आती रहती हैं।

तो मेरे प्यारे! इस प्रकार का विज्ञान हमारे राष्ट्रीयता में, हमारे वैदिक साहित्य में आता रहा है। इन सौर मण्डलों में बेटा! मैंने तुम्हें वर्णन कराया है कई काल में वर्णन कराया है। आज भी तुम्हें परिचय दिए देता हूँ, बेटा! देखो, तीस लाख पृथ्वियाँ हैं। जो सूर्य की परिक्रमा कर रही हैं एक सहस्र सूर्य हैं जो आरुणि मण्डल की परिक्रमा कर रहे हैं। एक सहस्र आरुणि हैं जो ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहे हैं एक सहस्र ध्रुव हैं जो मुनिवरों! देखो, जेठाय नक्षत्र की परिक्रमा कर रहे हैं एक सहस्र जेठाय नक्षत्र हैं, जो मुनिवरों! देखो, वृत्तिमण्डलों की मूल नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहे हैं। ऐसे ऐसे मानो अचंग मण्डल एक सहस्र अचंग मण्डलों की परिक्रमा कृतिमण्डलों की परिक्रमा मेरे प्यारे! देखो, गन्धर्व लोक एक सहस्र लोक मानो देखो, इस इन्द्र की परिक्रमा करते हुए यहाँ तक बेटा! एक सौर मण्डल बनता है। यह सौर मण्डल बना है और यह सौर मण्डल मेरे पुत्रों! देखो, भ्रमण करने वाला आकाश गंगाओं में है, एक आकाशगंगा में इसमें एक अरब निन्यानवे करोड़ के लगभग सौर मण्डल हैं ऐसी ऐसी आकाश गंगाएँ याज्ञवल्क्य ऋषि, महर्षि भारद्वाज मुनि के विद्यालय में उनके यहाँ विज्ञान शालाओं नौ सौ बहत्तर आकाश गंगाएँ दृष्टिपात आती रही हैं। तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! यह

मानो देखो, ब्रह्माण्ड है एक दूसरे में मानो देखो, नृत्य कर रहा है, गान गा रहा है, एक सूत्र में पिरोया हुआ है। जैसे बेटा! मानव के मस्तिष्क में एक अनहद ध्वनि होती है, उस अनहद ध्वनि को जान करके मानो दीपमालिका का गान गाते हैं। कहीं बेटा! मल्हार गान गाते हैं, कहीं स्वाति गान गाते हैं, कहीं जटा गान गाते हैं, कहीं मानो देखो, उदात्त, अनुदात्त मानो देखो, स्वरों की ध्वनि बन जाती है।

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ। मैं मानो देखो, बहुत गम्भीर समुद्रों में चला गया हूँ। इन समुद्रों में जाने के लिए नहीं आया हूँ विचार विनिमय क्या कि मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम उसका गान गाते रहें। हे माँ गायत्री! तू गान के रूप में गाई जाती है और तेरे गर्भस्थल में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का गान हो रहा है। यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः क्या कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम दीपमालिका का गान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाऐं। यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। श्री रघुवीरसिंह त्यागी, केथवाड़ी समय : दोपहर 3 बजे।

३ 11 11 1983 पुष्प 50 लोमश ऋषि और कागभुसुण्ड जी के कार्य कलाप की चर्चा

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ इन वैदिक साहित्य में, वैदिक मन्त्रों में भिन्न भिन्न प्रकार का वर्णन होता रहता है। क्योंकि वास्तव में यह वैदिक जो ज्ञान है यह परमपिताप परमात्मा की प्रतिभा कहलाती है जिससे परमपिता परमात्मा में निष्ठा होती है और वे परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान है इसमें प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, अनुसन्धान करता रहा है। बहुत पुरातनकाल हुआ ऋषि मुनि एक एक वेदमन्त्र के ऊपर उसके गर्भ में परणित हो करके एक ऊँची उड़ान उड़ते रहे हैं।

परन्तु ऋषि मुनियों का एक विशेषतम् ब्रह्मवाचाः वर्णोति हिरण्यम् एक मन्तव्य रहा है कि परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान औरप विज्ञान है वह इतना नितान्त है और इतना विचित्र है कि हम उस ज्ञान को चिन्तन और मनन में लाने वाले मौन हो जाते हैं। प्रत्येक अवस्था में मानव मौन हो जाता है। तो सह जो मौन की प्रवृत्ति मानव के हृदय में प्रविष्ठ हो रही है। एक बड़ा विचित्र, गम्भीर ऋषि मुनियों के समीप अध्ययन के प्रति क्रियाएँ उनके समीप आती रहती हैं।

आज मैं कोई विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ, केवल कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ। क्योंकि ऋषि मंनियों ने यही कहा कि हम परमपिता परमात्मा की सृष्टि में सब शिशु के रूप में दृष्टिपात आते हैं। कितना ही ज्ञान और विज्ञान में रमण कर जाएँ परन्तु जब उसके अन्तिम छोर पर हम परणित होते हैं तो शिशु के रूप में। बहुत पुरातनकाल हुआ मुझे व काल स्मरण है जब महर्षि लोमश और महर्षि कागभुसण्ड जी अपने अपने स्थलियों पर विद्यमान हो रके बहुत गम्भीर अध्ययन करते रहते थे। एक समय महर्षि लोमश जी ने कागभुसण्ड जी से यह प्रश्न किया कि महाराज! यह बाह्य यज्ञा और आन्तरिक यज्ञ क्या है? तो मुनिवरों! देखो,! कागभुसण्ड जी ने महर्षि जी से कहा कि बाह्य जगत् और आंतरिक जो यज्ञ है यह बाह्य जो प्रवृत्ति वाला यज्ञ हो रहा है उस यज्ञ का समन्वय परमपिता परमात्मा के सृष्टि यज्ञ से माना गया है। परन्तु यह जो आन्तरिक यज्ञ हो रहा है इसमें जो सप्त होता बने हुए हैं, वह नाना प्रकार की वस्तुओं को ला लाकर के हृदयरूपी यज्ञशाला में वह यज्ञ कर्म कर रहे हैं, अथवा वह जो ज्ञानरूपी अग्नि प्रदीप्त हो रही है उस ज्ञान रूपी अग्नि में बाह्य जगत् से सकल्य ला रके आन्तरिक जगत् में जो यज्ञ हो रहा है वह एक बड़ा विचित्र यज्ञ हमें दृष्टिपात आता है। क्योंकि जो भी यज्ञ आन्तरिक जगत् में हो रहा है वह प्रत्येक इन्द्रियाँ जो श्रोता बनी हुई हैं वह साकल्य को ला करके एकत्रित करके हृदय में प्रवेश कर देती हैं। उससे मुनिवरों! देखो, संस्कारों का जन्म होता है। संस्कारों की उपलिब्धयों होती हैं।

उन्हीं संस्कारों का समन्वय हमारा चित्त मण्डल में प्रवेश करता है। चित्त मण्डल का

सम्बन्ध अहंकार से होता है। अहंकार का सम्बन्ध ही चतुष अन्तःकरण से बन करके, वह प्रकृति का विशाल मण्डल हमें दृष्टिपात आता है। तो बेटा! यह यौगिकवाद वाक् कहलाते हैं आज मैं तुम्हें एक विशाल क्षेत्र में ले गया कि महर्षि कागभुसण्ड जी ने महर्षि लोमश मुनि को यह वाक्य प्रगट कराया। परन्तु देखो, उन्होंने कहा कि इसका कोई छोर? तो कागभुसण्ड जी ने कहा कि मानव चिन्तन और मनन करता ही रहता है। जितना भी संसार का आसत है जितना भी संसार का रूप हमें दृष्टि आता है परन्तु जब इसको जान लेते हैं तो मौन हो जाते हैं। जब मौन हो जाते हैं तो मौन होने के पश्चात् वही शिशु बना रहता है। परन्तु देखो, इसी प्रकार परमपिता परमात्मा के अनुपम जगत् में प्रत्येक मानव शिशु के रूप में रहता है। चाहे कोई कितनी भी विशाल उड़ान उड़ने वाला हो।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस समय कागभुषुण्ड जी प्राणायाम और साधना में परणित होते थे। महर्षि लोमश और कागभुसण्ड जी दोनों अपनी आभा में रमण करते रहते थे। महर्षि कागभुसण्ड जी का जब बाल्यकाल था तो माता के चरणों में जब ओत प्रोत होता, तो माता बाल्यकाल में उसे ज्ञान देती रहती थी। एक समय कागभुसण्ड जी से कहा हे बालक! उनका बाल्यकाल का नाम सम्भुख ऋषि था। सम्भुख नामक बालक था, ब्रह्मचारी था। सम्भुख ऋषि जब माता की लोरियों का पान करता रहता था, तो माता का नाम राकेश्वरी था। जब राकेश्वरी अपने बालक को लोरियों का पान कराती रहती तो यह कहती रहती सम्भवा देवो ब्रह्मवाचा दिव्यंगतम् प्रमाणं रुद्रो वाचाः राकेश्वरी ने कहा कि हे बालक! तुमने मेरे गर्भ से जन्म लिया है, तू महान् है पवित्र है आत्मा चैतन्य होता है, तू आत्मा है, तू अज्ञान में रत्त रहने वाला नहीं है। तू यौगिक है, तू योग में परणित होने वाला बन। यह माता के उपदेशें को पान करता हुआ बालक अपने में रत्त था। बालक अपने में माता के शब्दें को निहारता रहता था, लोरियों का पान करता रहता था। जब वह माता के गर्भ से अर्थात् जब वह लोरियों से प्रथक् हुआ तो वह पिता के द्वार पर, पिताप भी उसे यह उपदेश देते रहते थे, हे बालक! तेरा जीवन महान् बनना चाहिए। क्योंकि हमारा गृह सदैव ब्रह्मवेत्ताओं का रहा है।

ब्रह्मवेत्ताओं का यहाँ, ब्रह्म जिज्ञासु हमारे गोत्र में रहते चले आए हैं और तुम भी ब्रह्मवेत्ता ही बनो। परन्तु देखो, ब्रह्म की जिज्ञासा में जो प्राण सूत्र को जानने वालपा बनता है, वही ब्रह्म की धाराओं में रमण करने वाला होता है। तो मुनिवरों! देखो,! कागभुसण्ड जी के उस बालक के नामकरणो ब्रह्मवाचाः वह जो पिता थे वह स्वेतकेतू ऋषि महाराज थे। स्वेतकेतू ऋषि महाराज पारागोत्र में होते थे। क्योंकि पारागोत्र का जो निकास हुआ था वह किसी काल में सम्भो वाचम् ब्रही कुटकुट गोत्र से हुआ था। वायु गोत्र का जो निकास हुआ था वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ था, ब्रह्मा बके पुत्र अथर्वा से वेदों की प्रतिभा, व्याकरण की धाराओं का जन्म प्राप्त होता रहा है। कागभ्ुसण्ड जी को जब यह वाक्य पिता ने प्रगट किया, तो वह विद्यालय में प्रवेश हो गए। कागभुसण्ड जी के आचार्य जी का नामोकरण महर्षि समीतकेतु महाराज था। समीतकेतु ऋषि महाराज वर्तेतु ऋषि के पुत्र कहलाते थे। उनके यहाँ उनका वह संस्कार अब्रहे विद्या का संस्कारों का आचार्य के कुल में हुआ। आचार्य उसे शिक्षा देते रहे। परन्तु जैसे कागा प्रवृत्ति वाला पक्षी होता है, वह कागा प्रवृत्ति उसकी चंचल होती है। इसी प्रकार वह बाल्य विद्यालय में कागा प्रवृत्ति वाला ब्रह्मचारी था, चंचल था। जब वह अध्ययन करने लगा तो उसका जो क्रिया कलाप था वह प्राण सूत्र की चर्चा करता रहता था। प्राण सूत्र में आपने को पिरोता रहता था। प्राण सूत्र की विवेचना करता हुआ प्राण में रत्त रहता थां तो आचार्य ने उनका नामोकरण कागभुसण्ड जी, जैसे कागा प्रवृत्ति वाला एक पक्षी होता है वह काग वृहे वृत्ति देवाः वह अपने में चंचल रहता है। अपने तक उसका जीवन सीमित रहता है। परन्तु वह दूसरों के लिए शिक्षाप्रद होता है कि मानव को अपने कार्य में रत्त रहना चाहिए। अपने कार्य में अपनी प्रवृत्तियों में चिन्तन रहना चाहिए। अपने में गम्भीर रहना चाहिए। कागभुसण्ड जो नाम कागा चंचल है ओर भुसण्ड नामा बृहे व्रताम् जो वेद के पठन पाठन करने में उसकी प्रवृत्तियों में रमण करने वाला हो उसको भुसण्ड जी कहते हैं। तो चंचल कागा जैसा हो और वेद का अध्ययन करने वाला गम्भीर रहस्यों का उद्धृत करने वाला उसका नामोकरण वाला कागाभुसभ्फउ कहा गया है। वह

अध्ययनशील रहते हुए वह महान् प्राण की चर्चा करते रहते थे।

अपने को प्राण सूत्र में पिरो हुए एक समय अपने पूज्यपाद गुरुदेव से उन्होंने यह कहा हे प्रभु! मैं प्राण सूत्र को जानना चाहता हूँ, यह प्राण सूत्र क्या है? तो आचार्य जी ने कहा कि प्राण सूत्र प्राणों को कहा गया है, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक प्राण सूत्र में पिरोया हुआ है। प्राण सूत्र में अपने को जो मानव पिरो देता है, वह इस संसार सागर से पार हो जाता है। प्राण सूत्र क्या है? हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की प्राणों की प्रतिक्रियाएँ मानी जाती हैं प्राण के आधारपर मानव का जीवन न्यौछावर रहता है। प्राण ही है जो प्रत्येक लोक लोकान्तरों की एक सूत्र में पिरोने वाला, एक तारा मण्डलों की माला बनी हुई है और एक सूत्र में पिरोई हुई है। वही तो प्राण सूत्र कहलाता है। जैसे मानव का शरीर है मानव के शरीर में नाना प्रकार के संस्कार विद्यमान होते हैं। नाना प्रकार की आभाएँ उसमें दृष्टिपात आती हैं। जैसे चन्द्रमा की यात्रा में रत्त होने जा रहा है। चन्द्रमा का यान और विज्ञान उसके मानवीय मस्तिष्कों में नृत्य कर रहा है। तभी तो उसको चन्द्रमा का ज्ञान होता है। वह एक सूत्र है जो प्रत्येक परमाणु को अपने सूत्र में पिरो रहाहै। ब्रह्माण्ड की कल्पना करने वाले आचार्यों ने यह कहा है कि एक ही सूत्र है जिसमें यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ रहता है। तो महर्षि कागभुसण्डढ जी के विद्यालय में इस प्रकार के प्रश्न होते रहते थे। ब्रह्मचारीजन एक स्थली पर विद्यमान होते, तो कई तारा मण्डलों की गणना हो रही है, कहीं सूर्यों की गणना हो रही है, कहीं आकाश गांगा की गणना हो रही है, कहीं नाना निहारिका को निहार रहे हैं आने अन्तःकरण में। इसी आभा में प्राण सूत्र की चर्चा होती रहती थी, कि यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड जो गति कर रहा है अपने आसन पर, प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक लोक लोकान्तर जो क्रियाशील हो रहा है, यह उसी प्राण सूत्र की महिमा है, प्राण सूत्र की एक आभा कहलाती है। पूर्व से दक्षिणायन को गति कर रहा है। वह सर्वत्र एक प्राण की आभा में गति हो रही है। देखो, कागभुसण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज का दोनों के सम्वाद की मैंने अभी अभी तुम्हें चर्चाएँ की थीं। महर्षि लोमश मुनि महाराज और कागभुसण्ड जी दोनां उत्तर प्रश्न करते रहते थे। वह यह कहा करते थे कि संसार एक दूसरे में रमण कर रहा

है, एक दूसरे में पिराया हुआ ही दृष्टिपात आता है। जब दोनों की यह वार्त्ता प्रारम्भ रहती, तो दोनें अपने को प्राण सूत्र में पिरोया हुआ स्वीकार करते थे। स्वीकार करते समय अपने स्थलियों पर विद्यमान हो करके, उन्होंने यह विचारा कि आज हम सूर्य मण्डल की यात्रा करने के लिए तत्पर होना चाहते हैं। तो वहाँ उन किरणों में जब प्राण सूत्र उन्होंने दृष्टिपात किया, प्राण सूत्र ही है जिसके द्वारा सूर्य की किरण इस पृथ्वी मण्डल पर आती है, नाना लोक लोकान्तरों में प्रवेश करती है। द्यौ से जब वह सूर्य प्रकाश लेता है, विद्युत् लेती है उसी विद्युत् को ले करके संसार प्रकाशमान होता है। सूर्य प्रकाशित बना हुआ है। परन्तु देखो, योगीजन उस प्राणसूत्र के सहुएग से सूर्य की किरण के साथ साथ वह सूर्य की यात्रा में तत्पर रहते थे।

मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि हमारे यहाँ नाना प्रकार के वैज्ञानिक हुए हैं। जिन वैज्ञानिकों ने सूर्य से ऊर्ज्वा ले करके, सूर्य से शक्ति को ले करके, सूर्य की यात्रा वाले योनों का निर्माण कियाहै और उन यानों में विद्यमान हो करके देखो,ा यात्री बना रहा है। तो इसीलिए आचार्यों ने कहा कि इसी आभा को ले करके प्राण सूत्र की चिकित्सा हमारे यहाँ, परम्परागतों से विचित्र मानी गई है। महर्षि कागभुसण्ड जी ने लोमश मुनि से कहा जैसे प्राण सूत्र को ले करके सूर्य की आभा में रमण करता है, सूर्य की किरणों के साथ साथ ऊर्ज्वा ले करके उसको प्राप्त कर लेता है, इसी प्रकार मानव के द्वारा एक प्राण चिकित्सा भी कहलाई जाती है। हमारे यहाँ प्राण चिकित्सा को ले करके सूर्य और चन्द्र दोनों के ज्ञान विज्ञान को ले करके उन्होंने प्राण चिकित्सा का निर्माण किया। कागभुसण्ड जी की विशेषता इस संसार में उस काल में यह रही है कि उन्होंने प्राण सूत्रस ले करके प्राण चिकित्सा का निर्माण किया है। हमारे यहाँ कई प्रकार की चिकितसा का निदान होता रहा है। एक प्राण चिकित्सा है, एक वायु चिकित्सा है, एक द्यौ चिकित्सा कहलाती है, एक वनस्पति विज्ञान वाली चिकित्सा कहलाती है। परन्तु यह जो प्राण चिकित्सा है यह सर्वोपरि और सबसे महान् चिकित्सा मा जाती है। जब हमारे यहाँ वैद्यराज प्राण सूत्र में रमण करने वाले प्राण की चिकित्सा में तत्पर हुए तो उन्होंने अपने को प्राण सूत्र में पिरोना प्रारम्भ किया।

कागभुसण्ड जी ने 12 वर्ष तक इस प्रकार का तप किया। मुनिवरों! जो वह प्राण के ऊपर अनुसन्धान करते रहे कि यह प्राण कितनी गति, कितनी घड़ी में नाभि केन्द्र से सूर्य प्राणायाम की गतियों में गति कर रहा है, कितनी घड़ियों में यह चन्द्र स्वर विज्ञान में गति कर रहा है। यदि दोनों में देखो, उनका दोनां स्वरों प्रतिभा एक ही सूत्र में पिरोई हुई है तो वह स्वस्थ प्राणी कहलाया जाता है और इसमें दोनों प्रकार के विज्ञान में किसी स्वरां में किसी प्रकार की त्रुटियाँ और अस्वाथ्र मन्द और तेजोमयी गति अस्वान रहती है। तो दोनों में किसी प्रकार के रुग्ण की आशंका बनी रहेगी तो परिणाम यह कि प्रत्येक मानव को प्राण चिकित्सा के ऊपर अध्ययन करना चाहिए। प्राण चिकित्सा वाले बहुत से वैज्ञानिक हुए हैं। प्राण चिकित्सा वालों ने सूर्य की किरणों के द्वारा अपने को महा अस्वतों में प्रवृत्त किया है।

आज मैं बेटा! चिकित्सा के सम्बन्ध में मैं कोई चर्चा प्रगट हीं करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! महानन्द जी नाना प्रकार की मुझे प्रेरणा देते रहते हैं। आज मैं इस प्रेरणा के ऊपर अपना कोई विचार देना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय यह है कि महर्षि कागभुसण्ड जी महर्षि लोमश मुनि महाराज की यह चर्चा हो रही थी कि हमें अपने को कैसे महान् बनाना है और बाह्य जगत् व आनतरिक जगत् में जो यज्ञ हो रहा है इस याग का संसार में क्या प्रतिफल हेता है। मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि हमारे यहाँ प्राण को ज्ञान करके ही वैज्ञानिक जन लोक लोकान्तरों के सूत्र को जानते हैं। मुझे एक समय स्मरण है कागभ्सुसभ्फउ जी और लोमश मुनि महाराज अपनी स्थली पर विद्यमान हो करके यह अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने सूर्य किरणों से सूक्ष्म सा एक यन्त्र का निर्माण किया। सभा में उनके विद्यालय में राजा सम्पाती और महाराजा गरुड़ यह दोनों विद्यमान उनके शिष्य कहलाते थे और दोनों ने सूर्य विज्ञान के उत्पर बहुत अध्ययन किया, प्राण सूत्र के ऊपर अध्ययन किया। जब वह अध्ययन किया, प्राण सूत्र के ऊपर अध्ययन किया। जब वह अध्ययन करने लगे तो ऐसा मुझे स्मरण है कि उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्र में यह दृष्टिपात करते थे कि जो शब्द विज्ञान है, जो पृवि की परिक्रमा कर रहाह ै, जो लोक लोकान्तरों की

परिक्रमा करने वाला है, जो शब्द द्यौ लोकान्तरों की परिक्रमा करने वाला है, जो शब्द द्यौ लोकान्तरों की परिक्रमा करने वाला है, जो शब्द द्यौ लोकान्तरों की परिक्रमा करने वाला है, जो शब्द द्यौ लोक में रमण करने वाला है, उस शब्द की प्रतिभा में मानव अपने में परणित करता रहा है। तो विचार विनिमय क्या? यन्त्रों में वह सूर्य विज्ञान में सूर्य की किरणों को एकत्रित करने में लगे रहे और मुनिवरों! देखो, वही सूर्य की किरण जो पृथ्वी के गर्भ में परणित हो करके परमाणुओं का आदान प्रदान कर रहे थे। उन परमाणुओं को साकार रूप बनाने में सदैव सहयोगी सिद्ध हुए तो मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि उनका दोनें का कागभुसण्ड जी और लोमश मुनि महाराज जहाँ आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जहाँ आत्मा के ऊपर विवेचना करते रहते थे, वहाँ वह कई विज्ञान में भौतिक विज्ञान में भी रत्त रहते थे।

एक समय अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके एक आकाश गंगा में लाने लगे, एक आकाश गंगा में चन्द्र लोकों की गणना करने लगे। चन्द्रमाओं की गणना करते करते ऐसा मुझे स्मरण है कि उन्होंने एक ही आकाश गंगा में अरबों खरबों चन्द्रमाओं को दृष्टिपात किया। चन्द्र मण्डलों का दृष्टिपात करते हुए वह शान्त हो गए और अन्त में यह कहा कि यह तो विशाल विज्ञान है। विशाल विज्ञान में हम जाना नहीं चाहते हैं। परमात्मा का विज्ञान इतना नितान्त है कि इसके ऊपर मानव अनुसन्धान करने लगता है पर अन्त में मौन हो जाता है। अन्त में वह मौन हो करके यह कहता है मैं तो बाल्य बन गया हूँ, मैं तो प्रभु! का पुत्र बन गया हूँ। मैं इसके विज्ञान को जान नहीं पाता जैसे माता की लोरियों का पान करता हुआ बालक मौन रहता है त्तुधो सम्भवा देवो ब्रह्मा वह अपने में मौन रह करके शिशु प्रवृत्ति में परणित हो हाता है। तो देखो, यह विशाल जगत् है प्रभु का। इसके ऊपर प्रत्येक मानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है। प्राण सूत्र में अपने को पिरोता रहा है। प्राण सूत्र में लोक लोकान्तर जो एक सूत्र मं पिरोएं हुए हैं, उनको निहारता रहा है, क्रिया रूप बनता रहा है। परन्तु देखो, अन्त में वह मौन हो गया है।

आज का वेदमन्त्र यह कह रहा था मातम् ब्रह्म वाचाः देवम् वृथा महर्षि लोमश व

कागभुसण्ड जी वेदमन्त्र के ऊपर बहुत चिन्तन करते थे और वह चिन्तन क्या? माता एक प्रकार का रथ है, माता एक प्रकार का रथ कहलाता है। रथस्त्वम् ब्रह्मवाचाः वह रथ कैसे है उस रथ में सब देवता विद्यमान रहते हैं। सब देवता उसमें विद्यमान हो करके उस रथ में विद्यमान होने वाला एक आत्मा है, एक अणु है, वह एक परिमाणु है। उस अणु और परमाणु मे सर्वत्र देवता विद्यमान रहते हैं। वह अणु भी परमाणु भी एक प्रकार का रथ बना हुआ है। कैसे रथ बना हुआ है? शिशु एक बिन्दु है और उस बिन्दु में उस परमाणु का जब विभाजन करते हैं तो उसमें सर्वत्र देवता विद्यमान रहते हैं। कौन देवता हैं? उसमें गति भी विद्यमान है, प्राण भी विद्यमान है, तेज भी विद्यमान है, गुरूतव भी विद्यमान है। सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसमें दृष्टिपात आता है। एक परमाणु में सर्वत्र ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता है। जैसा यह ब्राह्य हमें ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आ रहा है तो इस ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हुए उन्होंने कहा कि एक प्रकार का रथ है। वह माता कौन जो रथ ही है, जो रथ बनी हुई है वह चेतना है, वह मेरा प्यारा प्रभु है। उस रथ में सर्वत्र प्राणी विद्यमान हैं लोक लोकान्तर उसमें विद्यमान हैं। जैसे एक मधुमक्खी होती है परन्तु वह अवृत्तियों में रमण करने वाली प्रत्येक मक्खियाँ उसकी परिक्रमा करती रहती हैं। इसी प्रकार कुछ परमाणु गति करते हैं जो रथ के रूप में विद्यमान हैं। यही विज्ञान जब महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ प्रगट हुआ था, ब्रह्मचारी सुकेता ने यही कहा था कि महाराज! यह जो एक वस्तु का बिन्दु है इसे एक थ के बिन्दु में परमाणु है विशेष और उस परमाणु के अन्तर्गत नाना प्रकार के परमाणु गति कर रहे हैं और जो परमाणु गति कर रहे हैं वह एक प्रकार का बिन्दु रथ बना हुआ है। उस बिन्दु रथ में ही मानव का चित्त विद्यमान रहता है। तो मेरे प्यारे! यह विशाल ज्ञान है प्रभु का। यही कागभुसण्ड जी और लोमश मुनि की अपने विद्यालयों मं इस रपकार की चर्चाएँ होती रहती थीं, इस प्रकार का अनुसन्धान होता रहता था। इन अनुसन्धान की प्रवृत्तियों में मानव परम्परागतों से रत्त होता रहा है।

मैं तुम्हें कोई विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विवेचना केवल यह देने के लिए आया हूँ कि यह जो प्रभु का जगत् है यह जो प्रभु का ब्रह्माण्ड है, यह इतना अनन्तवत् माना

गया है कि मानव चिन्तन करता हुआ अन्त में मौन हो जाता है। अन्त में शिशु की भांति बाल्य प्रवृत्ति में प्रवेश कर जाता है। इतना विशाल विज्ञान है मेरे प्यारे! प्रभु का। महर्षि लोमश और कागभुसण्ड जी अपने स्थलियों पर विद्यमान हो करके प्राण के ऊपर चर्चा करने लगे। उन्होंने कहा कि यह जो सूर्य प्राण है इसका सम्बन्ध सूर्य से होता है। चन्द्र का जो चन्द्र प्राणायाम है उसका सम्बन्ध सूर्य से होता है। चन्द्र का जो चन्द्र प्राणायाम है उसका सम्बन्ध चन्द्रका से होत है। चन्द्रमा में अमृत है शीतलता है और देखो, सूर्य में तेज है, सूर्य में प्रकाश है, तेज है, तेजोमयी कहलाता है। परमाणुओं के आदान प्रदान की इसमें शक्ति है। यही शक्ति चन्द्रमा में मानी गई है। परन्तु देखो, इन दोनों प्राण को हम अपने में जब ग्रहण कर लेते हैं अपने अन्तर्जगत में ले जाते हैं और बाह्य जगत् से परमाणुओं को लाते हैं अन्तर्जगत से अशुद्ध परमाणुओं को त्यागते हैं तो इससे हमें यह सिद्ध हुआ है कि प्राण हमारा शोधन करने वाला है, प्राण ही गति को देने वाला है। प्राण सूत्र में दोनों एक समय प्राण को ले करके पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर गए। पृथ्वी के गर्भ में जो जल अग्नि का भण्डार अप्रितम् ब्रह्मवाचाः प्राण दोनों रूपों में परमाणुओं को लिए हुए गति कर रहा था। कहीं वही प्राण अग्नि का भंडार बन करके, वही प्राण कहीं जल का शिशु का भंडार बन करके दोनों का आदान प्रदान कर रहा है। उन्हीं परमाणुओं से सूर्य और चन्द्र दोनों प्रकार के परमाणुओं से स्वर्ण का निर्माण हो रहा है, रत्नों का निर्माण हो रहा है। जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में अग्नि का भण्डार है। वहाँ अमृत का भंडार है जिसके ऊपर मुनिवरों! देखो, वैज्ञानिकजनों ने जब पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश किया, तो वहाँ नाना प्रकार के रत्नों का, परमाणुओं का निर्माण हो करके धातु पिपाद का निर्माण हो रहा था। तो उन्हीं परमाणुओं का सम्बन्ध माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु प्रवेश हुआ, उन्हीं धातुओं का सम्बन्ध चन्द्र प्राण के ऊपर सूर्य स्वरों के ऊपर, वही प्राण बन करके नाना धात पिपात बन करके इस मानव के शरीर का निर्माण होता रहा है।

बेटा! मैं दूरी चला गया हूँ वाक् उच्चारण करते करते विचार विनिमय यह चल रहा था कि प्रभु का विज्ञान है यह इतना नितांत है कि मानव इसके ऊपर परम्परागतों से

अनुसन्धान करता रहा है, अन्वेषण करता रहा है। तो महर्षि लोमश और कागभुसभ्कउ जी की मैं चर्चा कर रहा था। उनके जीवन की कुछ चर्या के ऊपर कुछ विचार देने के लिए हम तत्पर थे। तो विचार यह दे रहे थे कि दोनों का अध्ययन इस प्राण के ऊपर गम्भीर होता रहा है। इन्हीं प्राणों को ले करके सूर्य चन्द्र को ले करके, चन्द्रमा अमृत को बहाने वाला है और सूर्य तेज को बहाने वाला है, प्रकाश को देने वाला है। जैसे सूर्य के प्रकाश से उदय होने पर नेत्र प्रकाशित हो जाते हैं, चन्द्रमा के उदय होने पर रात्रि उसके गर्भ में प्रवेश कर जाती है, अंधकार चन्द्रमा के गर्भ में प्रवेश हो करके वह अपनी कांति के द्वारा अमृत की वृष्टि करते रहते हैं, पृथ्वी के गर्भ में शीतलता आती है, कृषि उपजने लगती है, वनस्पति विज्ञान में अमृत का भरण हो जाता है। सूर्य प्रातःकाल उदय होते ही उस अमृत का भरण हो जाता है। सूर्य प्रातःकाल उदय होते ही उस अमृत को उसमें समावेश कर देता है। समावेश करके कृषि और जितनी वनस्पति विज्ञान है वह अपने में सक्रिय बन गरके स्थिर बन करके अपने कार्यों में रत्त हो जाती है। अपने गुणों को एक दूसरे के सहायक बन करके यह जगत् ऐसी आभा में दृष्टिपात आता है जैसे इसमें प्रभु की सर्वत्र महती विद्यमान हो रही है। सर्वत्र प्रभु की महती दृष्टिपात आ रही है। हे मां! तू केसी रथ बनी हुई है? इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने में धारण कर रही है यह ब्रह्माण्ड तेरी आनन्दमयी नौका में विद्यमान हो करके गति कर रहा है। अपने को पार करना चाहता है, तेरे ही आँगन में विद्यमान हो करके जैसे रथ के बिन्दु में भिन्न भिन्न प्रकार की परमाणु एक ही रथम े विद्यमान हैं, एक बिन्दु रूपी नौका में विद्यमान हैं। इसी प्रकार एक रेनकेतु परमाणु होता है, उस परमाणु में जब इस शरीर को त्याग करके आत्मा जाता है तो एक रेनकेतु और सवाति परमाणु होते हैं, जो उकसे अन्तर्गत नाना प्रकार के परमाणु मानव का चित्र बन करके अन्तर्गत नाना प्रकार के परमाणु मानव का चित्र बन करके द्यौ लोक में रपत हो जाते हैं। यह केसा मेरे प्यारे! प्रभु का विज्ञान है? केसी मेरी प्यारी माता, वह वसुन्धरा जो हमें अपने में धारण कर रही है, लोकान्तरों को अपने में धारण कर रही है। हम उस प्रभु का, उस ममतामयी के गर्भ में धारण कर रही है। हम उस प्रभु का, उस मातामयी के गर्भ में

जाने के लिए हम सदैव उत्सुक बने रहते हैं और यह चाहते हैं कि हम उस प्रभु की ममतामयी आनन्दमयी लोरियों का पान करते हुए इस सागर से पार हो जाएँ। प्रत्येक मानव परम्परागतों से यही चाहता है, आनन्द को प्राप्त करना चाहता है। कोई द्रव्य आनन्दव हे वाचदेवाः जितनी मानवीय साधना है, मानवीय द्रव्य है, उसी में मुनिवरों! देखो, सर्वत्र साधना निहित रहती है।

मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ, मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, परन्तु तुम्हें एक सूक्ष्म सा परिचय देने चला आता हूँ और वह परिपचय क्या है कि प्रत्येक परमात्मा की यज्ञशाला में विद्यमान है। यह जो जितना जगत् है, ब्रह्माण्ड है यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपम यज्ञाशाला है। इसमें प्रत्येक मानव बाह्य जगत् दोनों का स्वरूपों में याज्ञिक बना हुआ है। अग्न्याधान करता हुआ, अग्नि के समीप कहता है ब्रह्मा अग्नि देवो ब्रह्मा वाचम् अग्निः हे अग्नि! तू ब्रह्मा है, हे अग्नि! तू प्रकाश को देने वाली है, हे अग्नि! तू ज्ञान रूप बन करके रहती है, हे अग्नि! कहीं तू काष्ठों में रहने वाली अग्नि है। तेजोमयी बन करके तेरा ऊर्ध्वा मुख रहता है, क्येंक तेरा सखा ही ऊर्ध्वा में है। तो इसलिए अग्नि तेरा ऊर्ध्वा मुख कहलाता है। हे अग्नि! तेरी जिह्वाओं में देखो, यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके तेरे मुख में कुछ अर्पित करना चाहता है। तेरे मुखार बिन्दु में अर्पित करना चाहता है। क्योंकि तेरा मुख ही तो है जो इस संसार को तेजोमयी बना रहा है। यज्ञमान कुछ साकल्य देना चाहता है, कुछ अभी तेरे में प्रदान करना चाहता है। हे अग्नि! तू ही तो इस पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान हो करके स्वर्ण इत्यादियों का निर्माण करती है। हे अग्नि! जब तू ऊर्ध्वा में अन्तरिक्ष में ओत प्रोत होती है, वही तो अग्नि है जो परमाणुओं का आदान प्रदान करके द्यौ मण्डल का निर्माण कर रही। कहीं द्यौ मण्डल का निर्माण, कहीं मानव कृतियों में दिशाओं का निर्माण हो रहा है, कहीं मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में तू मानव के, प्रत्येक प्राणी के चित्रों को ले करके उसमें गति करा रहा है। वह प्रत्येक चित्र शब्दों के साथ में अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं। हे नमम् ब्रह्मा अग्नि हे अग्नि! जब तुझे कोई जानना चाहता है तू उन चित्रों का

दिग्दर्शन करा देती है, जो चित्र देखो, प्रत्येक मानव के अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं। तो देखो, विचार यह चल रहा है कि आज हम अग्नि का आधान करना चाहते हैं। अपने में अग्नि को धारण करना चाहते हैं। वह जो ज्ञान रूपी अग्नि है, वही तो मानव का कल्याण करने वाली है क्योंकि ज्ञान ही संसार में मानवीय तत्त्वों पर निहित रहता है। वही अग्नि है जो ब्रह्मा अग्नि बन करके देखो, द्यौ लोक में प्रवेश करती है, अन्तरिक्ष में रत्त रहने वाली है। मानव जैसे शब्दों का उच्चारण करता है, शब्द के साथ में चित्र, चित्रों के साथ में उसका क्रिया कलाप अन्तरिक्ष में विद्यमान रहता है। विचार यह देने जा रहा था कि इस अग्नि का आधान करते हुए कागभुसण्ड जी और लोमश मुनि महाराज दोनों अपने विद्यालय में अध्ययन करते रहे। इसी अग्नि को ले करके महाराजा सम्पत्ति और दोनों विधाताएँ गरुड़ जी उनके दोनों कृतियों में वह भी अनुसन्धान करते थे। समुद्र के तट पर उनका सूक्ष्म सा राज था, जो राजा राम ने उने राष्ट्र को विजय कर लिया था। कागभुसण्ड जी तो देखो, महर्षि लोमश के आश्रम में प्रवेश कर गए थे और सम्पाती समुद्र के तट पर कागभुसण्ड जी के पिता थे जो अकृत कहलाते थे, सम्भुक ऋषि महाराज वह उनके आश्रम में चले गए थे। उनकी प्रतिक्रिया उनका राष्ट्र समाप्त हो गया था। परन्तु वे वैज्ञानिक थे, अपने में अनुसन्धान करते रहते थे, विचार विनिमय करते रहते थे।

आज तुम्हें बेटा! मैं साहित्यिक चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को प्राण सूत्र को जानना है। प्रत्येक प्राणी परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में मानव शिशु के रूप में रहता है, चाहे कोई धिराज हो, राजा हो, वैज्ञानिक हो, योगी हो, प्राण सूत्र में रमण करने वाला हो। परन्तु देखो, वह माता की लोरियों का जब पान करने लगता है, लोरियों का पान करने वाला शिशु कहलाता है और उसकी लोरी क्या हैं? मेरे पुत्रों! ज्ञान है। जब उसके अन्तिम छोर पर जाता है, तो वैज्ञानिक हो चाहे किसी भी प्रकार का वैज्ञानिक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता हो, चाहे भौतिक विज्ञानवेत्ता हो वह मौन हो जाता है और जहाँ मौन हुआ वहीं शिशु बन जाता है। जैसे बालक माता की लोरियों का पान करने शिशु बना हुआ है वह मौन रहता है, लोरियों

के आनन्द को प्रगट नहीं कर सकता इसी प्रकार बेटा! प्रभु के गर्भ में प्रभु के ज्ञान और विज्ञान को जानता हुआ उसका वर्णन साकाररूप में नहीं कर सकता। इसी प्रकार शिशु बना हुआ है। मैंने शिशु की चर्चाएँ की हैं कागभुसण्ड जी ने भी अग्नि में यही कहा है। योगाभ्यास करते हुए आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करते हुए, भौतिक विज्ञान में प्रवेश करते हुए, परमाणुवाद को जानते हुए, उन्होंने यही कहा, मैं शिशु बना हुआ हूँ, मैं बाल्य हूँ, प्रभु के राष्ट्र में कोई बलवती नहीं है, कोई मानव विशाल नहीं है। प्रभु के ज्ञान और विज्ञान में प्रत्येक प्राणी शिशु के रूप में ही रत्त रहता है, क्योंकि प्रभु का ज्ञान और विज्ञान इतना नितान्त है, इतना महान् है कि अन्त में प्राणी मौन हो जाता है और वह अपने में कोई वाक् वर्णन नहीं कर सकता।

यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा क्या कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। अब हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा है, शेष चर्चाएँ यदि समय मिलेगा तो कल करेंगे। अब वेद मन्त्रों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान : सेठ ओकारनाथ, जवाहरलाल मोदी नगर, समय : सायं 7 बजे

४ 28 07 1985 पुष्प 50 यम नचिकेता वार्त्ता

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस वित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं। जितना भी ज्ञान है अथवा विज्ञान है वेद की प्रतिभा का स्रोत माना गया है, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना वैज्ञानिक हुए हैं, परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सीमा से रहित है। वह सीमा में आने वाले नहीं हैं, इसलिए उसका ज्ञान और विज्ञान नितांत है। एक एक

परमाणु में, एक एक अणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन होता है। इस सृष्टि के गर्भस्थल में नाना प्रकार की तरंगों में उस परमपिता परमात्मा की महती निहित रहती है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक मानव अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मैं विज्ञान की पराकाष्ठा पर जाने का प्रयास करूं और पराकाष्ठा पर मेरी निहितता होनी चाहिए। परन्तु जब वह ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ता रहा, तो मानव अंत में मौन हो गया है, इन्द्रियों का और चिन्तन का विषय नहीं रहा है। तो इसीलिए उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान है अथवा विज्ञान है वह इतनास नितांत है कि अनुसन्धानवेत्ता अनुसन्धान करता रहता है परन्तु अंतिम चरण में वह मौन हो जाता है, गम्भीर मुद्रा में परणित हो जाता है। इसी प्रकार वेदमन्त्र यह कह रहा है कि उस परमपिता की महती और उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मानव को विचार विनिमय करना चाहिए, क्योंकि दो प्रकार के विज्ञान हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, मानव के मस्तिष्कों में भासित रहती हैं। एक भौतिक विज्ञान है तो दूसरा आध्यात्मिक मार्ग है, दोनों प्रकार का विज्ञान अपने में अनूठा है, अपने में महान् है। एक दूसरे विज्ञान के ऊपर अन्वेषण करना जब प्रारम्भ करता है, तो एक तो यह चाहता है कि भौतिक विज्ञान में इस संसार में मेरी प्रतिष्ठा हो और मैं विज्ञान के ऊर्ध्वा अणु में प्रवेश कर जाऊँ। परन्तु दूसरा वैज्ञानिक कहता है कि मैं मृत्युञ्जय बन जाऊँ और मेरी मृत्यु न हो, मुझे संसार में भिन्न भिन्न प्रकार की विडम्बना नहीं होनी चाहिए। परन्तु दोनों प्रकार के विज्ञान में अपनी अपनी भिन्नता है, अपने अपने विचारों में भिन्नता लिए हुए रहते हैं। एक वैज्ञानिक राष्ट्र पाठ से जुड़ा हुआ है। अणु और परमाणु से वह रत्त रहने वाला है, एक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता इस भौतिकवाद के मार्ग से होता हुआ, इन्द्रियों के तथ्यों को जानता हुआ, वह आध्यात्मिकवाद के क्षेत्र को विजय कर लेता है और प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है।

आज मैं उसी अनूठे विचारों में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ जो मोक्ष की पगडन्डी को ग्रहण करना चाहते हैं। जो मानव अपने में आध्यात्मिकवादी बनना चाहते हैं, तो वह कैसे बनते हैं? आओ मेरे प्यारे! तुम्हें मैं उस आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ नाना ऋषि मुनियों का विचार ब्रह्मवेत्ताओं का विचार जो मृत्युञ्जय बन गए हैं और जो मृत्युञ्जय की पिपासा

में लगे हुए हैं। परन्तु आज मैं तुम्हें उस आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ मुनिवरों! महर्षि उद्दालक गोत्रीय ब्रह्मचारी नचिकेता ने आचार्य मृत्यु के गृह में प्रवेश किया, जब गृह में प्रवेश किया तो नाना ऋषि मुनियों से उन्हें मृत्युञ्जय बनने की नाना प्रकार की उड़ानें अपना अपना विचार व्यक्त किया। अंतिम चरण वह यमाचार्य के गृह में हुए, उनका नामोकरण यमाचार्य था परन्तु जब आध्यात्मिकवाद में मृत्यु को विजय कर लिया, तो वह मृत्यु आचार्य कहलाने लगे। जब वह ब्रह्मचारी गृह में प्रवेश हुए, द्वार पर पहुंचे तो मुनिवरों! मृत्यु आचार्य पत्नी ने कहा प्रभु! आइए, कुछ अन्न और जल का पान कीजिए, मुनिवरों! उद्दालक गोत्रीय पुत्र नचिकेता ने कहा हे मातेश्वरी! मैं जब तक भोजन नहीं करूंगा जब तक मुझे आचार्य मृत्यु के दर्शन नहीं होंगे। मैं अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए आचार्य के समीप आ पहुंचा हूँ, आपत्ति व्याकुल हो गई है। उन्होंने नौदा में से एक मन्त्र का अध्ययन किया।

वह नौदामयी मन्त्रों के ऊपर विचार विनिमय करने लगे। वह वेदमन्त्र कह रहा था विप्रजाम् भविते ब्रह्म लोको वस्तुतताः ब्रह्मचरिष्यामि गतो वाचम् भवि उन्होंने नौदा में से एक वेदमन्त्र का उच्चारण करके अपने में चिन्तन करने लगे और विचारने लगे कि वेदमन्त्र यह कहता है कि यह गृह आश्रम में एक ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म की जिज्ञासा वाला अन्नजल पीड़ित रह जाए, तो मानव की वह मूल्यवान उस गृह के पुण्यों को ले जाता है और वह अपने पापकर्मों को त्याग देता है। यह पाप कर्म हैं, मेरा गृह तो अशुद्ध होने जा रहा है। वह व्याकुल हो गई, प्रभु से याचना करने लगी, हे प्रभु! मृत्यु को मेरे समीप ला दीजिए, मेरा गृह पुण्यवान बना रहे, उज्ज्वल बना रहे। वह पत्नी प्रातःकालीन अग्निहोत्र जब करती तो अग्नि के समीप कहती कि हे अग्नि! तू संसार को अपने ही में धारण कर लेती है, हे अग्नि! तेजोमयी है, हे अग्नि! तू उद्धालक है, हे अग्नि! तू पतितपावन है, साकल्य को अपने में ले करके तू देवताओं का दूत बन जाती है, तू देवताओं के समीप निहित हो जाती है। आ तू मेरे मानव में भी अन्तरात्मा की इस वाणी को स्वीकार कर। मन्त्रों का उच्चारण कर रही है, देवताओं का आह्वान हो रहा है। परन्तु देखो, तीन रात्रि हो गई, तीन रात्रि वह यही प्रार्थना करती रही, हे प्रभु! जब

तीसरा दिवस आया तो प्रातःकालीन यमाचार्य, मृत्यु आचार्य अपने गृह में उन्होंने वास किया, दृष्टिपात करते पद में व्याकुल हो गए और यह कहा कि हे प्रभु! हमारे द्वार पर एक ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मचारी विद्यमान है और यह अन्नजल से पीड़ित है। तीन रात्रि और तीन दिवस हो गए, परन्तु उसने कोई अन्नजल का पान नहीं किया है। तो भगवन्! उसे किसी प्रकार अन्नजल का पान कराइए जिससे हम पुण्यवान बने रहें, हमारा गृह पुण्यवान बना रहे। उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम् देवी, मैं प्रयत्नशील हूँ। उन्होंने कहा प्रभु! आप क्या करेंगे इसमें, उन्होंने कहा कि उसकी इच्छा होगी ब्रह्मचारी की मैं उन्हें प्रदान करूंगा। उनकी इच्छा पूर्ण करना ही मेरा स्वधर्म है। वह पत्नी के उद्गार श्रवण करके ही यमाचार्य बालक नचिकेता के द्वार पर पहुंचे, तो नचिकेता ने नम्र और श्रद्धाहित हो करके ऋषि के चरणों को स्पर्श किया, चरणों की वंदना की।

यमाचार्य ने कहा हे बालक! हे ब्रह्मचारी! मैं तुम्हें तीन वर देता हूँ और तीन वरों में जो तुम्हारी इच्छा हो वह स्वीकार करो। उन्होंने कहा बहुत प्रिय भगवन्! उन्होंने कहा मैं सबसे प्रथम उस वर को चाहता हूँ जिससे मेरे पिता ने सर्वत्र द्रव्य देवताओं को दू कर दिया, वह मेरे पिता की अभिलाषा पूर्ण हो, क्योंकि उन्होंने नाना ऋषियों के द्वारा याग किया और याग करके उन्होंने मुझे भी उन्होंने मृत्यु को प्रदान कर दिया है। वह त्याग और तपस्या में परणित हो करके ममता को त्याग करके, वह द्रव्य को त्याग करके, देखो, मोक्ष की पगडन्डी को ग्रहण करना चाहते थे, वह मोक्ष में प्रवेश करना चाहते थे। हे प्रभु! हे आचार्यजन! वह मेरे पिता की इच्छा पूर्ण हो क्योंकि मैं ब्रह्मचारी उद्दालक गोत्रीय हूँ, और उद्दालक गोत्र में पितरभक्ति एक महान् रही है। क्योंकि यदि मानव पितरभक्त होता है, अपने पिताओं की आज्ञा का पालन करता है, वह महान् बना करता है, वेद का मन्त्र और नौदामयी उच्चारण कर रही है कि हमें पितरों का भक्त बन जाना चाहिए। पितर कौन हैं? बालक नचिकेता कहता है कि पितर हमारे यहाँ सर्व प्रथम पिता है, माता है, आचार्य है। यह हमारे चैतन्य देवता कहलाते हैं चैतन्य पितर कहलाते हैं। पितरों का अभिप्राय यह है जो अपने ब्रह्मचारियों को अपने गृहों में स्थलियों में रत्त रहने वाले, उसको महान् दृष्टिपात करना चाहिए कि वह ब्रह्मचारी महान् वनों और

उनका नामोकरण ऊर्ध्वा में प्रिय हो जाए, गतिशील बन जाए, तो उनके विचारों में यह विशेषता रहती। मेरी प्यारी माता सदैव पुत्र के लिए यह चाहती है कि मेरा पुत्र महान् बन जाए, मेरे पुत्र में एक महानता आ जाए और मेरा पुत्र आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों को अपने में सिमेटने वाला हो। परन्तु देखो, पिता भी यही चाहता है कि यह मेरी इच्छा पूर्ण करना चाहता है। तो जाओ तुम मृत्यु को चले जाओ मृत्यु के गर्भ में, यह है क्या? तुम अज्ञान को त्याग और प्रकाश में चले जाओ। तो प्रभु! जो यह कामना करता है मेरा पितर मुझे प्रकाश में, प्रकाश के लिए प्रेरणा दे रहा है और स्वतः मोक्ष में जाना चाहता है, तो मेरा भी वही पितर मेरे जीवन का कल्याण करने वाला है। आचार्यकुल में जब ब्रह्मचारी अध्ययन करता है, तो आचार्य की यह कामना होती है कि मेरा ब्रह्मचारी महान् होना चाहिए मेरे ब्रह्मचारी में वह चक्षु में अनुसन्धानी प्राण में, अनुसन्धानी स्रोतों में अनुसन्धानी, वह अनुसन्धान करता हुआ वह कहता है, हे ब्रह्मचारी! तू इन्द्रियों के विषय को मुझे प्रदान कर, जिससे मैं पवित्र और महान् बन जाऊँ। मैं महान् बनूंगा, तो ब्रह्मचारी महान् बनेगा। देखो, वह कामना करता है। नचिकेता कहता है, भगवन्! यह पितर क्या है? मेरी इच्छा यह है कि मेरे ये जो पितरजन है, उनकी आशा अभिलाषा पूर्ण हो। उन्होंने कहा प्रभु! और जड़वत् देवता हैं, जो जड़ देवता है उनकी भी मेरे हृदय में यह कामना है कि वे भी भासिते रहें जैसे सूर्य हमारा पितर है वह प्रकाश देता है, चन्द्रमा हमारा पितर है वह अमृत देता है, अग्नि हमारा पितर है वह ऊष्णा बनाने लगती है वह तेजोमयी बनाती है, वह तेजोमयी बनाती रहती है, आपो है यह शीतल बनाता है, वायु है यह प्राण देता है, अन्तरिक्ष हमें अवकाश देता है। तो अपने अपने में यह पितर हैं, यह कैसे अनुपम पितर हैं यह जड़ पितर हैं, परन्तु यह पितर कैसे हैं जो हमें देते देते ही हैं। अमृत देने वाला चन्द्रमा है कहाँ कहाँ से बटोर करके वह चन्द्रमा अपने में अमृत लाकर हमें प्रदान करता है। वह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानमयी है। बालक नचिकेता ब्रह्मचारी कहता है यमाचार्य से, हे प्रभु! मेरे जो पितरजन हैं वह चन्द्रमा अमृत लाता है, समुद्रों में जाता है, समुद्रों से परमाणुओं को लेता है, उन्हें अन्तरिक्ष में पहुंचाता है, अपनी छटाकान्ति के द्वारा वह प्रदान करता है।

वह जो भासिता रहता है सूर्य, वह सूर्य प्रकाश को देने वाला है, वह प्रकाश देता है। परन्तु देखो, इसी प्रकार यह आपोमयी ज्योति है यह अमृतमयी प्राण में समाहित रहती है। प्राणो वृहे वाचन्नमं ब्रह्माः यह प्राणों से युक्त हो करके हमें शीतल बनाता है, जीवन प्रदान कर देता है। इसी प्रकार अग्नि है, अग्नि ऊष्ण बनाने लगती है, यह तेजोमयी बनाती है। जो वह अपने वायुमण्डल को पवित्र अपनी आभा में नियुक्त बनाती रहती है, इसी प्रकार वायु प्राण देता है, और अन्तरिक्ष अवकाश देता है। तो यह भगवन्! मेरे जड़ पितर हैं, मैं पितरों के सम्बन्ध में तो इतना नहीं जानता हूँ। परन्तु मेरी इच्छा यह है कि मैं पितरों के लिए आया हूँ, प्रभु मेरे पितरों की इच्छा पूर्ण हो।

मेरे प्यारे! बालक नचिकेता के वाक्यों को पान करके, उसके मुखारबिन्दु को एक ही नेत्रों से वह दृष्टिपात करते रहे। उन्होंने सोचा कि यह ब्रह्मचारी तो बड़ा विचित्र है जो अपने सर्वत्र पितरों की इच्छा को पूर्ण करना चाहता है और कहा, हे ब्रह्मचारी! तथास्तु। प्रथम वचन स्वीकार कर दिया। द्वितीय वचन रह गया, द्वितीय वचन में उळनेंने कहा भगवन्! मैं यह जानना चाहता हूँ कि स्वर्ग किसे कहते हैं मैं स्वर्ग के सम्बन्ध में अपनी विवेचना चाहता हूँ, मैं जानना चाहता हूँ कि स्वर्ग क्या है? तो बालक नचिकेता ने कहा, हे ब्रह्मचारी! अग्नि की पूजा करने का नाम ही स्वर्ग कहलाता है। अब नचिकेता को यमाचार्य ने कहा हे नचिकेता! मैं उच्चारण करता जाऊँगा तुम श्रवण करते जाओ और जहाँ तुम्हारी शंका हो वहाँ निवारण करते चले जाओ। उन्होंने कहा, तो स्वर्ग कहते हैं अग्नि की पूजा को। अब अग्नि हमारे यहाँ कितने प्रकार की है जिसका हम पूजन करें। एक अग्नि वह है जिस अग्नि में मेरी प्यारी माता भोजनालय को तपा रही हैं, वह अग्निवृत्त है, द्वितीय अग्नि का नाम गार्हपथ्य नाम की अग्नि कहते हैं। जिस गार्हपथ्य नाम की अग्नि में ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में तपा करता है, विद्यालय में ब्रह्मचारी तप रहा है, अपना क्रिया कलाप बना दिया है, उसने स्वर्ग में जाने के लिए। प्रातःकालीन अपने आसन को त्याग देता है, जब तारामण्डलों की छटा अन्तरिक्ष में ओत प्रोत रहती है। आसन को त्याग करके वह अपनी क्रियाओं से निवृत्त होता है, क्रियाओं से निवृत्त हो करके प्रातःकालीन यज्ञ की अग्नि में आहुतियों के द्वारा वह देवताओं का पूजन करता

है, जिसे गार्हपथ्य नाम की अग्नि कहते हैं। उस अग्नि का वह पूजन करता है, वह अग्नि कौन सी है जो अग्नि ब्रह्मचर्य के रूप में मानव के शरीर में प्रवाह से गति कर रही है। वह ब्रह्मचारी उसे गार्हपथ्य अग्नि स्वीकार करके उसका पूजन कर रहा है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातनकाल में पूजन की चर्चाएँ की हैं पूजा किसे कहते हैं? पूजा का अभिप्राय यह है कि हम उसको जानना चाहते हैं, उसका जान करके उसका सदुपयोग करना ही वह उसकी पूजा कहलाती है। वह हमारे शरीरों में जो अग्नि का प्रभाव हो रहा है, उस अग्नि का सदुपयोग करना, हे ब्रह्मचारी!जन! तू अग्नि विद्या का अध्ययन कर, वह विद्या को अध्ययन कर रहा है, वह अपने में अध्ययनशील बना हुआ है, अध्ययन कर रहा है कि इस वेदमन्त्र के ऊपर विचार विनिमय करता हुआ अपने ध्रुवा में गति करता है, कहीं ऊर्ध्वा में गति कर रहा है, कहीं पुरुषार्थ प्रतिक्रिया में रत्त हो जाता है। विचार विनिमय क्या? वह गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन कर रहा है, गार्हपथ्य नाम की अग्नि उसे कहते हैं जो ब्रह्मचारियों के हृदयों में सिमट करके ब्रह्मचारी तेजस्वी बन रहा है और उसको प्राप्त होता हुआ ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ रहा है। वह लोक लोकान्तरों के लिए अपने में विचार विनिमय करता रहता है। जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करते थे, तो वह अपने विचारों में और ब्रह्मचारियों के विचारों का दोनों का समन्वय करते रहते थे, और उनका समन्वय करते हुए विचारते रहते ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रत्त रह करके, एक एक अणु और परमाणु में गति करते हुए, ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ते रहते।

तो विचार विनिमय क्या? यमाचार्य ने कहा हे नचिकेता सबसे प्रथम ब्रह्मचारी अपने स्वर्गलोक में चला जाता है। वह विद्या का अध्ययन करता, उसको क्रिया में रूप बनाना अपने में ब्रह्मवचर्यों का पालन करना, उसका सदुपयोग करना, यह गार्हपथ्य नाम की अग्नि के समीप जब ब्रह्मचारी चला जाता है, तो वह स्वर्ग में चला जाता है, उसका वही स्वर्ग है, आचार्य भी उसे मन ही मन में नत मस्तिष्क हो जाता है। ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्मचर्य के दो ही शब्दों में उसकी प्रतिभा भासती रहती है, ब्रह्म और चर्य दो ही शब्द हैं, ब्रह्म कहते हैं परमपिता परमात्मा को और चर्य कहते हैं प्रकृति को, दोनों का

अनुसन्धान करना ही यह उसका कर्त्तव्य कहलाता है। प्रत्येक सांस की प्रत्येक गति जब वह एक सूत्र में पिरो देता है, तो वह ब्रह्मचरिष्यामि बन जाता है। विद्या का अभिप्राय केवल यही है, विद्या के ऊपर हमारा अनूठा अनुसन्धान होना चाहिए। नचिकेता को यमाचार्य ने कहा कि हम जब पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करते थे, तो एक समय हम विचार विनिमय करते करते इन नौदामयी मन्त्रों का अध्ययन कर रहे थे और अध्ययन करते हमें एक वेदमन्त्र स्मरण आया था। वेदमन्त्र कहता था प्रमाणंवृहे वाचन्नम्वृही व्रताम् देवाः वाचन्नम् ब्रह्मवाचा मनाः वेद का मन्त्र कहता था कि हम उस परमाणुवाद के क्षेत्र में, ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्रों में हम अपने को कैसे ऊँचा बनाएँ। तो मुनिवरों! जब आचार्य के समीप पहुंचे तो आचार्य ने हमें नौदा में से मन्त्रों को उद्धृत करते हुए कहा कि सम्भूति ब्रह्म वाचा गृहे लोकाम् वाचन्नमम् ब्रह्म ही लोकवती यही तो व्रत कहलाता है। पूज्यपाद गुरुओं ने यह वर्णन कराया कि यह जो अणुवाद है, परमाणुवाद है, इसी में ब्रह्माण्ड निहित रहता है। इसी विद्या को जान करके मानव समाज और राजन्नम्वृही, समाज को ऊँचा बना करके, हम अपने ऊर्ध्वागति में ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ते रहते हैं। तो यह वाक् उन्होंने प्रगट कराया, इस वाक् का अध्ययन करते हुए तो हम तुम्हें यही उच्चारण कर रहे हैं, वही ब्रह्मचारी का स्वर्ग है, स्वर्ग किसे कहते हैं? जहाँ दुःखद की घटना न आएँ, परन्तु स्वर्ग उसे कहते हैं जहाँ कलह न रहे, जहाँ एक दूसरे में कलह का वायु मण्डल बन जाता है वह नरक का एक सांस बन जाता है, वह नारकीय गृह कहलाता है जिस गृह में जिस विद्यालय में एक दूसरे के विचारों में मत हो जाता है एक दूसरे के विचारों में विवाद की प्रवृत्ति बन जाती है, वह विद्यालय अपवित्र हो जाती है। हे ब्रह्मवाह वाचन्नमम् वृहे जिस राजा के राष्ट्र में विचारों में भिन्नता आ जाती है, राष्ट्र और प्रजा दोनों में एक दूसरे को विरह होता रहता है, राष्ट्र नारकीय कहलाता है, वह समाज नारकीय है। इसीलिए यमाचार्य ने कहा, नचिकेता! हमारा प्यारे आचार्य से सम्बन्धित रहना चाहिए, दोनों का परस्पर विवाद न हो, परस्पर समन्वय हो, परस्पर एक विचारों में प्रश्न कर्त्ता उत्तर देने वाला है और वह दार्शनिक दर्शनों से गुथा हुआ हो, ज्ञान और विज्ञान से गुथा हुआ हो, तो इस प्रकार का तुम्हारा जो विद्यालय है यह स्वर्ग

कहलाता है। प्रथम अग्नि का पूजन गार्हपथ्य नाम की अग्नि कहलाती है, जिस अग्नि का हमें पूजन करना है और द्वितीय अग्नि का नाम हमारे यहाँ आहवनीय नाम की अग्नि कहलाती है, जिस अग्नि में ब्रह्मचारी, मानव तपा करता है। द्वितीय अग्नि का नाम मेरे प्यारे! देखो, गार्हपथ्य नाम की अग्नि है, गार्हपथ्य नाम की अग्नि क्या है? जहाँ बेटा! देखो, माता पिता जिस अग्नि में तपायमान रहते हैं, उस अग्नि का हमें पूजन करना है। आज कोई भी मानव यह चाहता है कि मेरा गृह स्वर्ग बन जाए, मेरे गृह में स्वर्ग का वायु मण्डल बन जाए, तो माता पिता अन्तरस्थली पर विद्यमान हो करके दक्षिणों का विचार विनिमय करें और प्रातःकालीन अग्निहोत्र जिसे गार्हपथ्य नाम की अग्नि कहते हैं पूजन करें। अग्नि नाम कई रूपों में माना गया है, अग्नि काष्ठ में रहने वाली है यह भी अग्नि है, जो वाणी से उद्गार शबदों का उद्गीत होता है इसका नाम भी अग्नि कहलाता है। जब माता पिता अपने अपने आचरणों से विशुद्ध होते हैं आचरण जिसके पवित्र होते हैं, उएनके गृह मुनिवरों! देखो, स्वर्ग बनते हैं और जिन गृहों में आचरणों की भिन्नता हो जाती है, आचरणों में दूषितवाद आ जाता है, वहाँ गार्हपथ्य नाम की अग्नि शान्त हो जाती है। अपने गृह को स्वर्ग बनाना है तो हमें अपने आचरणों को इतना पवित्र बनाना चाहिए, अंतरात्मा के अनुकूल बनाना चाहिए। गृह में पति पत्नी जब सुन्दर आचरण को करेंगे, माता पिता बाल्य बालिका अपने श्रवण करेंगे, अपने में अध्ययन करेंगे, तो उनके आचरणों से उनके आचरण भी पवित्र बन जाते हैं। उनकी प्रति क्रियाएँ विचित्र बन जाती हैं। तो हे मातेश्वरी! हे मित्रो! आज तुम अपने आचरणों को पवित्र बनाओ, जिससे तुम्हारे गृह में नरक का वास न बन जाए, तुम नारकिक न बनो, तुम देवपुरी में अपना वास करने वाले बनो। गृह को स्वर्ग बनाना है, तो गृह स्वर्ग उस काल में बनेगा, जब गार्हपथ्य नाम की अग्नि का प्रकाश होगा, प्रकाश कैसे होता है? प्रातःकालीन मेरे वेदमन्त्रों का अध्ययन, ध्वनि होती रहे, गृह प्रातःकालीन ध्वनित होता रहे।

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! नाना ऋषि मुनियों का जीवन, वह माता और पितर अपने में शिकानकेतु ऋषि हुए हैं उद्दालक गोत्र में। शिकालकेतु ऋषि महाराज और उनकी पत्नी प्रातःकालीन जब याग करते, तो याग कर्म में मानव दर्शनों का अध्ययन

करते। विज्ञान की तरंगों में उड़ाने उड़ते रहते। तो बाल्य बालिकाओं माता पिता के आचरणों का अध्ययन करते, जब अध्ययन करते तो गृहि स्वर्ग बन गया और गृह में तपस्वी जीवन बन गया और तपस्याचर हो करके गृह स्वर्ग बन गया। तो मैं आज तुम्हें गार्हपथ्य नाम की अग्नि के पूजन के सम्बन्ध में कुछ विवेचना करना चाहता हूँ। महाराजा दिलीप जी जब अध्ययन करते थे, वे और उनकी पत्नी जब गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करते तो राष्ट्र पवित्र बन गया। प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, वेदों का अध्ययन करना, ज्ञान की चर्चाएँ करना, प्रातःकालीन अग्निहोत्र करना, प्रकाश और सुगन्ध में अपने जीवन को ले जाना और दर्शनों का अध्ययन करना कि हमारा मानवीय कर्त्तव्य क्या है। अपने को जब तपायमान कर देता है, तो दूसरा प्राणी भी तपायमान हो जाता है। बाल्य बालिका तपों में परणित हो जाते हैं, अथवा निश्चित हो जाते हैं। विचार विनिमय क्या? बेटा! देखो,! विशाखा वायुमण्डल केवल पानी से प्रारम्भ होता है इसीलिए वाणी में नम्रता के उद्गार होने चाहिएँ। जिससे बाल्य कहें कि मेरे माता पिता बड़े प्रसन्न हैं। वह अपने में कितने उदार हैं, कितने उद्गीत गाने वाले हैं। मेरे पुत्रो! मल्दालसा जब वेदों का गान गाती थी, उसके बाल्य बालिका प्रातःकालीन जब साम गान गाती रहती, तो ब्रह्मचारी बालक उनके समीप विद्यमान हैं, माता के उद्गारों को श्रवण करके गृह को वह पवित्र बना रही हैं, गृह में वायुमण्डल पवित्र बन रहा है। बाह्य जगत् और अन्तर्जगत दोनों ऊँचे बन रहे हैं। तो स्वर्ग की कल्पना करने वाला आचार्य कहता है, वेदमन्त्र कहता है कि हमारे यहाँ स्वर्ग होना चाहिए।

मुझे स्मरण है भगवान् मनु के यहाँ महाराजा अद्यु का जीवन, जब उनके साहित्य में प्रवेश करते हैं तो वह प्रातःकालीन वेद का अध्ययन करते हैं। समुद्रों के तटों पर विद्यमान हो करके उपासना करते हैं, राष्ट्र में प्रजा उनके अनुकूल बरतने लगी, इस प्रकार राष्ट्र पवित्र बन गया। जब तक मानव का आचरण, मानव की प्रतिभा ऊँची नहीं बनेगी, वह मानव यह कल्पना करे कि मैं स्वर्ग में चला जाऊँ यह असम्भव है। तो मैं विचार दे रहा हूँ कि बालक नचिकेता! गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करना यह हमारे यहाँ स्वर्ग कहलाता है। मेरी प्यारी माता भोजनालय में भोजन का निर्माण कर

रही है, परन्तु वेदों के मन्त्रों को उद्गीत रूप में गान गा रही है, परमपिता परमात्मा का स्मरण हो रहा है। तो वह माता के हृदयों की त रंगें, माता के हृदय की प्रतिभा, बाल्य का उस अन्न के द्वारा निर्माण हो रहा है। मुनिवरों! यह जो भगवन्! परमपिता परमात्मा का अनुपम जगत् है, यह तरंगेंवादों का कहलाता है, यह तरंगेंवाद है, र्स्वत्र तरंगों में निहित हो रहा है, जगत् यह तरंगेंवाद है, प्रत्येक विचार तरंगित हो रहे हैं, अपने में तरंगित होते अपने में आभा में नृत्य हो रहे हैं। तो मैं गार्हपथ्य नाम की अग्नि का, अग्नि के सम्बन्ध में उद्गीत गा रहा हूँ। मुझे स्मरण है जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अपने पितरों के द्वारा अपने में अध्ययन करते थे, तो माता लोरियों का पान करती रहती और वह वेद मन्त्रों के उद्गीत गाती रहती, मानव संस्कार बनाती रहती उन्हीं संस्कारों के आधार पर मुनिवरों! मानव का जीवन मानवीय क्षेत्रों से उपरान्तता को प्राप्त हो करके, मुनि की कोटि में चला जाता है। वह ऋषि मुनियों की प्रतिभा में चला जाता है।

तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रो! मैं विशेष्ज्ञ विवेचना तो तुम्हें देने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, केवल परिचय देने चला आता हूँ और वह परिचय क्या है? यमाचार्य के वाक्यों को उद्धृत प्रगट कर रहा हूँ जो उन्होंने कहा है, उन्होंने कहा है कि गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करो। गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन हम भी करते हैं प्रातःकालीन करते हैं, परन्तु ब्रह्मचारी महान् बन जाते हैं, तपश्चर बन जाते हैं। उन्होंने कहा कि मुझे स्मरण है हे नचिकेता! एक समय हम अपने कुटुम्ब के सहित अपने बाल्यों सहित भ्रमण करते पर्वतों की कन्दराओं में चले गए, वहाँ एक सौमकेतु, सौभनी ऋषि महाराज अपने में याज्ञिक बने हुए थे, और वह अपने आत्मा के इन्द्रियों का साकल्य बना करके अपने में याग कर रहे थे, अपना याग करते हुए हमने कहा, प्रभु! यह क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा मैं नाना साकल्य को अपने अन्तर्हृदय, इन्द्रियों के साकल्य बना करके, हृदय रूपी यज्ञशाला में मैं याग कर रहा हूँ। मैं हृदयरूपी यागों में प्रतिष्ठित हो रहा हूँ। जब इस प्रकार का हमने श्रवण किया, तो वहाँ 12 वर्ष हमने भी इस प्रकार अनुष्ठान किया और 12 वर्षों तक इन्द्रियों के साकल्यों को एकत्रित करके याग किया। हमारा जीवन मृत्यु के लिए व्याकुल हो गया, कि मृत्यु से पार होना चाहिए।

तो हे नचिकेता! हम मृत्यु से पार हो गए। इसी प्रकार हमें सब को मृत्यु से पार का नाम ही ज्ञान और विज्ञान कहलाता है। जब इस प्रकार के उन्होंने नचिकेता को वाक्य प्रगट किए, उनको क्रियाशील रात को बृही ब्रताम् देवाः क्रियाशील बनाने का उपदेश दिया, तो नचिकेता ने वह स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु आपने हमारे विज्ञान की प्रतिभा को समाप्त कर दिया है हम बड़े प्रसन्न हैं युक्ताम् भविताम् लोकाम् हृरणायम् वथा जब उन्होंने यह वाक् प्रगट किया कि हमारा जीवन एक महानता की ज्योति में प्रवेश हो जाना चाहिए, तो नचिकेता मौन हो गया और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आपने हमें स्वर्ग में ही नहीं, आपने तो हमें मृत्युञ्जय बनाने की एक पगडण्डी का पथ दिया है, आपको धन्य है। यहाँ आ करके नचिकेता मौन हो गया और मौन हो करके उन्होंने यज्ञशाला का अपना क्रिया कलाप वर्णन किया। गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन, अग्नि देवतव को प्राप्त कराती है, वह देवताओं की आभा कहलाती है, इस प्रकार का उन्होंने जब अपना विचार दिया, उद्गीत बनाने के लिए, तो नचिकेता अपने में मौन हो करके चिन्तन में लग गया। उन्होंने कहा हे नचिकेता मौन होना नहीं है। एक तृतीय अग्नि कहलाती है जिसको आहवनीय अग्नि कहते हैं। जब माता पिता बाल्य बालिकाओं से प्रबल बन जाएँ तो वह भ्रमणाम् ब्रह्म देखो, गृहा वह अपने में अपने को गृह को त्याग करके भ्रमण करना प्रारम्भ करें, और सात्विकता से भ्रमण करते हुए विद्यालयों में अपने अन्न को देते हुए, विद्यालयों की प्रतिभा को ऊँचा बनाते हुए राष्ट्र, समाज और प्रजा को ऊर्ध्वा में गति कराते हुए, उस अग्नि का पूजन करना चाहिए। वह आहवनीय अग्नि कहलाती है, जो गृह को त्याग करके अपने में अग्नि का पूजन करना है, उस अग्नि के पूजन करने का नाम ही स्वर्ग कहलाता है हे नचिकेता! वह तीन प्रकार की अग्नि कहलाती हैं, इन तीनों प्रकार की अग्नि के पूजन करने का नाम यह स्वर्ग कहलाता है। तुम स्वर्ग में जाना चाहते हो, तो स्वर्ग के लिए तुम्हें तीन प्रकार की अग्नि का पूजन करना होगा। अग्नियों का पूजन करने वाला स्वर्ग में चला जाता है। इतना उच्चारण करके वह मौन हो गए, उन्होंने मौन हो करके अपने में सांत्वना को प्राप्त किया। नचिकेता ने कहा प्रभु! आपने इसमें बहुत कुछ स्वर्ग की कल्पनाएँ कीं। स्वर्ग के लिए

आपने हमें बहुत सा उद्गीत दिया है। हम जानना चाहते हैं कि यह आत्मा शरीर को त्याग करके कहाँ जाता है? यह मेरा तीसरा प्रश्न है। उन्होंने यह वाक् उच्चारण करके सव्रपा व्रतेः नचिकेता ने वाक् उच्चारण करके मौन हो गए और यमाचार्य ने कहा यह विचार हमारा कल प्रगट होगा। यह विचार हमारा कल प्रगट होगा।

आज का विचार हमारा अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या है? हमारे वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय है कि समाज को अपनी अपनी धाराओं को जान लेना चाहिए। प्रत्येक स्थान में अग्नियों का पूजन करना चाहिए। पूजन का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक वस्तु को जान करके उसका सदुपयोग करना, उसको क्रिया में लाना, यही सदुपयोग और उसका पूजन कहलाता है। पूजन का अभिप्राय मैंने कई काल में तुम्हें उच्चारण किया था। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। स्थान : लाजपत भवन, चण्डीगढ़ समय : सायं 6 बजे

५ 31 07 1985 पुष्प 49 प्रभु की सर्व व्यापकता

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण करते चले जा रहे थे, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महान और उसके व्यापकता का वर्णन आ रहा था। क्योंकि संसार की कोई स्थली ऐसी नही है जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो। समुद्र की कोई भी तरंग ऐसी नहीं है, पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं है, जहाँ वह प्रातःकाल की पवित्र अग्नि बन करके इस संसार को ज्योतिमयी बनाता रहता है। मानो वह कितना अनुपम है जो सर्वत्रता में एक ज्योति है। हमारा वेद का मन्त्र ये कहता है कि हे प्रभु! तू प्रातःकाल की अग्नि बन करके हमें आप प्रकाशित कर रहे हैं, क्योंकि तेरा जो अनुपम प्रकाश है, वह प्रातःकाल की पवित्र अग्नि कहा जाता है। अग्निमयी ज्योति बन करके, तू प्राचीदिक् बन करके ही, हमें अनुपम प्रकाश दे करके, मानो तेरा ही अनुपम यह प्रकाश हमें दृष्टिपात आ रहा है, मानो जब हम प्राची से द्वितीय दिशा को गति करते हैं, तो हम प्रायः हम दक्षिणायन में पहुंच जाते हैं। दक्षिणायन में जब जाते हैं, तो प्रभु! तुम इन्द्र बन करके हमारे जीवन को ज्योतिमयी, प्रकाशमयी बनाने वाले हो। तुम इन्द्र हो, इन्द्र जहाँ परमपिता परमात्मा को कहा जाता

है, वहाँ इन्द्र नाम विद्युत् को कहा गया है। वह जो विद्युत है वह इतनी पवित्र है, मानो जब वह विद्युत द्यौ बन करके दिशाओं की प्रतिभा, जल के परमाणुओं को ले करके, वह प्रातःकाल की आभा में, क्या, क्योंकि उस प्रभु का तो सर्वत्र काल ही प्रातः है। वह मानो देखो, दक्षिणायन से जब उत्तरायण को परमाणुवाद गति करता है, तो वह समुद्रों से जलों को ले करके, आप ही प्रभु! इन्द्र बन करके धीमी धीमी वृष्टि प्रारम्भ कर देते हैं। वही वृष्टि मानो देवतव को प्राप्त हो करके, नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म दे देती है। मानव का जीवन प्रफुल्लित हो जाता है, आनन्दवत् में ग्रहण करने लगता है और यह कहता है कि हे व्यंजनों वाली! हे दक्षिणायन! मानो तू हमारे जीवन को प्रकाश्मयी पहुंचा रही है। परन्तु वह जो प्रभु है, वह इन्द्र बन करके रहता है, प्रातःकाल में जब इन्द्र बन करके रहता है। वही इन्द्र मानो वृष्टि के मूल में रहता है, दिशाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला है। तू दक्षिणायन से उत्तरायण को गति करके ही सोम की वृष्टि करता है। बेटा! सोम को ऋषि मुनि अपने में ग्रहण करते रहते हैं। प्रातःकाल को जब सोम की उपासना करते हैं, ब्रह्मे वाचो देवा अस्ते बेटा! वही तो उत्तरायण में मानो सोम बन करके रहता है। विचार क्या, मेरे पुत्रों! उत्तरायण में अग्नि बन करके प्रभु प्रकाश के द्यौतक हैं और दक्षिणायन में इन्द्र बन करके मानो देखो, वह वृष्टि के सोम को, वृष्टि के रूप में बेटा! सोम को उत्तरायण में प्रदान कर देते हैं। मानो देखो, वही उत्तरायण में गति करता हुआ मानो वही परमाणु वही मंगलम ब्रह्मा वह प्रतीची दिक् में प्रवेश कर जाता है। देखो, वह जो प्रतीचीदिक् है वही तो अन्नाद का भण्डार कहा जाता है।

हे प्रभु! तुम कितने वैज्ञानिक हो, हे प्रभु! तुम कितने महान् हो, मानो देखो, वही सोम वही मानो दक्षिणायन से गति करता हुआ परमाणुवाद जब परिक्रमा की इस आभा में रत्त होता है। तो वही मानो देखो, पश्चिमायन दिशा में अपने में प्रतीचीदिक् बन करके, जब प्राचीदिक् बन करके मानो देखो, सोम की क्या वह अन्न के रूप में प्रतीची मानो वह वरुण बन करके रहता है। वरुण हमारे वैदिक साहित्य में वरुण नाम बेटा! जल को भी कहा गया है। वरुण नाम प्रभु को भी कहा गया है और वरुण नाम प्राचीदिक् दिशा को भी कहा गया है। मानो देखो, वह एक उदीची कहलाता है। उसमें उदीची,

उदीचीदिक् रहने वाला है। मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे ऐसा स्मरण है क्या, मानव वही तो मुनिवरों! अन्न की प्रतिभा में रत्त रहने वाला बेटा! वरुण कहलाता है। हे वरुण! तू आ, हमें मानो तू हमारे भण्डार में परणित हो जा, हमारे बुद्धियों का जो निर्माण करने वाला, अन्नाद है जिससे मन की प्रतिभा का जन्म होता है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनि, जब इस अन्नाद के ऊपर मानो देखो, इस वरुण के ऊपर अनुसन्धान करने लगते हैं तो अनुसन्धान करते करते बहुत दूरी चले जाते हैं। विचारते रहते हैं कि यह कैसा अनुपम है, मानो यही तो बुद्धि का प्रतिनिधि है, यही तो मन की धाराओं को जन्म देने वाला है। बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता है कि एक समय शोभनी ऋषि महाराज, भयंकर वनों में विद्यमान हो करके, वरुण की उपासना करने लगे, वरुण के ऊपर अनुष्ठान करने लगे। प्राचीदिक् के ऊपर अनुष्ठान करने लगे, क्या मैं अन्नादि को ही पवित्र पान करना चाहता हूँ। तो मानो देखो, वह नाना वृक्षों के रूप में, मेरे पुत्रों! स्थावर सृष्टि के गर्भ में जब प्रवेश हुए, तो उन्होंने कुछ औषधियों का प्राप्त किया। उन औषधियों को वह जल में विलीन करके, अग्नि में तपा करके जब पान करते रहे तो बेटा! बुद्धि पवित्र बन गई, बुद्धि सूक्ष्मतम बन गई। मुनिवरों! देखो, जब अहिंसा के आँगन में मानव प्रवेश करता है, अहिंसा की प्रतिभा में प्रवेश करता है तो वह वरुण की उपासना करता हुआ और वरुण ब्रह्मे अन्नादां भूतं बेटा! वही तो अन्न कहलाता है, वही तो अन्नाद है। यह जो महान वृत्ति देवाम् मेरे प्यारे! देखो, जब सोम को ले करके गति करती है तो वही अन्नाद् मेरे प्यारे! प्राचीदिक् बन करके हम, मुनिवरो देखो, उसी में रत्त हो जाते हैं। शोभनी ऋषि महाराज ने इसके ऊपर अपना अन्वेषण किया है अथवा विचार दिया है कि यह नाना प्रकार के बाह्य साकल्यों को जन्म देने वाली है, मानो यही प्राचीदिक् है यही मुनिवरों! वरुण है, जो प्राण का द्यौतक कहलाता है। जैसे मुनिवरों! देखो, गो को दुहने वाला, दुग्ध को प्राप्त करता रहता है इसी प्रकार वरुण को दुहने वाला, वरुण को अपने में धारण करने वाला, मेरे पुत्रों! देखो, अन्नाद् को अपने में ग्रहण करता रहता है। अन्नाद् को ग्रहण करके उसको प्रकृति को दुहता रहता है अपने में, प्राची में प्रवेश कर जाता है। वह वरुण स्वावं ब्रह्मे वरुण को प्रभु की आभा में दृष्टिपात करने लगता

है। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने अश्रुतम् ब्रह्मवाचाः शोभनी ऋषि महाराज ने इन्हीं साकल्यों को ले करके अग्नि को प्रदीप्त किया और अग्नि को प्रदीप्त करके मानो देखो, यज्ञां भविते लोकाम् बेटा! वह याग में परणित हो गए, याग में परणित हो करके नाना प्रकार के रूपों में, साकल्यों को अग्नि में प्रदान किया, तो जब उनका भेदन हुआ, परमाणुवाद का भेदन हुआ। तो मुनिवरों! देखो, वह दिशाओं को पवित्रतम करता चला गया।

तो विचारने से प्रतीत हुआ, कि मानो देखो, यह जो वरुण है वे जहाँ प्रभु है वहाँ अन्नाद् है जो मन को, बुद्धि को दोनों को पवित्र बनाने वाला है, अन्तःकरण में, चित्त के मण्डल में, जो नाना प्रकार के संस्कारों की उपलब्धियों होती रहती हैं, उन उपलब्धियों में अशुद्धियों को नष्ट करने वाला है। मानो देखो, यही जब अनुष्ठान के रूप में इनको पान करते हैं और जब इनकी शरण में जाते हैं तो मानो देखो, वह मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण कर लेते हैं। क्योंकि मोक्ष की पगडंडी किसे कहते हैं? जो प्रभु के द्वार पर जाने का एक मार्ग है, एक पगडंडी है, वह शोधन करते करते अपने जीवन को वह महान् बनाते रहते थे। तो मानो देखो, वही, जब वरुण के समीप जाते हैं तो उसके पश्चात् हमें सोम की प्राप्ति हो जाती है। मेरे पुत्रों! तुमने दृष्टिपात किया होगा, जब प्रातःकाल में आचार्य के समीप विद्यमान होते हैं, आचार्य उस समय मानो अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, मानो देखो, वह अग्निहोत्र करके, जब वह सोम की वृष्टि करते हैं। मानो देखो, आचार्य क्या, पुरोहितजन जब गृहस्वामी के द्वार पर पहुंचे तो गृहस्वामिनी से कहते हैं, हे गृहस्वामिनी! आओ, तुम सोम का पान करो। तो मुनिवरों! देखो, वह सोम का पान करने के लिए तत्पर हो जाती है और वह वेद की ध्वनि में ध्वनित करने लगते हैं और कहते हैं प्रातं ब्रह्मे मामब्रव्हे वृणास्तुं लोकां सौम व्रतं ब्रह्मा वाचपृही लोकाम् देवाः मेरे प्यारे! देखो, वह कहते हैं उदीची सोमो ब्रह्मा हे उदीची के पान करने वाले! आ, तू सोम को पान कर, उदीची कहते ऊर्ध्वा में गति करना, जब वह ऊर्ध्वा में गति करता है। कौन कर रहा है? जब पुरोहितजन मानो गृहस्वामी और गृहस्वामिनी के समीप पहुचते हैं, तो मानो देखो, वह जैसे आचार्य प्रातःकाल की पवित्र बेला में, अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारी से कहता है, हे ब्रह्मचारिष्यामि! आओ, तुम

गृहस्वामिनी और गृहस्वामी के सम तुल्य बन करके मानो तुम सोम का पान करने वाले बनो। क्योंकि ब्रह्मचारी ही सोम का पान करता है, जो ब्रह्मचरिष्यामि बनता है, वही सोम को ग्रहण करता है। बेटा! सोम के कई रूप हमारे वैदिक साहित्य में माने गए हैं। एक तो सोम बेटा! पृथ्वी को कहते हैं, जब पृथ्वी मानो देखो, ऊष्णता में बन जाती है मानो देखो, उस समय वह सोम के लिए उपासना करती है और पृथ्वी कहती है, हे देव! मुझे सोम की वृष्टि कराओ, क्योंकि आप मेरे स्वामी हैं। तो स्वामी बन करके क्योंकि मेरे ही शरीरां अमृतम् व्यंजनों को जन्म देने के लिए, मुझे मेरे द्वारा सोम की वृष्टि करो। एक तो सोम का दृष्टिकोण आचार्यों ने ये स्वीकार किया है कि जब धीमी वृष्टि हो जाती है, मानो मेघ मण्डलों से सूर्य उसका स्वामी बन जाता है, सूर्य पृथ्वी को सोम देता है। वह जब सोम देता है तो यह नाना प्रकार की सृष्टियों का जन्म हो जाता है। मानो देखो, कहीं स्थावर उत्पन्न हो जाता है, स्थावर में नाना प्रकार के भेदन हैं। आयुर्वेद की दृष्टि से जब मानो देखो, ये विचारा जाता है कि यह जब सोम की वृष्टि चाहती है, सोम को पान कर लेती है।

तो मानो देखो, एक समय मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि प्रातःकालीन मानो देखो, त्रेता के काल में, राजा रावण के राज पुरोहित मानो स्वाति मुनि महाराज और मानो देखो, वह उनके वैद्यराज सुधन्वा दोनों प्रातःकाल एक स्थली पर विद्यमान थे। जब विद्यमान थे थे तो इतने में उनके विधाता कुम्भकरण ने आ करके यह कहा मंगलो घोषं वृहीव्रताम् हे वैद्यराज! मैं यह जानना चाहता हूँ, मैं प्रातःकालीन आज वेदमन्त्रों का उच्चारण अपने में अध्ययन कर रहा था। मैंने ये श्रवण किया है क्या, जब यह मेरा प्रश्न, जब मुझे संशय बन गया है कि जब यह पृथ्वी सोम को पान कर लेती है, उस समय पृथ्वी के गर्भ से तीन वस्तुओं का जन्म होता है। तो मेरे पुत्रों! ऐसा महात्मा सुधन्वा ने यह कहा। वैद्यराज ने यह कहा, हे राजकुमार! मैं यह जानना चाहता हूँ कि जब यह सोम को पान कर लेती है तो कौन सी वस्तु को जन्म नहीं देती? उन्होंने कहा, प्रभु! उनको मुझे गणना में लाइये। उन्होंने कहा, चारों प्रकार की सृष्टियों का जन्म दे देती है। अब चारों प्रकार की सृष्टियों के मानव द्वितीय में पञ्चम सृष्टि का कोई वर्णन नहीं आता। कहीं भी

वैदिक साहित्य में पञ्चम सृष्टि का वर्णन नहीं आता। जब पञ्चम सृष्टि का वर्णन ही नहीं आता, तो मैं उसको उद्गीतत में कैसे गा सकता हूँ। जब सुधन्वा ने यह वाक् प्रगट किया, तो मानो देखो, वह मौन हो गए और यह कहा कि जब यह पृथ्वी नाना प्रकार के सोम को पान कर लेती है तो यह चारों प्रकार की सृष्टियाँ उद्बुद्ध हो जाती हैं, जिसको हमारे यहाँ देखो, स्थावर के रूप में नाना प्रकार का वनस्पति विज्ञान है। मानो उसी के द्वितीय रूप में अण्डज सृष्टि का प्रादुर्भाव हो जाता है। अण्डज सृष्टि के पश्चात् मानो देखो, वही तरंगे पृथ्वी की तरंगें मानो देखो, प्रत्येक प्राणियों के हृदय में प्रवेश हो करके एक प्राणी, प्राणी के गर्भ में प्रवेश हो करके मानो यह नाना व्यंजनों को जन्म देने वाली, यही तो सोम वृष्टि कहलाई जाती है, यही तो सोम कहलाता है। महात्मा सुधन्वा वैद्यराज ने कहा, कि एक समय बहुत पुरातन काल हुआ, जब मेरी आयु युवा थी, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा औषध विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान कर रहा था, औषध विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान करता हुआ मैं एक समय पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा मानो भयंकर वन में हिमालय के द्वार पर पहुंचा। जब हिमालय में मानो देखो, एक अश्वतं वज्र का स्वाति था, मानो देखो, उसके मध्य में एक स्थावर वृक्ष विद्यमान है। मैंने कहा, भगवन! यह कौन सा वृक्ष है, कौन सी वनस्पति है? उन्होंने कहा, यह वो वनस्पति है जिसको पान करने से मानव के हृदय में, मानव के शरीरों में नाना प्रकार की उज्ज्वल तरंगों का जन्म हो जाता है। इसको पान करता हुआ मानव अपनी प्रवृत्तियों को स्थिर बना लेता है। योगी पान करता है, तो अपनी प्रवृत्तियों को स्थिर बना लेता है। वैद्यराज पान कर लेता है, तो वैद्यराज की बुद्धि प्रखर बन जाती है। देखो, माता पिता इसको पान कर लेते हैं। तो बाल्य ब्रह्मचारियों को ऊर्ध्वा में शिक्षा देना प्रारम्भ कर देते हैं। मानो देखो, रुग्ण वाला इसको पान कर लेता है, तो सर्वत्र रुग्ण उसके समाप्त हो जाते हैं। मानो देखो, ये जब मेरे पूज्यपाद ने मुझे यह वाक् प्रगट किया, तो मैं यह विचारने लगा कि यह वनस्पति विज्ञान तो बड़ा विशाल है, मानो स्थावर सृष्टि तो एक प्रकार का विशाल वन है। मैं इस वन में जाने के लिए मानो देखो, व्रतीमबृहा तो उन्होंने कहा कि हे पुत्र! यह सेमलता कहलाती है, इसे हम सोम कहते हैं इसके प्रत्येक अंग को ले

करके जब अग्नि में तपा करके हम एक वर्ष तक पान कर लेते हैं तो योगी की प्रवृत्ति मानो देखो, देखो, स्थिर बन जाती है। जब माता पिता पान कर लेते हैं तो उनके गृहों में एक पुष्पों की उत्पत्ति हो जाती है। इसी को पान करने वाला अपने में वैद्यराज की बुद्धि देखो, नाना प्रकार की औषधियाँ अपने गुणों का वर्णन करना प्रारम्भ कर देती हैं। यह सोम सब लताओं में और स्थावर सृष्टि में मानो यह सबसे प्रथम यह सबका धिराज कहलाता है। तो इस प्रकार वह बोले कि जब मेरे पूज्यपाद ने मुझे यह वर्णन किया। तो मैंने इसका अनुसन्धान करते हुए मानो इसका पान किया बारह वर्ष का मैंने तीन तीन समय अनुष्ठान किया। तो मेरे विचार में यह आ गया कि स्थावर सृष्टि के विज्ञान को जानने वाले मानो देखो, इस प्रकार का क्रियाकलाप बनाते रहते हैं।

मानो देखो, बेटा! मैं सुधन्वा के उस काल में तो जाना नहीं चाहता हूँ, मैं औषधि विज्ञान में भी नहीं जाना चाहता हूँ। विचार केवल यह देना चाहता हूँ क्या मुनिवरों! सोम की वृष्टि करने वाला एक तो वह सोम कहलाता है, जो बाह्य जगत् में सोम को पान करने वाले हैं, वह अपनी अपनी दिशाओं को प्राप्त कर लेते हैं। एक सोम यह आध्यात्मिकवादी कहलाता है, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जब मानो देखो, इस मंगलं बृहे जब उदीची में प्रवेश करता है, उदीची दिक्सौमं ब्रह्म वाचाः उदीचीदिक् सोम का पान करता है, वह ऊर्ध्वा में गति उड़ान उड़ता हुआ वह उदीची में प्रवेश कर जाता है। मेरे पुत्रों! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि जब मानो देखो, भगवान कृष्ण जब ब्रह्मेव्रताम् जब वहाँ अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा वह अध्ययन करते थे, तो वह भी यही कहा करते थे कि प्रभु! मैं आध्यात्मिक सोम का पान करना चाहता हूँ। तो मानो देखो, संदीपन ऋषि महाराज ने मंगलम! ब्रहे वाचो देखो, उन्होंने उसका उपदेश दिया। यह वाक् मैंने तुम्हें कई काल में प्रगट भी कराया है। मानो देखो, वह सोम का पान कराते रहते थे, आध्यात्मिकवाद क्या, दर्शनों की प्रतिभा में, दर्शनों की भाषा में, अपने आत्मा और परमात्मा के समन्वय की चर्चा करना, मानो देखो, वह दोनों का जब संग्रहण होता है, दोनों का सम्मिलान होता है, उसके घर्षण से जो झरनियाँ झरती हैं, उसको सोम कहते हैं जैसे बेटा! देखो, हमने एक अध्ययन किया, मानो देखो, हमने अध्ययन किया

है उदीचीदिक् सोम, जब हम उदीची ऊर्ध्वा में उत्थान करके सोम को हम पान करेंगे तो सोम के पान करने से जो हमें प्राप्त होगा उसको बेटा! अमृतमयी सोम कहा जाता है, उसको सोम कहते हैं। योगीजन जब अपने पूज्यपाद गुरुओं के चरणों में विद्यमान हो करके मानो गृहस्वामिनी, गृहस्वामी अपने पुरोहित के मानो संरक्षण में, आचार्यों के संरक्षण में उनके चरणों की वन्दना करते हुए मानो वह सोम का पान करना चाहते हैं। मानो जैसे याग प्रारम्भ करने वाला याज्ञिक जब मानो नाना प्रकार के साकल्यों को ले करके याग करता हे, नाना साकल्यों का याग करके और जब उससे सुगन्धि उत्पन्न होती है, वह भी तो सोम कहलाता है। जैसे मुनिवरों! देखो, प्राण, अपान दोनों का मिलान करता हुआ, दोनों को एक सूत्र में लाता है, तो मानो देखो, इस ब्रह्माण्ड को खिलवाड़ जान करके वह उसका दिग्दर्शन करने लगता है। वह भी मानो देखो, सोम कहलाता है। तो सोम की ऊर्ध्वा में गति करने वाला मेरे पुत्रों! देखो, एक महान् कहलाता है। वेद का याचक कहता है, भक्तजन कहता है, ऋषितव कहता है, हे प्रभु! आप तो सोम हैं। मेरे अन्तर्हृदय में आप समाहित रहते हैं, मानो मेरे हृदय में जब आप समाहित हो जाते हैं और मैं आपको जान लेता हूँ, तो मैं आपको सोम जान करके ही मानो उसका मैं पान करता रहता हूँ। मैं पान करता हुआ, अपने में धन्य बन जाता हूँ, अपने में सौभाग्यशाली बन जाता हूँ, तो आप भगवन्! सोम कहलाते हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, वही सोम मानो देखो, मेघ मण्डलों की वृष्टियों में प्रारम्भ होने लगता है, जब मानो देखो, याज्ञिक के हृदय में ये एक विडम्बना उत्पन्न हुई कि मैं बाह्य जगत् में, सोम को पान करना चाहता हूँ, तो वह मानो देखो, वृष्टि याग के काल में प्रवेश कर जाता है। जब वृष्टि याग के कर्म काण्ड में प्रवेश कर जाता है, अपनी विचित्र भावनाओं को विशुद्ध बना करके, मानो ग्रीष्म ऋतु के समाप्त होने पर, जब वह मानो सूर्य की किरणों, वो जो भासने वाला है, किरणों जहाँ टेढ़ी अपने रूप रेखा से, द्वितीय रेखा का जब परिवर्तन होता है, तो मानो समुद्रों से जलों का उत्थान हो जाता है। जल का जहाँ उत्थान हुआ, तो मानो देखो, वही सोम प्रमाणां बृहे लोकाम् मुनिवरों! देखो, वह उससे मेघों की उत्पत्ति हुई, मेघ बना है और मेघ बन करके ही ही मानो उसे वैदिक

साहित्य में वत्रासुर भी कहते हैं। उसको मानो देखो, वत्रासुर दैत्य को कहते हैं परन्तु यहाँ प्रकरण के आधार पर, वह वत्रासुर मेघ को कहते हैं, जब मेघ मानो ब्रह्मे देखो, अन्तरिक्ष में जब इन्द्र से ऊँचा समागम होता है इन्द्र से मिलान होता है तो इन्द्र और मानो व्रहे वाचन देखो, वत्रासुर दोनों का संग्राम हुआ तो धीमी धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो गई मानो देखो, वही वृष्टि देखो, सोम कहलाती है। जो पृथ्वी उसे पान करती है, प्राणीमात्र पान कर रहा है, चारों प्रकार की सृष्टियाँ पान कर रही हैं तो मेरे पुत्रों! वह सोम बन गया है। वह कैसा पवित्र सोम बन गया, मानो देखो, इन्द्रो समावृणां ब्रह्मे सोमाः मंगलम् व्रत्तीहि मेरे पुत्रो! देखो, दोनों के सन्निधान से ही मुनिवरों! देखो, यह परमात्मा को अनुपम सृष्टि का प्रादुरूप बन करके सोम की वृष्टि के मूल में प्रवेश हो गया है। तो मेरे पुत्रों! इसे ही तो हमें पान करना है। यही सोम शिशु के रूप में रस बन करके ही मुनिवरों! वह गृह अस्वत बन करके, गृह के प्रकाश का मूलक बन जाता है।

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशष विवेचना में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ, क्योंकि मैं व्याख्याता नही हूँ। केवल परिचय देना ही हमारा कर्त्तव्य है। क्योंकि परिचय क्या है, प्रभु के ज्ञान और विज्ञान का क्योंकि परिचय देना यह हमारा कर्त्तव्य है, क्योंकि परमात्मा की इस अनुपम सृष्टि में रचनाकार के आगे कोई बुद्धिमान नहीं है, संसार में। क्योंकि वह केवल उसका परिचय दे सकता है। जितना वह जानता है, पूर्ण रूपेण जब जानने लगता है तो मुनिवरों! सोम में सोम की प्रतिष्ठा हो जाती है। वे प्रभु सोम हैं, जानने वाला आत्मा सोम बन जाता है, सोम, सोम में प्रवेश हो करके दोनों मौन हो जाते हैं। तो मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा में जाना नहीं चाहता हूँ विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, उदीचीदिक् सोम, उदीची को प्राप्त होने वाला ही सोम कहलाता है, जिसको पान करके हमारा जीवन एक माहनता में परणित हो जाता है।

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, मैं अग्रणीय रूपों में गृह मानो वाचन्व्रही मुनिवरों! ध्रुवा ब्रह्मे विष्णु वोचवृहे, वेद का वाक् कहता है न्यौदा में मन्त्र कहता है ध्रुवा विष्णु रूपणाः मंगलं वाचसम्भो लोकं वृहे व्राती देवाः मानो देखो, वेद का वाक् कहता

है क्या सम्भूति लोकां विष्णु हे विष्णु! तू ध्रुवा में रहने वाला है, हे विष्णु! तू ध्रुवा में गति करने वाला है, जो संसार में नम्र बन करके चलता है, जो संसार में ध्रुवा में गति करने वाला है, जो अभिमान को त्यागने वाला है, वही तो विष्णु को प्राप्त होता है, वही तो पालनकर्त्ता के समीप जानने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, माता अपने पुत्र के समीप जब जाती है, पालना में प्रवेश होती है, शिशु के तो मानो वह नम्र बन जाती है, वह नम्र बन करके ही मुनिवरों! देखो, उसे विष्णु के रूप में मानो वेद का साहित्य ही विष्णु कहता है।

मेरे प्यारे! देखो, परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ रहने से ही वह नम्र है, निरभिमानी है, निसंकोच है, मेरे प्यारे! पाप से रहित है, इसीलिए वे परमपिता परमात्मा विष्णु कहलाता है। वह पालन करने वाला है, पालना में सदैव रत्त रहने वाला। जो भी संसार में पालन करने वाला है उसकी गति ध्रुवा में रत्त रहती है जैसे वृक्ष पर मानो नाना प्रकार के फलों की उपलब्धियाँ जब हो जाती हैं, तो मानो देखो, वृक्ष अपने आप ही मुनिवरों! देखो, उसकी ध्रुवागति बन जाती है और जब वह ध्रुवा में गति करने लगता है तो मुनिवरों! देखो, वह विष्णु के रूप में परणित हो जाता है, वह विष्णु कहलाता है मानो देखो, राजा नम्र बनेगा, तो प्रजा का पालन कर सकेगा, मानो देखो, उस रूप में वह विष्णु कहलाता है, माता नम्र बनेगी, नम्रता से ही वह पालन करती है। मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा क्योंकि स्वाभिमानी अवृणाम् ब्रह्मे लोकाम् वह स्वाभिमानी है, अपने में नम्र है, अपने में ध्रुवा में है, तो विष्णु कहलाता है। जैसे सूर्य की नाना प्रकार की किरणें मानो ध्रुवा में आती हैं, तो पृथ्वी के ऊपर नाना प्रकार की धातुओं और व्यंजनों को जन्म देने वाली बन जाती हैं, वही तो पालन कर रहा हूँ, निर्माणकर्त्ता है, पालना कर्त्ता है, नाना रत्नों और स्वर्ण की धातु का निर्माण करने वाला है। मानो देखो, वह सूर्य ऊर्ज्वा को ले करके ही प्रकाश के देने वाला है। वह विष्णु कहलाता है, वह द्यौ से प्रकाश लेता है, वह विष्णु बन जाता है। मानो विष्णु का अभिप्रायः यह जो पालन करने वाला है। पालन करने वाली माता विष्णु बन करके रहती है नम्रतां ब्रह्मे कृतो कृतोषम् ब्रह्म लोकाम् मेरे पुत्रों! यह विष्णु ध्रुवा में रहता है, अभिमान में मानव की बुद्धि

का ह्रास हो जाता है। अभिमान करने वाला प्राणी मानो पालना नहीं कर सकता, अभिमान करने वाला प्राणी अपने में ही अपनेपन को नष्ट करता रहता है, अपने को ही नष्ट करता रहता है क्योंकि वह दुराग्राही बनने वाला प्राणी अपनेपन को समाप्त कर देता है। मानो वह परमात्मा के समीप जाने वाला है, जो उसका उद्देश्य है, वह समाप्त हो जाता है।

मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज प्रातःकाल की पवित्र बेला में विष्णु के ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करने लगे। महर्षि लोमश मुनि बोले हे कागाम्! वृतं ऋषिवर मानो यह विष्णु कैसा है? तो कागभुषुन्ड जी कहते हैं हे ऋषिवर! यह जो विष्णु है यह पालन करने वाला हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान हो करके, हमें विशुद्ध प्रेरणा प्रदान करता रहता है। उसी प्रेरणा को हम पान करते हुए अपने में देखो, नम्र बन करके, हम योगाभ्यास करते हैं। हम प्राण और अपान को मिलान में लाते रहते हैं। प्राण और अपान में हम याग करते रहते हैं और अपने अन्तर्हृदय में विष्णु का दर्शन करते रहते हैं। मानो देखो, वह विष्णु पालन करने वाला है। इसीलिए उसे हम विष्णु के रूप में परणित करते रहते हैं। कागभुषुन्ड जी बोले एक समय भगवन! मैं अपने पूज्य पिताजी के और माता के समीप मध्य में विद्यमान था। मैंने अपनी माता से कहा कि माता यह विष्णु कौन है? तो माता ने कहा कि विष्णु परमपिता परमात्मा है। तो मैंने कहा कि बाल्यकाल में क्या, माता विष्णु कौन होता है? उन्होंने उत्तर दिया कि विष्णु वह होता है, जो सर्वज्ञ है। उन्होंने कहा सर्वज्ञता का प्रमाण क्या है? उन्होंने कहा कि सर्वज्ञता का यह है कि जितना भी तरंगवाद है, जितनी गतियाँ है मानो वह अवकाश में हों परमाणुवाद में हों। मानो उसके गर्भ में उसके मूल में वह विष्णु ही विद्यमान है, क्योंकि उसका वह पालन कर रहा है, उसको गतिशील बना रहा है। जब मैंने कहा कि हे माता! मुझे भी वह पालना में ही मेरी भी पालना कर रहा है। उन्होंने कहा हाँ पुत्र पालना वही करता है। उन्होंने कहा मैंने श्रवण किया है कि माता पालन करने वाली है तो तब माता ने कहा नहीं, मुझे भी प्रेरणा देने वाला वे परमपिता परमात्मा विष्णु है। यदि मुझे प्रेरणा नहीं देता तो मैं तुम्हारा पालन

नहीं कर सकती थी। इसीलिए सर्वज्ञता के मूल में वह पालना के रूप में मानो विष्णु ही दृष्टिपात आता रहता है। मेरे अन्तर्हृदय मानो देखो, में जहाँ मेरा अन्तर्हृदय आत्मा है जहाँ अहम् आत्मा हूँ वहाँ उसी के आत्मा के गर्भ में वह विष्णु परमपिता परमात्मा पालन करने वाला विद्यमान है। मानो देखो, वही पितरों के रूप में निहित रहने वाला है। जब मैंने लोमश जी! अपनी माता से यह कहा हे माता! क्या विष्णु को हम स्वीकार कर लें? तो माता ने कहा हे बालक! यदि तुम विष्णु को स्वीकार नहीं करोगे, तो तुम्हारा जीवन अन्धकार में चला जाएगा। मानो देखो, अन्धकार वाला जीवन कैसा होता है देखो, उसमें अहमता आ जाती है वह कहता है, मैं ही पालना करने वाला हूँ, मैं ही मानो देखो, ममं बृहे, जब ममतव आ जाता है तो उसे अभिमान आ जाता है, अभिमान में देखो, वह अपने में लोलुपता में प्रवेश हो करके उसके अभिमान में वह अपनेपन को समाप्त कर देता है। तो मानो देखो, तब से मैंने माता ने जब यह उपदेश दिया, तो मैं विष्णु को इस प्रकार स्वीकार करता हूँ। लोमश जी बोले कि धन्य ऋषिवर! आपका जो सुविचार है वह मुझे बहुत प्रियतम लग रहा है, क्योंकि प्रेरणा के स्रोत में ही वह मेरा देव ही विद्यमान है। जब इस प्रकार मुनिवरों! देखो, यह विवेचना हुई तो विष्णु की विवेचना देखो, व्यापकता में हृदय में समाहित हो गई।

तो विष्णु कौन है? विष्णु कहते हैं पालन करने वाला हो, चाहे वह सूर्य के रूप में हो, चाहे माता के रूप में हो, चाहे पिता के रूप में हो, चाहे चन्द्रमा सोम देता है, अमृत देता है चन्द्रमा के रूप में हो, चाहे वह आपो के रूप में हो, चाहे ऊष्णाता अग्नि के रूप में हो, चाहे वह आपो के रूप में हो, चाहे ऊष्णाता अग्नि के रूप में हो, चाहे वह पृथ्वी के रूप में क्यों न हो, वह सर्वत्र एक पालना करना ही विष्णु का एक क्रिया कलाप माना गया है, मानो वही विष्णु कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार की विवेचना प्रगट की तो मुनिवरों! आगे कहा सम्भवा लोकाम् ब्रह्म वाचाः ऊर्ध्वं ब्रह्म वाचा, ऊर्ध्वं ब्रह्मे वाचाः बृहस्पतम् ब्रह्मेः वृताम्। बेटा! न्यौदा में से मन्त्र मुझे स्मरण आ रहे है। यह न्यौदा में मन्त्र जब पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में विद्यमान होते, तो प्रातःकाल इस प्रकार के मन्त्रों को उद्गीतता के रूप में वह वर्णन कराते रहते थे, स्मरण कराते

रहते थे। बेटा! लाखों वर्षों का जो न्यौदा में मन्त्रों का उद्गीत हम गाते रहते थे। वह स्मरण आता रहता है, मानो वह चित्त के मण्डल में कैसे विद्यमान है। मानो मेरे प्रभु का वह चित्त का मण्डल कितना विशाल है, कितना मानो कोष का स्वामी है, जिसमें वह सर्वत्र विद्यमान है। मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में इन मन्त्रों को पूर्व काल में भी उच्चारण किया, परन्तु देखो, उनमें प्रथम मन्त्रों ब्रह्म मुनिवरों! उदीची सम्भवा लोकाम् ऊर्ध्वा दिक् बृहस्पति, मानो देखो, ऊर्ध्वा में बृहस्पति रहने वाला है। वे बुहस्पति मानो न्यौदा में बहुत से मन्त्र हैं, बृहस्पति के, बृहस्पति सम्भवां लोकाम् ब्रह्मे बृहस्पति रुद्रो गमं ब्रह्मी आत्माः बृहस्पति सञलोकों अस्वताम् शिक्षा भू सम्भवा लोकम् रथी स्वस्तः। मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार बृहस्पति की चर्चाएँ न्यौदा में मन्त्रों में और गृह सूत्रों में भी इसका वर्णन आता है। मानो यह नाना प्रकार की संहिताओं में शाखाओं के रूप में भी इसका वर्णन आता रहा है। बृहस्पति नाम मुनिवरों! देखो, आचार्यजनों को कहा जाता है। साधारण रूप में बृहस्पति नाम आचार्यों का है जो ब्रह्मचारी को अपने गर्भ में धारण करके मानो देखो, उसे अपने तीन दिवस तक गर्भ में धारण करके मानो शिक्षार्थी बना देते हैं। यह एक बड़ी विचित्र वार्त्ता है कि देखो, जैसे माता के गर्भस्थल में शिशु रहता है नौ माह तक, इसी प्रकार तीन दिवस तक आचार्य अपने गर्भ में उसे धारण करता है और विचार आता है कि माता के गर्भ में तो निर्माण होता है, मानो आचार्य के गर्भ में कैसे रहता है? यह पूर्णांग तो मानो देखो, मुझे ऐसा स्मरण है जो आचार्यों ने वर्णन कराया है जैसा उसके ऊपर अनुसन्धान किया गया है। विचित्रताम् भवेलोकाम्, जैसे बृहस्पति है, आचार्यजन हैं। ब्रह्मचारी विद्यालय में प्रवेश हुआ, विद्यालय में जाते ही वह तीन रात्रि मानो देखो, मौन हो जाता है और तीन रात्रि मौन हो करके अपने गर्भ में धारण कर लेता है। गर्भ का अभिप्रायः यह है कि बाल्य उसकी संरक्षता में रहता है, उसी की आज्ञा का पालन करता है। मानो उसकी आज्ञा के बिना कोई भी क्रिया कलाप नहीं करता, जैसे माता के गर्भस्थल में मानो प्रिय बालक पनप रहा है बिना माता की आज्ञा के वह बालक, मानो प्रेरणा के कोई उद्गीत नहीं गाता। परन्तु देखो, वह जो आहार करती वही आहार वह करता है, जो मानव उस क्रिया कलाप बाह्य जगत्

में होता है वही करता है, माता यदि विष देती है उसी को वह पान करता है, मानो यदि माता उष्णा वस्तुओं का पान कर रही तो उसे पान कर रहा है, वह इतना संरक्षण में रहता है। इसी प्रकार देखो, आचार्य के तीन रात्रियों में जो आचार्य क्रिया कलाप करता है, वही ब्रह्मचारी करता है, उसी की आज्ञा का पालन करता है। मानो देखो, आचार्य प्रातःकालीन अपने आसन से पृथक् हुआ, पृथक् हो करके न्यौदा में मन्त्रों का उच्चारण करता तो ब्रह्मचारी भी उसे दृष्टिपात करता है। मानो देखो, वह याग करता है, तो ब्रह्मचारी दृष्टिपात कर रहा है, इन्द्रियों का शोधन कर रहा है तो ब्रह्मचारी उसे पान कर रहा है वह अपने आसन पर विद्यमान होता है तो ब्रह्मचारी भी उसी प्रकार आसन पर विद्यमान हो जाता है। मानो देखो, आचार्य अपने में अन्न पान करता है तो ब्रह्मचारी भी कर रहा है। इसी प्रकार वह आचार्य बृहस्पति के रूप में परणित हो जाते हैं।

अब वह तीन रात्रि, तीन दिवसों की तीनों में यह सर्वत्र जगत् मानो निहित रहता है। तीन रात्रियाँ क्यों हैं? रात्रियों का अभिप्रायः यहाँ यह है कि तीन रात्रियों में मानो तीन प्रकार के अन्धकार मानव के समीप होते हैं। मानो रजोगुण के रूप में, सतोगुण के रूप में, तमोगुण के रूप में, यह तीनों प्रकार तीनों रूपों में मोक्ष की पगडंडी के लिए तीनों अन्धकार के रूप में परणित रहते हैं। इन तीनों में तीनों के लिए तीन रात्रि का उन्होंने गठन किया है। मानो देखो, जैसे तीन ताप होते हैं, उन तीन तापों के लिए भी तीन रात्रि का गठन किया है। उन्होंने आत्मा परमात्मा प्रकृति तीन पदार्थों के रूप में भी तीन रात्रि ली हैं। तो बेटा! मैं कहाँ तक उच्चारण करूंगा, यह तो विशाल बन है। विचार विनिमय केवल यह कि वह बृहस्पतिजन मानो आचार्यजन ब्रह्मचारी को तीन रात्रि अपने गर्भ में धारण करती रहते है और धारण करके मानो उसके जो कि रात्रि में उसे अपने संरक्षण से मानो देखो, शिक्षार्थी बना देती है, गोमेध याग कर देते हैं, चौथे दिवस गो मेध याग होता है और गो मेध, याग का अभिप्रायः यह कि गो मेध, गो नाम अन्धकार का है और मेध नाम प्रकाश का है या मेध अन्धकार को कहते हैं, गो नाम प्रकाश को कहते हैं। यह दोनों शब्द एक दूसरे के पूरक कहलाते हैं, अन्धकार नहीं होगा तो प्रकाश नहीं रहेगा, प्रकाश नहीं होगा तो अन्धकार का कोई मूल नहीं रहेगा,

इसी प्रकार मानो चतुर्थ दिवस में गो मेध याग करके ब्रह्मचारी को शिक्षार्थी बना देना है, वह मानो देखो, उसे उपदेश देना प्रारम्भ कर देता है। हे ब्रह्मचारी! तेरी स्मरण शक्ति मानो तीन रात्रियों में प्रखर बन गई है, विचित्र बन गई है, अब तू मानो देखो, शिक्षार्थी बन। तो मुनिवरों! ऊर्ध्वा ब्रह्म बृहस्पति मुनिवरों! ऊर्ध्वा में कौन रहता है? बृहस्पति रहता है। प्रत्येक मानव ऊर्ध्वा में बृहस्पति है, मेरे प्यारे! बृहस्पति नाम परमपिता परमात्मा का है जो ऊर्ध्वा में प्रेरणा देने वाला है, वही प्रेरक बन करके मानव की ऊर्ध्वा में गति करता है। शिक्षार्थी बनाता है, विचित्र बना देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो बृहस्पति है वह कैसा अनुपम है, कैसा महान है। मुनिवरों! देखो, बृहस्पति ऊर्ध्वा में रहने वाला, ऊर्ध्वा में कौन है, ऊर्ध्वा से सम्मिलान करना बेटा! ब्रह्मचारी के हृदय से किया है, क्योंकि हृदय ही बृहस्पति कहलाता है, सर्वत्र ज्ञान का जो पुंज है स्थिर करने का वह मानव का हृदय कहलाया गया है।

मेरे प्यारे! देखो, पाँच प्रकार की प्रकृति की अनुपम धाराएँ हैं, उन पांचों प्रकार की अनुपम धाराओं में सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान उसके गर्भ में निहित रहता है। और उसका मानो गर्भाशय क्या है, पाँचों का मानव का हृदय माना गया है। इसीलिए योगीजन पांच ज्ञानेन्द्रियों का साकल्य बना करके मानो देखो, वह हृदयमयी याग करते हैं, हृदय में ही वह प्रतिष्ठित हो जाते हैं। वह बृहस्पति के द्वारा पर जा करके, मानो देखो, हृदय को बृहस्पति माना गया है। मैं विशाल बन में चला गया हूँ, इतने वाक् मुझे उच्चारण करने का समय नहीं प्राप्त हो रहा है। विचार विनिमय क्या? जब हम पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करते थे, तो बेटा! वह हृदय की चर्चा सबसे प्रथम निहित कर देते थे। इसी हृदय में सिमट करके जब सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान, ज्ञान सिमट कर हृदय में प्रवेश हो जाता है, तो बेटा! देखो, योगीजन वह महान ब्रह्मचारी संशय रहित हो जाता है। उसके समीप वह प्रश्न नहीं रहता, वह परमात्मा की पगडंडी को ग्रहण कर लेता है। वह मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण कर लेता है मेरे प्यारे! देखो, कोई भी वाक् ऐसा उसके समीप नहीं रहता जो अपने में, अधूरेपन में परणित हो जाता है।

तो आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं आज तुम्हें कुछ संक्षिप्त विचार दे रहा हूँ और वह विचार

यह कि हे बृहस्पति तू हमारा पिता है, तू मानो महापिता है, कल्याण करने वाला है। हे बृहस्पति! तू ऊर्ध्वा में रहने वाला है। हे बृहस्पति! तू हमारा कल्याण करने वाला है, तू ज्ञान का पुंज कहलाता है, तू आनन्दमयी स्रोत कहलाता है, तू मानो देखो, हमारे हृदयों में प्रवेश हो करके, तू हृदयग्राही, हृदय प्राणं ब्रहे तू हृदय में प्राण प्रतिष्ठा को धारण करने वाला है। हे प्रभु! हम तेरी प्रातःकाल की पवित्र वेला में तेरी उपासना कर रहे हैं। तू उपासना का एक स्रोत है। एक महान् है, एक पवित्रत्तम है। हे प्रभु! मैं कहाँ जाँऊ, मैं मानो एक शूद्र हूँ, तेरे ही राष्ट्र में विद्यमान हूं। प्रभु! आप जो हैं ऊर्ध्वा में बृहस्पति बन करके रहते हैं, ध्रुवा में विष्णु बन करके रहते हैं। मानो देखो, उदीची में आप, उत्तरायण में मानो देखो, आप सोम बन करके रहते हैं। पश्चिमायन में आप वरुण बन करके रहते हो और दक्षिणायन में आप देखो, इन्द्र बन करके रहते हो। आप देखो, प्राची में, पूर्व दिशा में आप अग्नि बन करके रहते हो। प्रभु! आपके भिन्न भिन्न नामोकरण की मैं उपासना नहीं कर सकता, प्रभु! मैं तो अपने में मौन होना चाहता हूं। तेरा राष्ट्र इतना नितान्तर है कि तेरे राष्ट्र का मैं भ्रमण भी नहीं कर सकता। हे प्रभु! मैं अन्त में तेरी उपासना, तेरे को सर्वत्रता में दृष्टिपात करके अन्त में मैं मौन हो गया हूँ।

ये है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा, शेष चर्चाएँ कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान : श्रीमती पुष्पा नैय्यर, चन्डीगढ़ समय : प्रातः 7 बजे। दिनांक 31 07 1985।

६ 18 09 1985 पुष्प 49 यथा राजा तथा प्रजा

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महत्ता का वर्णन किया जाता है क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के गर्भ में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन

किया जाता है क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के गर्भ में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन है। जिस भी काल में ऋषि मुनियों ने अथवा विचारक पुरुषों ने एक एक वेद मन्त्र के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ किया तो एक एक वेदमन्त्र में ब्रह्माण्ड की विवेचनाएँ और परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित है। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का गुण वादन, उसके गुणों की प्रतिभा, उसके गुणों का दिग्दर्शन प्रायः उन विचारक पुरुषों को होता रहा है, जिन्होंने वैदिक ज्ञान के ऊपर अनुसन्धान अथवा अन्वेषण किया है। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गान गा रहा है अथवा उसके गुणों का उद्घोष कर रहा है। वह मेरा देव कैसा अनुपम है? जिस भी वस्तु के ऊपर तुम चिन्तन करना प्रारम्भ करोगे उसी में वह अनन्तमयी दृष्टिपात आने लगता है। वह जो मेरा प्यारा प्रभु जो सृष्टि का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है वह इतना अनुपम है, उसकी महत्ता में इतनी विचित्रता है कि वह देवतव कहलाता है। परम्परागतों से ही, मानव उस परमपिता परमात्मा का अनुसन्धान करता रहा है अथवा उसको अपना इष्टदेव स्वीकार करता हुआ उसकी महिमा का गुण गान गाता रहता है।

आज का हमारा वेदमन्त्र इससे पूर्व जो शब्दों की विवेचना हो रही थी, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन कर रहे थे, और भी भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे अग्निष्टोम याग की चर्चाएँ आती हैं, राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके अग्निष्टोम याग को रचाते हैं और अपने राष्ट्र की प्रतिभा और राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाने के लिए तत्पर हो जाते हैं। जैसा हमारे यहाँ कन्या याग का वर्णन आया नाना प्रकार के लोकों का वर्णन आता रहता है। कन्या याग के सम्बन्ध में तीन प्रकार के लोकों की चर्चा आयीं। हमारे यहाँ देवलोक, पितर लोक और कुल लोक की भी चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारे यहाँ वैसे तो नाना वंशों की चर्चाएँ हैं परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है? वेदमन्त्र कहता

है अग्निष्टोम याग के सम्बन्ध में, वाजपेयी यागों के सम्बन्ध में अपनी विवेचना देता है। जैसे कन्या यागों में तीन लोक कहलाते हैं। इसी प्रकार वाजपेयी याग में भी तीन प्रकार के लोकों की चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारा सामूहिक यह जो लोक है इसमें मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाने में लगा रहता है। नाना प्रकार के योगाभ्यासों में लगा रहता है और अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाना चाहता है। प्रत्येक मानव की आकांक्षा लगी रहती है। संसार का प्रत्येक प्राणी यह चाहता है कि मैं सुखद बन जाऊँ। मेरा मानव जीवन मृत्युञ्जयवादी न बने। मानव मृत्यु के लिए सदैव अपने मानवीय जीवन में कल्पना करता रहता है और यह विचारता रहता है कि मैं मृत्युञ्जय बन करके मृत्यु को विजय करूं। परन्तु विचार यह आता है कि मृत्युञ्जय कैसे बनेंगे? हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में जब मानव प्रवेश करता है तो वह मृत्यु के सम्ब्ध में अपनी उड़ानें उड़ने लगता है और यह विचारता है कि यह जो नाना प्रकार के याग हैं। यह मानव को मृत्युञ्जय बनाते हैं। क्योंकि याग में तपस्या है, पूजा है, मानवीयता है। इस प्रकार के यागों की विवेचनाएँ वैदिक साहित्य में परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में प्रायः रत्त होता रहा है। यह परम्परागतों से यानि वर्तमान के युग में तो हम प्रवेश नहीं कर रहे हैं। हम केवल परम्परागतों के अतीत के उस दर्शन में प्रवेश करते हैं। जहाँ ऋषि मुनि, अनुसन्धानवेत्ता और राजा अपने में अनुसन्धान करते रहे हैं।

तो मेरे प्यारे! विचार क्या है? कि वाजपेयी याग में राजा और प्रजा दोनों मिल करके सम्मिलित हो करके अपने में याग करते हैं, उड़ाने उड़ते रहते हैं। विचित्र उड़ान उड़ते रहते हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ वैज्ञानिकों ने एक समय प्रार्थना की और कहा कि प्रभु! आप अपने राष्ट्र में एक वाजपेयी याग की रचना कीजिए। वाजपेयी याग को हम बुद्धिमानों के द्वारा जानना चाहते हैं। तो महाराजा अश्वपति ने ऋषियों, वैज्ञानिकों के विचार श्रवण करके उद्घोष करके उन्होंने एक याग का आयोजन किया और उन्होंने यज्ञशाला क्रियता में निर्माण की तो नाना ऋषिवर निमन्त्रण के कथनानुसार उस राजा के याग में विद्यमान थे। उद्दालक गोत्रीय ऋषि विश्वश्रवा रेणुकेतु और मुनिवरों! महर्षि भारद्वाज अपने विद्यालय

के ब्रह्मचारियों के सहित महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज और भी नाना ऋषि मुनिओं का एक समूह एकत्रित हुआ। महाराजा अश्वपति के यहाँ जब याग की रचना होने लगी, ऋषि मुनि अपनी अपनी स्थलियों पर जब विद्यमान हो गए, वाजपेयी याग का प्रारम्भ हुआ। उस वाजपेयी याग में जब वेद मन्त्रों का उद्घोष होने लगा तो वेद के आचार्यों ने प्रश्न करना प्रारम्भ किया। राजा ने ऋषि मुनियों से प्रश्न किया कि भगवन्! वेद का मन्त्र यह कहता है कि गो के बछड़े को हम हूत करना चाहते हैं, हम उसको बलि करना चाहते हैं। ऋषि मुनिओं ने जब राजा के इन वाक्यों को श्रवण किया तो उन्होंने कहा गऊ के बछड़े का अभिप्राय केवल यह नहीं है कि हम अग्नि में उसको हूत करना चाहें। यह जो वायु मण्डल की अग्नि है जो सूर्य के साथ में तपायमान हो रही है, उस अग्नि में हम इसको तपाना चाहते हैं। वृष्टि के रूपों में हम अन्नाद की वृत्तियों में धारण कराना चाहते हैं। वेद का वाक्य आगे कहता है कि यह जो पृथ्वी है यही तो उसको हूत किया जाता है। तो बछडें के हूत का वर्णन आया तो उसका निराकरण करने के लिए ऋषि मुनियों ने यह किया कि वृष्टि होने पर गऊ का बछड़ा पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करता है, वेद का मन्त्र कुछ ऐसा कह रहा है। वही गर्भ नाना प्रकार की वनस्पतियों को लेकर के राष्ट्र के समीप आ जाता है जिससे राष्ट्र उन्नत होता है। और मानव समाज में एक महत्ता का दर्शन होने लगता है।

राजा ने जब यह श्रवण किया तो कहा बहुत प्रियतम। तो वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है मानव उसके रूपों में कुछ जान रहाह ै। जब यहाँ वाजपेयी यागों का, अग्निष्टोम यागों का वर्णन आया जिस भी काल में ऋषि मुनियों ने इसके ऊपर विचार विनिमय करना प्रारम्भ किया, तो नवीन नवीन ऊर्ध्वा में ज्ञान की उपलब्धि मानव के समीप होने लगी। तो विचार विनिमय क्या? हमारे वैदिक साहित्य के स्तर पर क्या मानवीय धाराओं में प्राणी की हिंसा करके अपने धर्म की कोई रक्षा करना चाहे तो यह ऊर्ध्वा में वाममार्ग कहलाता है। तो आज मैं विचार यह देने आया हूँ कि हमारे यहाँ विशुद्ध रूपों से प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए अथवा विचार विनिमय करना चाहिए। महाराजा अश्वपति के यहाँ याग प्रारम्भ होने लगा। वेदमन्त्र सु हृदय उद्घोष रूपों से वेदों का उद्गीत

गाया जाने लगा। तो जब उद्गीत गाया जो रहा था तो राजा अश्वपति के यहाँ उस याग का प्रभाव यह हुआ कि मतेघ मण्डलों से भीनी भीनी वृष्टि प्रारम्भ हुई और वृष्टि के प्रारम्भ होते ही उस समय गऊ के बछड़े की बलि का वर्णन आया। मैं आज उस सन्दर्भ में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि हम अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिए मृत्युञ्जय बनना चाहते हैं। मृत्यु को कौन प्राप्त होता है और मृत्युञ्जय कौन बनता है। मृत्यु को वह प्राप्त होता है जो मानव अपने मार्ग को त्याग देता है और कुमार्ग को अपना लेता है वह मृत्यु को आह्वान कर रहा है और जो मृत्युञ्जय बनना चाहता है, अपने अन्तर्हृदय में जो आत्म याग हो रहा है, अपने हृदय में जो ज्ञानाग्नि प्रदीप्त करके याग करता है वह मृत्युञ्जय बनने के लिए तत्पर हाता है। हमारे यहाँ जहाँ वाजपेयी यागों में राजा और प्रजा का वर्णन आता है वहाँ राष्ट्र और प्रजा में यह भी आता है कि राजा को चाहिए वह बुद्धिमान, बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा करने वाला हो और जितना बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा करने वाला हो और जितना बुद्धिजीवी प्राणी इस संसार में निष्पक्ष अपना क्रिया कलाप करता है वह और कोई नहीं कर पाता। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता प्रियता में होने चाहिए। आध्यात्मिक विज्ञान अपने में अनूठा बन करके रहा है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता मृत्युञ्जय बन करके रहा है। मृत्युञ्जय कैसे बनता है? वह अपनी मानवीय धारा को विचित्रता में ले जाता है, जैसे एक मानव अन्वेषण कर रहा है।

एक समय मुझे स्मरण है महाराज अश्वपति के राष्ट्र में कुछ ऋषिवर गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वार पर पहुंचे। गाड़ीवान रेवक मुनि से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! मानव अपने को मृत्युञ्जय बनाना चाहता है वह दार्शनिक बने। दर्शनों की प्रतिभा को जानने वाला बने। दर्शन क्या है? अपनी मानवीयता का दर्शन करना चाहिए कि तुझे केसा बनना है? तू कौन है? वह विचार मानव के समीप आते हैं। जब संसार में तू इस परमात्मा के जगत् में आया तो क्यों आया और जाएगा तो क्यों जाएगा? दो ही प्रश्न मानव के समीप आते रहरते हैं तो गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा, यह दोनों प्रश्न ऐसे हैं जिनको गम्भीरता से विचारना है। उनके आश्रम में नित्य प्रति अध्ययन होता रहता था,

अध्ययन आध्यात्मिकवाद का और मृत्युंजय पर होता रहता था। गाड़ीवान रेवक मुनि ने तो यह कहा है कि मृत्यु अपने में कोई रहस्यत्तम नहीं है। क्योंकि मृत्यु अपने में कोई वाक्य की रचना नहीं कर सकती। मृत्यु मानव का अज्ञानतामयी एक शब्दार्थ है। ज्ञान और वेद में तुम पहुंचोगे अथवा विज्ञान के स्तर पर पहुंचोगे तो वैज्ञानिक रहस्यत्तमों में भी मृत्यु का अपना कोई अस्तित्व नहीं है। आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ता भी अपने को यह स्वीकार करते हैं कि वास्तव में कोई मृत्यु नहीं है। जो साधक जन हैं, जो आत्मा और परमात्मा की आभा में ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ते रहते हैं और मोक्ष की पगडण्डी को पान करना चाहते हैं। तो वहाँ भी मृत्यु का कोई अवृत नहीं बन पाता। जैसे एक मानव कहीं आक्रमण करता है तो वहाँ के प्राणीमात्र को यह ज्ञान हो जाता है कि तेरे पर आक्रमण हो रहा है। चाहे परोक्ष में प्राणी हो चाहे अपरोक्ष में हो।

एक समय ऋषि के आश्रम में वेद गान हो रहा था। तो वेदों की ध्वनि को पान करने के लिए कहीं से सर्पराज आ गया और उस ध्वनि को श्रवण करने लगा। एक ब्रह्मचारी के हृदय में धृष्टता आई कि मैं इसको मृत्यु को पहुंचाना चाहता हूँ जिससे इसका शरीर और आत्मा दोनों भिन्न हो जाएँ, ऐसा क्रिया कलाप मुझे बनाना है। क्योंकि यह हिंसक प्राणी है, यह इस उद्घोष को पान करने नहीं आया। यह हमें नष्ट करने के लिए आया है। सर्पराज उस मानव की तरंगों को जान गया। जब उसके हृदय से तरंगों का उद्घोष हुआ अथवा उद्गीत हुआ तो उसको जान गया। जानने का प्रयास यह हुआ कि सर्पराज वहाँ से धीमी धीमी गति करने लगा। जब गति करने लगा तो उसके विचार आते ही उसकी तरंगें सर्पराज के हृदय को स्पर्श कर गयीं और सर्पराज वहाँ से गमन करता है। जहाँ पृथ्वी में उसकी विलिया बनी हुई थी उसमें वह अपने को प्रविष्ट कर गया। तो विचार विनिमय क्या? मानव को इतनी सूक्ष्म धारा बना लेनी चाहिए कि उसके विचारों का आदान प्रदान होता रहता है। विचारों में इतनी सूक्ष्मता होती है कि दूसरा प्राणी भी उन विचारों को अपने में पान करता रहता है। साधारण प्राणी भी अपने में विचारता रहता है कि मेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। तो विचार विनिमय क्या कि

गाड़ीवान रेवक के आश्रम में साधक अपनी साधना में परणित होते रहे।
एक समय ऐसा मुझे स्मरण है, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वारा ब्रह्मचारी कवन्धि कुछ अनुसन्धान कर रहे थे। आध्यात्मिक विज्ञान के ऊपर अन्वेषण कर रहे थे कि मैं विज्ञान के आँगन में तो पहुंच गया हूँ, परन्तु मैं आध्यात्मिक अपने को बनाना चाहता हूँ। आध्यात्मिक विज्ञान में कितना बल है। कितनी शक्ति है, मैं उसे जानना चाहता हूँ। तो ब्रह्मचारी कवन्धि साधना करता हुआ प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेष्ण भी करता रहता था। तो विचार क्या, एक समय जब वह साधना कर रहे थे, मनस्तत्व और प्राणस्तत्व दोनों को मिलान कर रहे थे, वायु मण्डल में प्रवेश करना चाहते थे, वायु जिन तरंगों को अग्नि की धाराओं में से अपने में धारण कर लेती है और वही वायु उसको अन्तरिक्ष में प्रवेश करा देती है। इसके ऊपर ब्रह्मचारी कवन्धि कुछ अनुसन्धान कर रहे थे कि मैं इन तरंगों को जानना चाहता हूँ। ब्रह्मचारी कवन्धि सोम वृत्तिका ऋषि के पुत्र थे, एक समय उनकी माता रुग्ण हो गयी। जब रुग्ण हो गई क्योंकि माता ने बालक को शिक्षा दे करके उसे ब्रह्मावर्चोसि का पालन कराते हुए वह ब्रह्मचारी ही बन गए थे। ऋषि के आश्रम में माता अपने हृदय से पुकार करने लगी और अपने अन्तर्हृदय में प्रवेश करने लगी, उद्घोष होने लगा कि मेरा पुत्र जो ब्रह्मचारी है उसका मेरे से मिलन होना चाहिए। मेरा अन्तर्रात्मा उसे पुकार रहा है। हे प्रभु! तू मेरे पुत्र को मेरे से मिलान करा। माता की वह जो पुकार थी, हृदय में वह जो विडम्बनामयी विचारधारा थी, वह विचार वायु मण्डल में प्रवेश करने लगे। वही तरंगें घोषित होती हुई दण्डक वनों में ब्रह्मचारी कवन्धि के हृदय को स्पर्श करने लगी। माता कहीं है पुत्र कहीं है, जो उद्घोषमयी वाणी है, तरंगें हैं, वह ब्रह्मचारी के अन्तर्हृदय में प्रवेश होने लगीं। मन को अन्तर्रात्मा में कवन्धि लगा रहा है परन्तु लग नहीं पा रहा है। वह प्राण के साथ मिलान करना चाहता है परन्तु उसको वह ममतामयी लगने नहीं दे रही। ब्रह्मचारी बड़ा आश्चर्य चकित हो करके गाड़ीवान रेवक से बोले कि हे प्रभु! मेरा अन्तर्रात्मा इतना कुशल है। मैं बहुत समय से साधना कर रहा हूँ अन्तर्रात्मा में मैं साधक बन करके साधना के क्षेत्र में प्रवेश हो गया हूँ। परन्तु मेरा अन्तर्रात्मा भी विचित्र है। आज मेरा मनस्तत्व साधना

में क्यों नहीं परणित हो रहा है? जब ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा तो याग समाधि में वह समाधिष्ट हो गए मन और प्राण दोनों को एकाग्र करते हुए वह अपने बाहरीय और आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश कर गए। जब आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश किया तो ब्रह्मचारी को कोई ममतामयी तरंगें स्पर्श कर रही हैं। ब्रह्मचारी को गाड़ीवान रेवक ने कहा कि मैंने अपने साधना में अपने मस्तिष्क में मैं ब्रह्माण्ड के कुल में प्रवेश कर गया था कोई ममतामयी तरंगें तुम्हें स्पर्श कर रही हैं तो ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने में चिन्तन करना प्रारम्भ किया। जब गम्भीर मुद्रा में प्रवेश हो गए तो यह प्रतीत हुआ और वेद का मन्त्र स्मरण आया और वेदमन्त्र यह कह रहा था यदि तुम ममता में प्रवेश हो गए हो और ममतामयी विचार तुम्हारे अन्तर्हृदय को स्पर्श कर रहे हैं। तो कोई न कोई ममता वाला जिसको तुमने सन्तुष्ट नहीं किया है वह तेरे समीप तरंगों का उद्घोष कर रहा है। वह तरंगें तेरे समीप आ रही हैं।

यह विचार आते ही कवन्धि ने वेदमन्त्र को ले करके वहाँ से भ्रमर किया। महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वारा पर पहुंचे। भारद्वाज मुनि से कहा कि प्रभु! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? वेदमन्त्र यह कहता है कि तरंगें किसी को तरंगित कर रही हैं। मुनिवरों! महर्षि भारद्वाज मुनि ने मन्त्र पर यह विचार दिया। ब्रह्मचारी सुकेता से कहा कि ब्रह्मचारी! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? उन्होंने कह, भगवन्! मैं तो इसको नहीं जानता हूँ। इसके ऊपर बल दिया जा सकता है। विचार होने लगा तो यह विचारा गया और भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र था और यन्त्र में भावनाओं का भी दिग्दर्शन होता था। तरंगें चल रही हैं। इन तरंगों को ग्रहण किया जा रहा है। जब वह तरंगें दृष्टिपात आयीं तो यन्त्र में ममतामयी माता का चित्र दृष्टिपात आ रहा है और चित्र के साथ तरंगें आ रही हैं। उन्होंने कहा, ब्रह्मचारी! तुम्हारी तो माता ममतामयी है, रुग्ण है। ब्रह्मचारी कवन्धि भ्रमण करते हुए माता के समीप पहुंचे। अयोध्या में उसके मातृ और पितर वास करते थे। वह अयोध्या में पहुंचे तो माता प्रसन्न हो गयी। उसे आलिंगन किया। वह रुग्ण थी परन्तु उसकी ममतामयी तरंगें उस साधक को बाध्य कर रही हैं। अन्तर्हृदय से दूरी कर रही है। विचार विनिमय क्या? यह जो ममतामयी जगत् है यह बड़ा अनुपम है। इसीलिए वाजपेयी

साधकों ने कहा है कि परमात्मा के सिवा किसी को विचारो ही नहीं यदि कोई साधक बनना चाहता है। राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो प्रजा और परमपिता परमात्मा दोनों को स्मरण करना चाहिए। यदि वह न्यायालय में विद्यमान है और वह पुत्र को ममता की दृष्टि से दृष्टिपात करता है तो उसका न्यायालय भ्रष्ट हो जाएगा। उसका न्यायालय पवित्र नहीं रहेगा। इसी प्रकार साधक परमपिता परमात्मा का गुण गान गाने में लगे रहे। जहाँ तक अपना ज्ञान है, तप है, जो ममता मयी प्राणी अंग संग रहने वाले हैं उनको जानकर संतुष्ट करना चाहिए। उनकी साधना में परिवर्तन होता रहता है।

आज मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार तुम्हें यह देने के लिए आया हूँ कि वेद का मन्त्र क्या कहता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ जो वाजपेयी याग हो रहा था मैं उसकी चर्चा कर रहा था। वाजपेयी याग में जो साधक होते हैं वह अपने को बलि में प्रदान कर देते हैं ओत प्रोत कर देते हैं बलि का अर्थ है कि अपने को समर्पित करना है। प्रभु को अपने में समपित कर देते हैं। वही तो साधक ब्रह्मज्ञानी बन करके परमपिता परमात्मा के राष्ट्र को अपने में धारण करके मृत्युञ्जय बन जाते हैं। संसार को वह साधक दृष्टिपात नहीं करता हुआ भी दृष्टिपात नहीं कर रहा है। श्रवण करता हुआ भी श्रवण नहीं कर रहा है। वेद का ऋषि कहता है, आर्चाजन कहते हैं कि हमें नाना प्रकार के यागों का चयन करना चाहिए। हमं साधक बनना है परमात्मा का जो राष्ट्र है यह बड़ा अनुपम है, बड़ा विचित्र है। इसमें प्रत्येक मानव को आपने में साधक बनना चाहिए। बेटा! जहाँ मैं कन्या याग का वर्णन कर रहा था वहाँ आज हमारा वाक्य वाजपेयी याग में चला गया। वाजपेयी याग किसे कहते हैं जहाँ राजा और प्रजा दोनें मिलीन करते हुए दोनों का एकोकीकरण हो जाए। एकोकीकरण हो करके कर्त्तव्य का पालन किया जाए और कर्त्तव्यवाद में निहित हो करके उस याग में परणित हो करके वायु मण्डल को हमें पवित्र बनाना है और विचारों कसे अपने गृह को विचित्र बनाना है। उसके पश्चात् हम अपने में साधक बन सकते हैं। जब प्रजा यह चाहती है कि हमारा जीवन सुखद हो, राजा यह चाहता है कि मैं प्रजा को सुखद बनाना चाहता हूँ तो जैसे भगवान मनु

ने कहा है और भी आचार्यों ने, राजाओं ने कहा है कि राजा करे अनले में शासन करना चाहिए। प्रजा पर शासन नहीं करना चाहिए। अपनी मनोनीति इन्द्रियों पर शासन करना चाहिए। जब इन्द्रियों पर राजा शासन करने लगता है तो प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला नहीं बनता। वह केवल अपनी अन्तर्रात्मा को ऊँचा बनाता हुआ अपने विचारें को शासन में ऊँचा करता हुआ, कला कौशल करके उदर की पूर्ति करता है और प्रजा को सुखद बनाने के लिए अपने को संलग्न करता रहता है अपने को समर्पित करता रहता है, राजा वह महान् होत है जिस राजा के राष्ट्र में एक महापुरुष पहुंचा हो। महापुरुष की बुद्धि ज्यों की त्यों बनी रहे। राष्ट्र में जा करके उसे अभिमान न छा जाएं। यदि महापुरुष को अभिमान आ गया तो मानो कि राजा के द्रव्य मं किसी रपकार का संगह है। वह किसी प्रकार की विडम्बना है। इसी विडम्बना में परणित हो करके साधक और ऋषि अपनेपन को समाप्त करके अभिमान की मात्रा बलवती बन जाती है और वह अभिमान ही आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ताओं को मृत्यु में परिवर्तित कर देता है। वही तो मृत्यु है। वह मृत्यु नहीं आनी चाहिए।

मेरे पुत्रो! मैंने तुम्हें आज यह विचार दिया। महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में कोई भी ऐसा द्रव्य नहीं आता था जो किसी का संग्रह किया हुआ हो या किसी के श्रंगार को हनन करके द्रव्य आया हो, या किसी की अन्तरात्मा को दुःखित करके। राजा स्वयं शासनवादी बन जाता है इन्द्रियों पर तो प्रजा उससे पहले बन जाती है और जब प्रजा और राजा दोनों अनुशासन में लग जाते हैं तो शान्ति की स्थापना हो जाती है। यह याज्ञिक बन जाते हैं। वह सबसे प्रिय याग कहलाता है। वेद का आचार्य यह कहता है कि वह राजा अपने में पवित्र है और प्रजा को ऊँचा बनाने मे लगा हुआ है। अपनी अन्तरात्मा को हूत कर रहा है, समर्पित कर रहा है ओर उस धारा में रत्त हो गया है जिसमें जाने के पश्चात् एक आनन्द की स्थापना हो जाती है। राजा का तो एक ही नृत्य रह जाता है कि आतताईयों को ज्ञान के द्वारा शिक्षा दे या उसे अस्त्रों से दंडित करे, यही राजा का कर्त्तव्य है। इससे प्रजा की रक्षा होती है। प्रजा की रक्षा उस काल में होती है जबकि राजा स्वयं अपने जीवन में महान् बन जाता है। महाराजा अश्वपति ने अपने विचारों में

भिन्न भिन्न प्रकार का उद्घोष किया है। मैं परमात्मा को अपने में लाना चाहता हूँ। परमपिता परमात्मा का जो रचा हुआ अनुपम जगत् है इसके ऊपर वह अनुसन्धान करता है, अन्वेषण करता हुआ उसको विचारतारहता है कि मैं वास्तव में परमात्मा के अमूल्य जगत् को जानना चाहता हूँ। उसमं लगा हुआ है। वह साधक बन करके साधना करता रहा है। प्रत्येक अणु और परमाणु में प्रभु को दृष्टिपात कर रहा है। लोक लोकान्तरों को उसमें पिराया हुआ स्वीकार करता है। वह माला बन जाती है और वह माला का सूत्र बन जाता है। तो वह मृत्युञ्जय बन जाता है जो इस धारा में लगा हुआ है।

तो विचार क्या कि वाजपेयी याग में हिंसा नहीं है। वाजपेयी याग में महानता है। राजा को ऊँचा बनाना है गऊ के बछड़े से पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करना है जिससे नाना प्रकार का विशुद्ध अन्न उत्पन्न हो करके माता वसुन्धरा की गोद में अपने में खिलवाड़ कर रहा है, अपने को स्वीकार कर रहा है। वसुन्धरा बना करके उस अन्नाद को पान करता है। खाद्यान्न को ऊँचा बना रहा है। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम अपने में ऊर्ध्वा में क्रिया कलाप करते चले जाएँ। वाजपेयी यागों को अपने में धारण करते चले जाएँ जिससे राष्ट्र वैज्ञानिक बने आध्यात्म्कि विज्ञानवेत्ता बने। राजा के राष्ट्र वैज्ञानिक बने आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बने। राजा के राष्ट्र में विज्ञान की ऊँची उड़ान हो। यह चर्चा तो मैं कल प्रकट करूंगबा। महाराजा अश्वपति के यहाँ आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों रूपें से नृत्य करता रहा है। मानव की नाना प्रकार की विचारों की जो तरगें हैं वह मानव को तरंगित करती रहती हैं। यदि वह शुद्ध है तो शुद्ध वायुमण्डल में तरंगित हो जाती हैं और अशुद्ध तरंगें उत्पन्न हो करके वायुमण्डल दूषित हो जाता है।

आज का विचार क्या कह रहा है कि प्रत्येक प्राणी जानता है कि तेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। उस आक्रमणकारी को उसकी तरंगों को जान लेता है। वह प्रयत्नशील बन करके प्राणों की रक्षा करता है। अपने में पवित्र बन करके धारामयी बनाता है। आज का विचार क्या कह रहा है कि हम मृत्युञ्जय बनाना चाहते हैं। इस प्रकार मानव दर्शन

को अपने समीप लाने का प्रयास करे। परमपिता परमात्मा को अपना देव स्वीकार करके वह जहाँ भी विद्यमान हो, प्रत्यक्ष रूप से प्रतिभा का उद्घोष हो। उसकी तरंगों में तरंगित होता हुआ अपने में पवित्र बन जाए। प्रत्येक वेदमन्त्र हमें उद्घोष कर रहा है, हमें प्रेरणा दे रहा है और कह रहा है कि जितना भी यह जड़ जगत् है, चैतन्य जगत् है सर्वत्र में परमपिता परमात्मा निहित है। अपनी आभा नियुक्त कर रहे हैं। अभ्युदय हो रहा है, धारामयी बन करके अपने जीवन को महान् और पवित्र बनाया जा रहा है। यह जगत् इसी प्रकार एक दूसरे में पिरोया हुआ है। परमपिता परमात्मा एक महान् सूत्र है, जिस सूत्र में हमारा शब्द भी पिरोया हुआ है, तरंगें भी पिरोई हुई हैं, परमाणु भी पिरोया हुआ है, अणु भी उसमें पिरोया हुआ है। परमाणुआं में अणुओं के विभाजन करने से ब्रह्माण्ड उसमें निहित होता रहता है। ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता रहता है। तो बेटा! इसी प्रकार तरंगों में भी ब्रह्माण्ड है और यह ब्रह्म ही ब्रह्म हमें दृष्टिपात आ रहा है। इसीलिए वेद का ऋषि कहता है तुम जहाँ भी विद्यमान हो, प्रभु को सदैव दृष्टिपात करते रहो। राजा अपने को जब अनुशासन में बना लेता है तो द्वितीय राजा भी आध्यात्मिकवाद में, अनुशासन में परणित हो जाता है। सर्वत्र पृथ्वी मण्डल एक दूसरे से प्रेरणा ले करके अपने में स्वर्ग बन जाता है। आनन्दमयी बन जाता है। यह आज का विचार समाप्त। शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा।

७ 18 09 1985 पुष्प 49 यथा राजा तथा प्रजा

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महत्ता का वर्णन किया जाता है क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के गर्भ में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन किया जाता है क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ

रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के गर्भ में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन है। जिस भी काल में ऋषि मुनियों ने अथवा विचारक पुरुषों ने एक एक वेद मन्त्र के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ किया तो एक एक वेदमन्त्र में ब्रह्माण्ड की विवेचनाएँ और परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित है। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का गुण वादन, उसके गुणों की प्रतिभा, उसके गुणों का दिग्दर्शन प्रायः उन विचारक पुरुषों को होता रहा है, जिन्होंने वैदिक ज्ञान के ऊपर अनुसन्धान अथवा अन्वेषण किया है। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गान गा रहा है अथवा उसके गुणों का उद्घोष कर रहा है। वह मेरा देव कैसा अनुपम है? जिस भी वस्तु के ऊपर तुम चिन्तन करना प्रारम्भ करोगे उसी में वह अनन्तमयी दृष्टिपात आने लगता है। वह जो मेरा प्यारा प्रभु जो सृष्टि का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है वह इतना अनुपम है, उसकी महत्ता में इतनी विचित्रता है कि वह देवतव कहलाता है। परम्परागतों से ही, मानव उस परमपिता परमात्मा का अनुसन्धान करता रहा है अथवा उसको अपना इष्टदेव स्वीकार करता हुआ उसकी महिमा का गुण गान गाता रहता है।

आज का हमारा वेदमन्त्र इससे पूर्व जो शब्दों की विवेचना हो रही थी, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन कर रहे थे, और भी भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे अग्निष्टोम याग की चर्चाएँ आती हैं, राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके अग्निष्टोम याग को रचाते हैं और अपने राष्ट्र की प्रतिभा और राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाने के लिए तत्पर हो जाते हैं। जैसा हमारे यहाँ कन्या याग का वर्णन आया नाना प्रकार के लोकों का वर्णन आता रहता है। कन्या याग के सम्बन्ध में तीन प्रकार के लोकों की चर्चा आयीं। हमारे यहाँ देवलोक, पितर लोक और कुल लोक की भी चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारे यहाँ वैसे तो नाना वंशों की चर्चाएँ हैं परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है? वेदमन्त्र कहता है अग्निष्टोम याग के सम्बन्ध में, वाजपेयी यागों के सम्बन्ध में अपनी विवेचना देता है।

जैसे कन्या यागों में तीन लोक कहलाते हैं। इसी प्रकार वाजपेयी याग में भी तीन प्रकार के लोकों की चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारा सामूहिक यह जो लोक है इसमें मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाने में लगा रहता है। नाना प्रकार के योगाभ्यासों में लगा रहता है और अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाना चाहता है। प्रत्येक मानव की आकांक्षा लगी रहती है। संसार का प्रत्येक प्राणी यह चाहता है कि मैं सुखद बन जाऊँ। मेरा मानव जीवन मृत्युञ्जयवादी न बने। मानव मृत्यु के लिए सदैव अपने मानवीय जीवन में कल्पना करता रहता है और यह विचारता रहता है कि मैं मृत्युञ्जय बन करके मृत्यु को विजय करूं। परन्तु विचार यह आता है कि मृत्युञ्जय कैसे बनेंगे? हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में जब मानव प्रवेश करता है तो वह मृत्यु के सम्बन्ध में अपनी उड़ानें उड़ने लगता है और यह विचारता है कि यह जो नाना प्रकार के याग हैं। यह मानव को मृत्युञ्जय बनाते हैं। क्योंकि याग में तपस्या है, पूजा है, मानवीयता है। इस प्रकार के यागों की विवेचनाएँ वैदिक साहित्य में परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में प्रायः रत्त होता रहा है। यह परम्परागतों से यानि वर्तमान के युग में तो हम प्रवेश नहीं कर रहे हैं। हम केवल परम्परागतों के अतीत के उस दर्शन में प्रवेश करते हैं। जहाँ ऋषि मुनि, अनुसन्धानवेत्ता और राजा अपने में अनुसन्धान करते रहे हैं।

तो मेरे प्यारे! विचार क्या है? कि वाजपेयी याग में राजा और प्रजा दोनों मिल करके सम्मिलित हो करके अपने में याग करते हैं, उड़ाने उड़ते रहते हैं। विचित्र उड़ान उड़ते रहते हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ वैज्ञानिकों ने एक समय प्रार्थना की और कहा कि प्रभु! आप अपने राष्ट्र में एक वाजपेयी याग की रचना कीजिए। वाजपेयी याग को हम बुद्धिमानों के द्वारा जानना चाहते हैं। तो महाराजा अश्वपति ने ऋषियों, वैज्ञानिकों के विचार श्रवण करके उद्घोष करके उन्होंने एक याग का आयोजन किया और उन्होंने यज्ञशाला क्रियता में निर्माण की तो नाना ऋषिवर निमन्त्रण के कथनानुसार उस राजा के याग में विद्यमान थे। उद्दालक गोत्रीय ऋषि विश्वश्रवा रेणुकेतु और मुनिवरों! महर्षि भारद्वाज अपने विद्यालय के ब्रह्मचारियों के सहित महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज और भी नाना ऋषि मुनिओं

का एक समूह एकत्रित हुआ। महाराजा अश्वपति के यहाँ जब याग की रचना होने लगी, ऋषि मुनि अपनी अपनी स्थलियों पर जब विद्यमान हो गए, वाजपेयी याग का प्रारम्भ हुआ। उस वाजपेयी याग में जब वेद मन्त्रों का उद्घोष होने लगा तो वेद के आचार्यों ने प्रश्न करना प्रारम्भ किया। राजा ने ऋषि मुनियों से प्रश्न किया कि भगवन्! वेद का मन्त्र यह कहता है कि गो के बछड़े को हम हूत करना चाहते हैं, हम उसको बलि करना चाहते हैं। ऋषि मुनिओं ने जब राजा के इन वाक्यों को श्रवण किया तो उन्होंने कहा गऊ के बछड़े का अभिप्राय केवल यह नहीं है कि हम अग्नि में उसको हूत करना चाहें। यह जो वायु मण्डल की अग्नि है जो सूर्य के साथ में तपायमान हो रही है, उस अग्नि में हम इसको तपाना चाहते हैं। वृष्टि के रूपों में हम अन्नाद की वृत्तियों में धारण कराना चाहते हैं। वेद का वाक्य आगे कहता है कि यह जो पृथ्वी है यही तो उसको हूत किया जाता है। तो बछड़ें के हूत का वर्णन आया तो उसका निराकरण करने के लिए ऋषि मुनियों ने यह किया कि वृष्टि होने पर गऊ का बछड़ा पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करता है, वेद का मन्त्र कुछ ऐसा कह रहा है। वही गर्भ नाना प्रकार की वनस्पतियों को लेकर के राष्ट्र के समीप आ जाता है जिससे राष्ट्र उन्नत होता है। और मानव समाज में एक महत्ता का दर्शन होने लगता है।

राजा ने जब यह श्रवण किया तो कहा बहुत प्रियतम। तो वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है मानव उसके रूपों में कुछ जान रहाह े। जब यहाँ वाजपेयी यागों का, अग्निष्टोम यागों का वर्णन आया जिस भी काल में ऋषि मुनियों ने इसके ऊपर विचार विनिमय करना प्रारम्भ किया, तो नवीन नवीन ऊर्ध्वा में ज्ञान की उपलब्धि मानव के समीप होने लगी। तो विचार विनिमय क्या? हमारे वैदिक साहित्य के स्तर पर क्या मानवीय धाराओं में प्राणी की हिंसा करके अपने धर्म की कोई रक्षा करना चाहे तो यह ऊर्ध्वा में वाममार्ग कहलाता है। तो आज मैं विचार यह देने आया हूँ कि हमारे यहाँ विशुद्ध रूपों से प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए अथवा विचार विनिमय करना चाहिए। महाराजा अश्वपति के यहाँ याग प्रारम्भ होने लगा। वेदमन्त्र सु हृदय उद्घोष रूपों से वेदों का उद्गीत गाया जाने लगा। तो जब उद्गीत गाया जो रहा था तो राजा अश्वपति के यहाँ उस याग

का प्रभाव यह हुआ कि मतेघ मण्डलों से भीनी भीनी वृष्टि प्रारम्भ हुई और वृष्टि के प्रारम्भ होते ही उस समय गऊ के बछड़े की बलि का वर्णन आया। मैं आज उस सन्दर्भ में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि हम अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिए मृत्युञ्जय बनना चाहते हैं। मृत्यु को कौन प्राप्त होता है और मृत्युञ्जय कौन बनता है। मृत्यु को वह प्राप्त होता है जो मानव अपने मार्ग को त्याग देता है और कुमार्ग को अपना लेता है वह मृत्यु को आह्वान कर रहा है और जो मृत्युञ्जय बनना चाहता है, अपने अन्तर्हृदय में जो आत्म याग हो रहा है, अपने हृदय में जो ज्ञानाग्नि प्रदीप्त करके याग करता है वह मृत्युञ्जय बनने के लिए तत्पर हाता है। हमारे यहाँ जहाँ वाजपेयी यागों में राजा और प्रजा का वर्णन आता है वहाँ राष्ट्र और प्रजा में यह भी आता है कि राजा को चाहिए वह बुद्धिमान, बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा करने वाला हो और जितना बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा करने वाला हो और जितना बुद्धिजीवी प्राणी इस संसार में निष्पक्ष अपना क्रिया कलाप करता है वह और कोई नहीं कर पाता। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता प्रियता में होने चाहिए। आध्यात्म्कि विज्ञान अपने में अनूठा बन करके रहा है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता मृत्युञ्जय बन करके रहा है। मृत्युञ्जय कैसे बनता है? वह अपनी मानवीय धारा को विचित्रता में ले जाता है, जैसे एक मानव अन्वेषण कर रहा है।

एक समय मुझे स्मरण है महाराज अश्वपति के राष्ट्र में कुछ ऋषिवर गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वार पर पहुंचे। गाड़ीवान रेवक मुनि से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! मानव अपने को मृत्युञ्जय बनाना चाहता है वह दार्शनिक बने। दर्शनों की प्रतिभा को जानने वाला बने। दर्शन क्या है? अपनी मानवीयता का दर्शन करना चाहिए कि तुझे केसा बनना है? तू कौन है? वह विचार मानव के समीप आते हैं। जब संसार में तू इस परमात्मा के जगत् में आया तो क्यों आया और जाएगा तो क्यों जाएगा? दो ही प्रश्न मानव के समीप आते रहरते हैं तो गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा, यह दोनों प्रश्न ऐसे हैं जिनको गम्भीरता से विचारना है। उनके आश्रम में नित्य प्रति अध्ययन होता रहता था, अध्ययन आध्यात्मिकवाद का और मृत्युंजय पर होता रहता था। गाड़ीवान रेवक मुनि ने

तो यह कहा है कि मृत्यु अपने में कोई रहस्यत्तम नहीं है। क्योंकि मृत्यु अपने में कोई वाक्य की रचना नहीं कर सकती। मृत्यु मानव का अज्ञानतामयी एक शब्दार्थ है। ज्ञान और वेद में तुम पहुंचोगे अथवा विज्ञान के स्तर पर पहुंचोगे तो वैज्ञानिक रहस्यत्तमों में भी मृत्यु का अपना कोई अस्तित्व नहीं है। आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ता भी अपने को यह स्वीकार करते हैं कि वास्तव में कोई मृत्यु नहीं है। जो साधक जन हैं, जो आत्मा और परमात्मा की आभा में ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ते रहते हैं और मोक्ष की पगडण्डी को पान करना चाहते हैं। तो वहाँ भी मृत्यु का कोई अवृत नहीं बन पाता। जैसे एक मानव कहीं आक्रमण करता है तो वहाँ के प्राणीमात्र को यह ज्ञान हो जाता है कि तेरे पर आक्रमण हो रहा है। चाहे परोक्ष में प्राणी हो चाहे अपरोक्ष में हो।

एक समय ऋषि के आश्रम में वेद गान हो रहा था। तो वेदों की ध्वनि को पान करने के लिए कहीं से सर्पराज आ गया और उस ध्वनि को श्रवण करने लगा। एक ब्रह्मचारी के हृदय में धृष्टता आई कि मैं इसको मृत्यु को पहुंचाना चाहता हूँ जिससे इसका शरीर और आत्मा दोनों भिन्न हो जाएँ, ऐसा क्रिया कलाप मुझे बनाना है। क्योंकि यह हिंसक प्राणी है, यह इस उद्घोष को पान करने नहीं आया। यह हमें नष्ट करने के लिए आया है। सर्पराज उस मानव की तरंगों को जान गया। जब उसके हृदय से तरंगों का उद्घोष हुआ अथवा उद्गीत हुआ तो उसको जान गया। जानने का प्रयास यह हुआ कि सर्पराज वहाँ से धीमी धीमी गति करने लगा। जब गति करने लगा तो उसके विचार आते ही उसकी तरंगें सर्पराज के हृदय को स्पर्श कर गयीं और सर्पराज वहाँ से गमन करता है। जहाँ पृथ्वी में उसकी विलिया बनी हुई थी उसमें वह अपने को प्रविष्ट कर गया। तो विचार विनिमय क्या? मानव को इतनी सूक्ष्म धारा बना लेनी चाहिए कि उसके विचारों का आदान प्रदान होता रहता है। विचारों में इतनी सूक्ष्मता होती है कि दूसरा प्राणी भी उन विचारों को अपने में पान करता रहता है। साधारण प्राणी भी अपने में विचारता रहता है कि मेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। तो विचार विनिमय क्या कि गाड़ीवान रेवक के आश्रम में साधक अपनी साधना में परणित होते रहे।

एक समय ऐसा मुझे स्मरण है, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वारा ब्रह्मचारी कवन्धि

कुछ अनुसन्धान कर रहे थे। आध्यात्मिक विज्ञान के ऊपर अन्वेषण कर रहे थे कि मैं विज्ञान के आँगन में तो पहुंच गया हूँ, परन्तु मैं आध्यात्मिक अपने को बनाना चाहता हूँ। आध्यात्मिक विज्ञान में कितना बल है। कितनी शक्ति है, मैं उसे जानना चाहता हूँ। तो ब्रह्मचारी कवन्धि साधना करता हुआ प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेष्क्षण भी करता रहता था। तो विचार क्या, एक समय जब वह साधना कर रहे थे, मनस्तत्व और प्राणस्तत्व दोनों को मिलान कर रहे थे, वायु मण्डल में प्रवेश करना चाहते थे, वायु जिन तरंगों को अग्नि की धाराओं में से अपने में धारण कर लेती है और वही वायु उसको अन्तरिक्ष में प्रवेश करा देती है। इसके ऊपर ब्रह्मचारी कवन्धि कुछ अनुसन्धान कर रहे थे कि मैं इन तरंगों को जानना चाहता हूँ। ब्रह्मचारी कवन्धि सोम वृत्तिका ऋषि के पुत्र थे, एक समय उनकी माता रुग्ण हो गयी। जब रुग्ण हो गई क्योंकि माता ने बालक को शिक्षा दे करके उसे ब्रह्मावर्चोसि का पालन कराते हुए वह ब्रह्मचारी ही बन गए थे। ऋषि के आश्रम में माता अपने हृदय से पुकार करने लगी और अपने अन्तर्हृदय में प्रवेश करने लगी, उद्घोष होने लगा कि मेरा पुत्र जो ब्रह्मचारी है उसका मेरे से मिलन होना चाहिए। मेरा अन्तर्रात्मा उसे पुकार रहा है। हे प्रभु! तू मेरे पुत्र को मेरे से मिलान करा। माता की वह जो पुकार थी, हृदय में वह जो विडम्बनामयी विचारधारा थी, वह विचार वायु मण्डल में प्रवेश करने लगे। वही तरंगें घोषित होती हुई दण्डक वनों में ब्रह्मचारी कवन्धि के हृदय को स्पर्श करने लगी। माता कहीं है पुत्र कहीं है, जो उद्घोषमयी वाणी है, तरंगें हैं, वह ब्रह्मचारी के अन्तर्हृदय में प्रवेश होने लगीं। मन को अन्तर्रात्मा में कवन्धि लगा रहा है परन्तु लग नहीं पा रहा है। वह प्राण के साथ मिलान करना चाहता है परन्तु उसको वह ममतामयी लगने नहीं दे रही। ब्रह्मचारी बड़ा आश्चर्य चकित हो करके गाड़ीवान रेवक से बोले कि हे प्रभु! मेरा अन्तर्रात्मा इतना कुशल है। मैं बहुत समय से साधना कर रहा हूँ अन्तर्रात्मा में मैं साधक बन करके साधना के क्षेत्र में प्रवेश हो गया हूँ। परन्तु मेरा अन्तर्रात्मा भी विचित्र है। आज मेरा मनस्तत्व साधना में क्यों नहीं परणित हो रहा है? जब ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा तो याग समाधि में वह समाधिष्ट हो गए मन और प्राण दोनों को एकाग्र करते हुए वह अपने बाहरीय और

आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश कर गए। जब आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश किया तो ब्रह्मचारी को कोई ममतामयी तरंगें स्पर्श कर रही हैं। ब्रह्मचारी को गाड़ीवान रेवक ने कहा कि मैंने अपने साधना में अपने मस्तिष्क में मैं ब्रह्माण्ड के कुल में प्रवेश कर गया था कोई ममतामयी तरंगें तुम्हें स्पर्श कर रही हैं तो ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने में चिन्तन करना प्रारम्भ किया। जब गम्भीर मुद्रा में प्रवेश हो गए तो यह प्रतीत हुआ और वेद का मन्त्र स्मरण आया और वेदमन्त्र यह कह रहा था यदि तुम ममता में प्रवेश हो गए हो और ममतामयी विचार तुम्हारे अन्तर्हृदय को स्पर्श कर रहे हैं। तो कोई न कोई ममता वाला जिसको तुमने सन्तुष्ट नहीं किया है वह तेरे समीप तरंगों का उद्घोष कर रहा है। वह तरंगें तेरे समीप आ रही हैं।

यह विचार आते ही कवन्धि ने वेदमन्त्र को ले करके वहाँ से भ्रमर किया। महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वारा पर पहुंचे। भारद्वाज मुनि से कहा कि प्रभु! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? वेदमन्त्र यह कहता है कि तरंगें किसी को तरंगित कर रही हैं। मुनिवरों! महर्षि भारद्वाज मुनि ने मन्त्र पर यह विचार दिया। ब्रह्मचारी सुकेता से कहा कि ब्रह्मचारी! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? उन्होंने कह, भगवन्! मैं तो इसको नहीं जानता हूँ। इसके ऊपर बल दिया जा सकता है। विचार होने लगा तो यह विचारा गया और भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र था और यन्त्र में भावनाओं का भी दिग्दर्शन होता था। तरंगें चल रही हैं। इन तरंगों को ग्रहण किया जा रहा है। जब वह तरंगें दृष्टिपात आयीं तो यन्त्र में ममतामयी माता का चित्र दृष्टिपात आ रहा है और चित्र के साथ तरंगें आ रही हैं। उन्होंने कहा, ब्रह्मचारी! तुम्हारी तो माता ममतामयी है, रुग्ण है। ब्रह्मचारी कवन्धि भ्रमण करते हुए माता के समीप पहुंचे। अयोध्या में उसके मातृ और पितर वास करते थे। वह अयोध्या में पहुंचे तो माता प्रसन्न हो गयी। उसे आलिंगन किया। वह रुग्ण थी परन्तु उसकी ममतामयी तरंगें उस साधक को बाध्य कर रही हैं। अन्तर्हृदय से दूरी कर रही है। विचार विनिमय क्या? यह जो ममतामयी जगत् है यह बड़ा अनुपम है। इसीलिए वाजपेयी साधकों ने कहा है कि परमात्मा के सिवा किसी को विचारो ही नहीं यदि कोई साधक बनना चाहता है। राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो प्रजा और परमपिता

परमात्मा दोनों को स्मरण करना चाहिए। यदि वह न्यायालय में विद्यमान है और वह पुत्र को ममता की दृष्टि से दृष्टिपात करता है तो उसका न्यायालय भ्रष्ट हो जाएगा। उसका न्यायालय पवित्र नहीं रहेगा। इसी प्रकार साधक परमपिता परमात्मा का गुण गान गाने में लगे रहे। जहाँ तक अपना ज्ञान है, तप है, जो ममता मयी प्राणी अंग संग रहने वाले हैं उनको जानकर संतुष्ट करना चाहिए। उनकी साधना में परिवर्तन होता रहता है।

आज मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार तुम्हें यह देने के लिए आया हूँ कि वेद का मन्त्र क्या कहता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ जो वाजपेयी याग हो रहा था मैं उसकी चर्चा कर रहा था। वाजपेयी याग में जो साधक होते हैं वह अपने को बलि में प्रदान कर देते हैं ओत प्रोत कर देते हैं बलि का अर्थ है कि अपने को समर्पित करना है। प्रभु को अपने में समपित कर देते हैं। वही तो साधक ब्रह्मज्ञानी बन करके परमपिता परमात्मा के राष्ट्र को अपने में धारण करके मृत्युञ्जय बन जाते हैं। संसार को वह साधक दृष्टिपात नहीं करता हुआ भी दृष्टिपात नहीं कर रहा है। श्रवण करता हुआ भी श्रवण नहीं कर रहा है। वेद का ऋषि कहता है, आचाेजन कहते हैं कि हमें नाना प्रकार के यागों का चयन करना चाहिए। हमं साधक बनना है परमात्मा का जो राष्ट्र है यह बड़ा अनुपम है, बड़ा विचित्र है। इसमें प्रत्येक मानव को आपने में साधक बनना चाहिए। बेटा! जहाँ मैं कन्या याग का वर्णन कर रहा था वहाँ आज हमारा वाक्य वाजपेयी याग में चला गया। वाजपेयी याग किसे कहते हैं जहाँ राजा और प्रजा दोनें मिलीन करते हुए दोनों का एकोकीकरण हो जाए। एकोकीकरण हो करके कर्त्तव्य का पालन किया जाए और कर्त्तव्यवाद में निहित हो करके उस याग में परणित हो करके वायु मण्डल को हमें पवित्र बनाना है और विचारों कसे अपने गृह को विचित्र बनाना है। उसके पश्चात् हम अपने में साधक बन सकते हैं। जब प्रजा यह चाहती है कि हमारा जीवन सुखद हो, राजा यह चाहता है कि मैं प्रजा को सुखद बनाना चाहता हूँ तो जैसे भगवान मनु ने कहा है और भी आचार्यों ने, राजाओं ने कहा है कि राजा करे अनले में शासन करना चाहिए। प्रजा पर शासन नहीं करना चाहिए। अपनी मनोनीति इन्द्रियों पर शासन

करना चाहिए। जब इन्द्रियों पर राजा शासन करने लगता है तो प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला नहीं बनता। वह केवल अपनी अन्तर्रात्मा को ऊँचा बनाता हुआ अपने विचारें को शासन में ऊँचा करता हुआ, कला कौशल करके उदर की पूर्ति करता है और प्रजा को सुखद बनाने के लिए अपने को संलग्न करता रहता है अपने को समर्पित करता रहता है, राजा वह महान् होत है जिस राजा के राष्ट्र में एक महापुरुष पहुंचा हो। महापुरुष की बुद्धि ज्यों की त्यों बनी रहे। राष्ट्र में जा करके उसे अभिमान न छा जाएं। यदि महापुरुष को अभिमान आ गया तो मानो कि राजा के द्रव्य मं किसी रपकार का संगह है। वह किसी प्रकार की विडम्बना है। इसी विडम्बना में परणित हो करके साधक और ऋषि अपनेपन को समाप्त करके अभिमान की मात्रा बलवती बन जाती है और वह अभिमान ही आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ताओं को मृत्यु में परिवर्तित कर देता है। वही तो मृत्यु है। वह मृत्यु नहीं आनी चाहिए।

मेरे पुत्रो! मैंने तुम्हें आज यह विचार दिया। महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में कोई भी ऐसा द्रव्य नहीं आता था जो किसी का संग्रह किया हुआ हो या किसी के श्रंगार को हनन करके द्रव्य आया हो, या किसी की अन्तरात्मा को दुःखित करके। राजा स्वयं शासनवादी बन जाता है इन्द्रियों पर तो प्रजा उससे पहले बन जाती है और जब प्रजा और राजा दोनों अनुशासन में लग जाते हैं तो शान्ति की स्थापना हो जाती है। यह याज्ञिक बन जाते हैं। वह सबसे प्रिय याग कहलाता है। वेद का आचार्य यह कहता है कि वह राजा अपने में पवित्र है और प्रजा को ऊँचा बनाने मे लगा हुआ है। अपनी अन्तरात्मा को हूत कर रहा है, समर्पित कर रहा है ओर उस धारा में रत्त हो गया है जिसमें जाने के पश्चात् एक आनन्द की स्थापना हो जाती है। राजा का तो एक ही नृत्य रह जाता है कि आतताईयों को ज्ञान के द्वारा शिक्षा दे या उसे अस्त्रों से दंडित करे, यही राजा का कर्त्तव्य है। इससे प्रजा की रक्षा होती है। प्रजा की रक्षा उस काल में होती है जबकि राजा स्वयं अपने जीवन में महान् बन जाता है। महाराजा अश्वपति ने अपने विचारों में भिन्न भिन्न प्रकार का उद्घोष किया है। मैं परमात्मा को अपने में लाना चाहता हूँ। परमपिता परमात्मा का जो रचा हुआ अनुपम जगत् है इसके ऊपर वह अनुसन्धान

करता है, अन्वेषण करता हुआ उसको विचारतारहता है कि मैं वास्तव में परमात्मा के अमूल्य जगत् को जानना चाहता हूँ। उसमं लगा हुआ है। वह साधक बन करके साधना करता रहा है। प्रत्येक अणु और परमाणु में प्रभु को दृष्टिपात कर रहा है। लोक लोकान्तरों को उसमें पिराया हुआ स्वीकार करता है। वह माला बन जाती है और वह माला का सूत्र बन जाता है। तो वह मृत्युञ्जय बन जाता है जो इस धारा में लगा हुआ है।
तो विचार क्या कि वाजपेयी याग में हिंसा नहीं है। वाजपेयी याग में महानता है। राजा को ऊँचा बनाना है गऊ के बछड़े से पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करना है जिससे नाना प्रकार का विशुद्ध अन्न उत्पन्न हो करके माता वसुन्धरा की गोद में अपने में खिलवाड़ कर रहा है, अपने को स्वीकार कर रहा है। वसुन्धरा बना करके उस अन्नाद को पान करता है। खाद्यान्न को ऊँचा बना रहा है। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम अपने में ऊर्ध्वा में क्रिया कलाप करते चले जाएँ। वाजपेयी यागों को अपने में धारण करते चले जाएँ जिससे राष्ट्र वैज्ञानिक बने आध्यात्म्कि विज्ञानवेत्ता बने। राजा के राष्ट्र वैज्ञानिक बने आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बने। राजा के राष्ट्र में विज्ञान की ऊँची उड़ान हो। यह चर्चा तो मैं कल प्रकट करूंगबा। महाराजा अश्वपति के यहाँ आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों रूपें से नृत्य करता रहा है। मानव की नाना प्रकार की विचारों की जो तरगें हैं वह मानव को तरंगित करती रहती हैं। यदि वह शुद्ध है तो शुद्ध वायुमण्डल में तरंगित हो जाती हैं और अशुद्ध तरंगें उत्पन्न हो करके वायुमण्डल दूषित हो जाता है।
आज का विचार क्या कह रहा है कि प्रत्येक प्राणी जानता है कि तेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। उस आक्रमणकारी को उसकी तरंगों को जान लेता है। वह प्रयत्नशील बन करके प्राणों की रक्षा करता है। अपने में पवित्र बन करके धारामयी बनाता है। आज का विचार क्या कह रहा है कि हम मृत्युञ्जय बनाना चाहते हैं। इस प्रकार मानव दर्शन को अपने समीप लाने का प्रयास करे। परमपिता परमात्मा को अपना देव स्वीकार करके वह जहाँ भी विद्यमान हो, प्रत्यक्ष रूप से प्रतिभा का उद्घोष हो। उसकी तरंगों में तरंगित

होता हुआ अपने में पवित्र बन जाए। प्रत्येक वेदमन्त्र हमें उद्घोष कर रहा है, हमें प्रेरणा दे रहा है और कह रहा है कि जितना भी यह जड़ जगत् है, चैतन्य जगत् है सर्वत्र में परमपिता परमात्मा निहित है। अपनी आभा नियुक्त कर रहे हैं। अभ्युदय हो रहा है, धारामयी बन करके अपने जीवन को महान् और पवित्र बनाया जा रहा है। यह जगत् इसी प्रकार एक दूसरे में पिरोया हुआ है। परमपिता परमात्मा एक महान् सूत्र है, जिस सूत्र में हमारा शब्द भी पिरोया हुआ है, तरंगें भी पिरोई हुई हैं, परमाणु भी पिरोया हुआ है, अणु भी उसमें पिरोया हुआ है। परमाणुआं में अणुओं के विभाजन करने से ब्रह्माण्ड उसमें निहित होता रहता है। ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता रहता है। तो बेटा! इसी प्रकार तरंगों में भी ब्रह्माण्ड है ओर यह ब्रह्म ही ब्रह्म हमें दृष्टिपात आ रहा है। इसीलिए वेद का ऋषि कहता है तुम जहाँ भी विद्यमान हो, प्रभु को सदैव दृष्टिपात करते रहो। राजा अपने को जब अनुशासन में बना लेता है तो द्वितीय राजा भी आध्यात्मिकवाद में, अनुशासन में परिणित हो जाता है। सर्वत्र पृथ्वी मण्डल एक दूसरे से प्रेरणा ले करके अपने में स्वर्ग बन जाता है। आनन्दमयी बन जाता है। यह आज का विचार समाप्त। शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा।

८ 19 09 1985 पुष्प 49 महाराजा अश्वपति की सभा में नाना यज्ञ यागों पर संवाद

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस पवित्र (मनोहर) वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुण गान गया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माने गए हैं। याग उसका आयतन माना गया है अथवा उसका वह यह है। हम उस परमपिता परमात्मा को अपने में धारण करना चाहते हैं। प्रत्येक प्राणी मात्र अपने में यह चाहता है कि मैं परमपिता परमात्मा को अपना यज्ञोमयी स्वरूप बना सकूँ और उस आभा में लगा रहता है और ऐसा मनोनीत गम्भीर चिन्तन अपने

जीवन को चिन्तनीय विषय बना लेता है। अपने को गम्भीर मुद्रा में मुद्रित करता हुआ एक आभा में निहित हो जाता है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, एक अनुसन्धान और अन्वेषण करता रहता है। विचारता रहता है कि मैं परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाऊँ और उसकी जो आनन्दमयी मोक्ष की पगडण्डी है उसका वह पथिक बनना चाहता है।

तो मेरे प्यारे! हम परमपिता परमात्मा को स्वीकार करते हैं? वेद का मन्त्र कहता है कि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। जितना भी संसार में यह याग हो रहा है चाहे वह आध्यात्मिक याग हो, चाहे वह भौतिक याग हो, दोनों यागों मं वह निहित रहता है। इसीलिए वेद कहता है कि वह यज्ञोमयी स्वरूप है क्योंकि प्रत्येक मानव अपने में याज्ञिक बना हुआ है, चाहे वह परोक्ष रूप में हो, चाहे वह प्रत्यक्ष रूप में क्यों न हो, जब हम उसके ऊपर टिप्पणियाँ प्रारम्भ कर देते हैं और विचारते हैं कि यह संसार में तो यज्ञों का एक नृत्य हो रहा है जिसके ऊपर मानव परम्परगातें से ही अन्वेषण और अनुसन्धान करता रहा है और अपनी विचित्र धाराओं में लगा हुआ है। तो आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है कि वेद में क्या है? इसके ऊपर बहुत सी टिप्पणियाँ हुई हैं और विचार विनिमय होता रहा है। वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप होने से यह संसार उसी के गर्भ मं नृत्य करता रहता है। परन्तु वेद का मन्त्र कहता है कि हम उस मनोनीत हृदय अगम्य जो ज्योति है उसको अपने अन्तःकरण में हमें धारण करते रहें जिससे हमारा अन्तःकरणीय जीवन महान् और पवित्र बन करके यज्ञोमयी स्वरूप को प्राप्त हो जाए हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार की धाराओं का वर्णन होता रहा है परन्तु उस वर्णीय आभा मं जब हम रत्त होते हैं और जीवनल को अपने में धारण करने लगते हैं तो उसकी आभा पवित्र बन करके मानवीय जीवन की एक पवित्र अमूल्य देन एक धारा के रूप में हमें दृष्टिपात आती है।

आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है। बेटा! आज हम उसी स्थलियों में ले जाना चाहते हैं जहाँ महाराजा अश्वपति के यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। उनके यहाँ वापेयी याग, अग्निष्टोम यागों का वर्णन प्रायः क्रियात्मक रूपां मं रत्त

होता रहा है। महाराजा अश्वपति अपने मं बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रत हो जाते हैं और वह जब अपने में मुद्रित होते तो वेद मन्त्रों का गायन और उसकी ध्वनियाँ तथ्यों में रत्त रहने वाली थीं। एक समय महाराजा अश्वपति ने नानावैज्ञानिकों को निमन्त्रित किया और उनमें दोनें प्रकार के विज्ञानवेत्ता थे, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता और भौतिक विज्ञानवेत्ता। उन्होंने एक भव्य सभा की और सभा में वह उद्गीत गाने लगे कि हे वैज्ञानिको! तुम्हारी दृष्टि में, तुम्हारे विज्ञान मं यज्ञ का क्या महत्व माना गया है? वैज्ञानिकों ने कहा प्रभु! हमारा तो विज्ञान यह कहता है कि यह जो याग है यह अपने में अनूठा बन करके रहता है और इसकी अनुष्ठ वृत्तियाँ महान् और पवित्र बन करके रहती हैं, तो वैज्ञानिकों ने कहा, जिस सयम हम नाना अनुवाद में परणित होते हैं और वेद मन्त्रां को विचार विनिमय करने लगते हैं, वेदों का ज्ञान और विज्ञान हमारे समीप आता है, एक एक अणु की प्रतिभा, परमाणु का उसमें चयन, प्राणों की उसमें चिन्तनता यह जब हमें दृष्टिपात होती है तो उस समय याग भी अनूठा वन करके रहता है। एक मानव नाना प्रकार के विज्ञान में लगा हुआ है और वह उस विज्ञान में नाना लोक लोकान्तरों मं रमण करना चाहता है। अपनी उड़ानें उड़ रहा है। एक यज्ञिक अपने में उड़ान रड़ रहा है, जब स्वच्छ हृदय से अपनी यज्ञशाला मं विद्यमान हो करके वह वेद मन्त्रों का उद्घोष करने लगता है तो जिस स्थली पर योग हो रहा है वही पवित्रता जहाँ तक उसकी ध्वनियाँ जा रही हैं। देव लोक में भी ध्वनियाँ देवतव को प्राप्त हो रही हैं। उस समय वैज्ञानिकों ने यह कहा कि याग अपने में अनूठा बन करके परमाणुवाद का शोधन कर रहा है। द्यौ में उसकी प्रतिभा का चयन हो रहा है जब इस प्रकार यागों का चयन होता हे तो उसमें एक भव्यता उन्हें प्राप्त होने लगती है। यह मानवीय भव्यता विचित्रता में रत्त रहने वाली है। तो आदि ऋषियों ने, वैज्ञानिकों ने कहा है कि विज्ञान मं याग का बड़ा महत्त्व माना गया है। क्योंकि जिस भी काल में वायु मण्डल को शोधन की आवश्यकता रही, उसी काल में नाना प्रकार के यागों का चयन भी मानव के समीप आता रहा और वह जो नाना प्रकार का याग है वह वायु मण्डल में तरंगों के रूप मं भरण कर जाता

है। वह तरंगों में तरंगित होता हुआ विज्ञान के आँगन मं प्रवेश कर जाता है।

उन्होंने कहा, रातन्! यह जो विज्ञान है यह तो याग की तरंगों पर निहित रहता हैं यदि इस याग की तरंगों को जब हम भिन्न कर देते हैं तो विज्ञान अपने में विज्ञान नहीं रह पाता। ऋषि ने जब यह निर्णय दिया तो मुनिवरों! उस समय महाराजा अश्वपति ने पुनः यह प्रश्न किया, हे वैज्ञानिको मैं अब तक जान नहीं पाया हूँ कि तुम्हारे विज्ञान मं याग का क्या महत्व माना गया है। उन्होंने कहा, प्रभु! याग का महत्व विज्ञान के आँगन मं ही जानना चाहते हो तो प्रभु! मेरे विचार में तो यह है कि प्रत्येक अणु और परमाणु अपनी अपनी धाराओं पर गति कर रहा है और यह याग को लिए हुए गति कर रहा है। याज्ञाम् भविते लोकाम् जैसे सूर्य प्रातःकाल में उदय होता हुआ संसार को ऊर्ज्वा देता है अथवा प्रकाश देता है। वही प्रकाश मानवीयता में प्रवेश कर जाताहै। वही प्रकाश विज्ञान के आँगन में प्रवेश कर जाता है। वृत्तियों में रमण हो जाता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि याग अपने में विज्ञान में अनूठा बन करके रहा है। सुगन्ध को चाहता है तो सुगन्ध देने वाला याग है। विचारों को देने वाला है और यह वायु मण्डल जब भी पवित्र बनता है यह वाणी के द्वारा पवित्र बनता है। यह नाना परमाणुओं से तो पवित्र और ऊँचा बनता ही है परन्तु वाणी अपने में रहस्यता की आभा में निहित हो जाती है। तो उस समय वैज्ञानिकों ने कहा कि हमारे विचार में तो यह है राजन्! कि यह याग ही विज्ञान है ओर विज्ञान ही याग है। उस समय पुनः राजा अश्वपति ने कहा, हे वैज्ञानिकों, मेरा हृदय अब तक सन्तुष्ट नहीं हुआ है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो विज्ञान है तुम्हारा परमाणुवाद में रत्त हो रहा है। परन्तु विज्ञान अपने में विज्ञान बन करके रहता है और अनूठा बन करके रहता है। जब विज्ञान और याग दोनें का संगतिकरण नहीं हो जाता जब तक विज्ञान और याग दोनें को हम साध्रकता में दृष्टिपात नहीं कर रहे हैं। विचार आता है कि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं एक दूसरे में समन्वय हो रहे हैं। एक दूसरे की धारा में रत्त हो रहे हैं।

तो वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि हे भगवान् हे अश्वपति! आपको प्रतीत है कि एक समय हम भ्रमुण करते हुए समुद्र के तट पर पहुंचे और समुद्र के तट पर जब पहुंचे

तो वहाँ महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों अपने में कुछ विचार विनिमय कर रहे थे। हम भी उन्हीं के समीप जा पहुंचे। उन्होंने कुछ साकल्य एकत्रित किया था और वह कामधेनु गऊ के द्वारा याग कर रहे थे। जब याग में चयन करते करते दोनें एक दूसरे में रत्त हो गए, एक दूसरे की धारा को अपने में धारित करते हुए अपने को महान् बनाने के लिए तत्पर हुए, उस समय उन्होंने कहा यह जो हमारा परमाणुवाद है इसमें हमारा विज्ञान कहाँ तक सार्थक है। तो महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनें का विचार विनिमय हो रहा था। जब गणेश जी ने प्रश्न किया तो महाराजा हनुमान जी बोले कि हे भगवन्! यह जो विज्ञान है और यह जो याग है यह विज्ञान याग में है और याग विज्ञान मं है। उन्होंने कहा, प्रभु! यह कैसे? यज्ञ की प्रतिक्रिया में जब हम रत्त होते हैं तो एक समय यज्ञमान के द्वारा पहुचे। मगध राष्ट्र में एक याग हो रहा था। वह अग्निष्टोम याग हो रहा था और उस याग में जब हम सम्मिलित हुए तो उन्होंने आदर की दृष्टि से दृष्टिपात किया। नाना वैज्ञानिक अपने यन्त्रों को लिए हुए विराजमान हैं और याग हो रहा है। यज्ञमान से कहा कि यह तुम क्या कर रहे हो? तब यज्ञमान ने यह कहा, मैं क्या नहीं कर रहा हूँ? उत्तर तो विशुद्ध था। परन्तु हमने पुनः यह प्रश्न किया कि प्रभु! यह तुम किस प्रतिक्रिया में लगे हुए हो? उन्होंने कहा, मैं याग में लगा हुआ हूँ, मेरे पुरोहित ने कहा कि तुम याग करो। हम याग में परणित हो गए हैं, याग में रत्त हो गए हैं। उन्होंने कहा, यह याग क्या है? उन्होंने कहा, संसार की प्रतिक्रिया का नाम याग है। हम पश्चिम दिशा में विद्यमान हैं। याग के पश्चिम भाग में विद्यमान हो करके हम आहुति दे रहे हैं अथवा हूत कर रहे हैं। जब हम हूत कर रहे हैं तो हम ब्रह्म के समीप और ब्रह्म की धाराओं में रत्त रहने के लिए तत्पर हैं। यज्ञमान ने कहा, हम सबसे प्रथम अग्न्याध्यान करते हैं। अग्न्याध्यान क्यों करते हैं क्योंकि अग्नि प्रकाश है। अग्नि विभाजन करने वाला है, अग्नि अपने में ऊष्णा है, अग्नि अपने में प्रकाश का द्यौतक है। ही तो प्रकाश है जिस प्रकाश से मानव अपनी मोक्ष की पगडण्डी को, साधारण पगडण्डियों को प्राप्त करता रहता है। यही तो धाराएँ हैं जिनको हम साध्य करते हुए अपने जीवन

को विचित्र रूपें मं परणित कर देते हैं।
उस समय हनुमान ने कहा गणेश जी से कि महाराज! जब हम यज्ञमान के समीप पहुचे तो उन्होंने याग की प्रतिक्रियाएँ हमें प्रारम्भ कीं। हम अग्न्याध्यान कर रहे हैं, अग्नि से अपने को प्रकाशित कर रहे हैं। अग्नि को देवताओं का दूत बना करके उसके मुखरबिंद्रु में हम साकल्य प्रदान कर रहे हैं। अग्नि उसी साकल्य को परमाणु के यप मं परिवर्तित कर देती है अथवा सूक्ष्म बना देती है। वह देवताओं का आहार बन गया है। वह देवताओं का मुख बन करके उस मुखारबिन्दु में यज्ञमान आहुति दे रहा है। यज्ञमान कहता है मैं अग्नि के मुख में आहुति दे रहा हूँ जिससे वह विभाजन करके हम देवताओं की पुरी में परणित हो जाएँ। याग में परणित हो जाएँ। देवताओं के समीप हमारी हवि जा सके। यज्ञमान कहता है कि मैं जब श्रद्धामयी अग्नि को जागरूक करके घृत की आहुति देता हूँ, मैं श्रद्धार मं परणित हो जाता हूँ। उसके पश्चात् मैं जब श्रद्धामयी हूत करके, जल के समीप पहुंच करके अग्नि में आह्वान करता हूँ, हे अग्नि! जब तू प्रातःकाल की अग्नि जागरूक होती है तो तू नाना प्रकार के रूपों में रत्त होती है। हे अग्नि! मेरी यज्ञशाला में आ और तू विराजमान हो जा। जल के सहित मैं उस अग्नि का स्वागत करता हूँ। जल के सहित मैं समुद्र की कल्पना करता हूँ। बाहरीय विज्ञान में जब प्रवेश हुए, यह जो समुद्र है यह पृवि की परोक्ष में प्रतिक्रिया कहलाती है। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानमयी कहलाता है? तू जहाँ यज्ञोमयी है वहाँ तू विज्ञानमयी है। यज्ञमान कहता है कि जल की पवित्र धारा को मैं जब दक्षिणाय से उत्तरायण को गति करता हूँ उसके पश्चात् मैं पश्चिमाय गति करने लगता हूँ तो मैं सरस्वती की प्रार्थना करता हुआ मैं पात्र को ले करके जल का सिंचन कर रहा हूँ जैसे परमपिता परमात्मा ने जब इस ब्रह्माण्ड का निर्माण किया, पृथ्वी का सृजन किया यह पृथवी रसीतल बन गयी। पृथ्वी के अन्तर्गत जल की धाराओं को प्रभु ने नियुक्त किया। वह समुद्रों के रूप मं परणित हो रही है। वही तो एक दूसरे में सम्मिलित होते हुए अन्नाद को जन्म देती है। वही प्राण सत्ता, ऊर्ज्वा के देने वाले हैं। वही ध्रुवा में गति करके, विष्णु वन करके

पालन कर रहे हैं। वह पालना हो रही है।

महाराजा अनुमान ने गणेश जी से कहा, हे प्रभु! मैं यज्ञमान के समीप और पहुंचा तो तीन गुणों से अपने गुणत्व को धारण करने लगे। तीन समिधा ले करके यज्ञमान कहता है सम्भूति ब्रह्मवाचः जैसे ब्रह्मचारी आचार्य के कुल में प्रवेश करता है तो वह तीन समिधा ले करके जाता हैं समिधा का अभिप्राय यह है तू आत्मा को चेताने वाला बन। समिधा से आत्मा नहीं चेती जाती। आत्मा उस काल में चेती जाती है जब तक तीनें गुणों को अच्छी प्रकार न जान लें तो हम आत्मा को चेता नहीं सकते। वेद के आचार्यों ने कहा, हनुमान जी कहते हैं कि प्रभु! यज्ञमान कहता है कि मैं तीन समिधा अग्नि में प्रविष्ट कर रहा हूँ। वह तीन समिधा क्या है? ज्ञान, कर्म, उपासना इन तीनों को मैं ज्ञान रूपी अग्नि में परणित करना चाहता हूँ जिससे ज्ञान रूपी अग्नि मेरे समीप आ जाए और वह ज्ञान रूपी अग्नि को अपना करके मैं अपने अन्तर्हृदय में आत्मिक याग करने वाला बनूं। विचार आता रहता है कि जब यज्ञमान ने तीन समिधा और जल की प्रतिक्रियाएँ कीं, उन्होंने समुद्र की कल्पना की है अग्नि को अपना ष्टोम माना है। तो विचार आया कि वह प्राण के समीप विद्यमान हो करके अपनी विचित्र आभाओं में क्रियाओं को रत्त करने लगता है। वेद उद्घोष प्रारम्भ होता है। अग्निमय ज्येति को अपने में धारण करता है और वह कहता है मैं प्राण सखा को अपने समीप लाना चाहता हूँ। प्राणों का आदान प्रदान करने लगता है। प्राणों का एक दूसरे में मिलान करना प्रारपम्भ करता है। यह चर्चा तो बेटा! मैं कल प्रकट करूंगा। आज केवल मैं इतना तुम्हें उच्चारण किए देता हूँ, हनुमान जी कहते हैं यज्ञमान के समीप मैं इस प्रतिक्रया में पहुंचा। यज्ञमान कहता है अपनी देवी से, हे देवी! हमें द्यौ लोक में जाना है। उसके लिए क्रियात्मक अपने जीवन को बनाना चाहते हैं। विज्ञान में। यह जल भी विज्ञान है। जैसे वैज्ञानिक रूपों में पहुंचना है। जब यज्ञमान अग्नि का दक्षिणायन से उत्तरायण को परोक्षण करता है तो विद्युत् की जो धाराएँ हैं वह दक्षिणायण से उत्तरायण को गति करती है। हिमालय से उनका मिलन होता है और जब हिमालय से मिलन होता है तो वह तरंगें हैं, इन्द्र की जो तरंगें हैं वह तरंगें मेघ के रूप में परणित हो जाती हैं और परणित हो करके

क्येंक अग्नि उसे तपाती है और तापते ही मेघों का रूप बन ाता है। अन्नम् ब्रह्मे वृताम देवः वह अन्न का भण्डार पश्चिम दिशा मानी गई है। जब वही जल पश्चिम दिशा से मिलान करता हुआ वह उत्तरायण के क्षे में वृष्टि का मूल बनता है जो पृथ्वी के गर्भ में जल का परोक्षण होता है और वह नाना प्रकार के अन्नाद को जन्म दे देती है। यही तो नाना प्रकार के अन्नाद को जन्म दे करके मेरी ममतामयी देवी बनती है।

मेरे प्यारे! यज्ञम! ब्रह्मः यह विज्ञान का स्वरूप माना गया है। विज्ञान का कितना इससे तारतम्य लगा हुआ है। अग्नि को उद्बुद्ध करते ह। जब हम आत्मा को चेताने के लिए हम समिधा के द्वारा परणित होते हैं तो मुनिवरों! वह आन्तरिक जगत् और बाहरीय जगत् में तीनों प्रकार के गुणों से उपराम नहीं होत जैसे रूशाला मं तीनों प्रकार के गुणों से उपराम नहीं होते जैसे रूशाला मं तीनों समिधा भस्म नहीं हो जातीं ज्ञान रूपी अग्नि में जब तक यज्ञा भी साथ्रक नहीं होता और विज्ञान के आँगन में योग भी येगी का साथ्रक नहीं होता तीनों गुणां को ज्ञान रूपी अग्नि में समेट लिया जाता है। उसकी धारा में रत्त कर दे हैं। रत्त करके ही उसकी एक विचित्र धारा बन जाती है। यह तीनों गुणों का आदान प्रदान ज्ञानरूपी अग्नि में इनको सिमटा जाता है। जब वह सिमट आते हैं जो अग्नि में ही एक धारा उत्पन्न हो जाती है। ज्ञान रूपी अग्नि जब मानव के समीप प्रदीप्त हो जाती है तो यह अपनी विचारें का साकल्य बना करके हूत करने लगता है। यह आध्यात्मिकवाद बन गया। आध्यात्मिकवादी भौतिक विज्ञान के सर्वत्र विज्ञान को सिमिट करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर देता है।

बेटा! प्रभु ने इस संसार की रचना की है और यह पृथ्वी की रचना की। पृथ्वी के अन्तर्गत परोक्ष मं समुद्र विद्यमान है। यदि समुद्र न हों तो यह पृथ्वी विष उगलती रहती है। प्राणमात्र अपने में विष उगलता रहता है और यदि यह समुद्र, जलाशय न हों तो मानव के लिए एक श्वास भी लेना अवृत बन जाता है प्रभु की अनुपम यह रचना है। आज मैं उस रचना पर न जाता हुआ केवल तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि हनुमान ने कहा प्रभु! विज्ञान के आँगन में याग का अपना विचित्र महत्व माना गया है। हनुमान जी नले कहा, यह तो मैंने यज्ञमान की चर्चाएँ की हैं। परन्तु जब मैं विज्ञान के आँगन

में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता, वह प्रातःकालीनल याग कर रहे थे। जब मेरा बाल्यकाल था, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से बोला कि प्रभु! यह तुम घृतम् अग्नि में समर्पण कर रहे हो यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है कि भगवन्! इस प्रकार आप जो याग कर रहे हैं, अग्नि में घृत प्रदान कर रहे हैं। पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा, हे ब्रह्मचारी! यही तो विज्ञान है, यही तो मानव की धारा है जिसका तुम खण्डन करना चाहते हो। उसका मण्डन करो। किस रूप में करो? श्रद्धामयी जो वृत है यह वायु मण्डल में चित्रों को ले जाता है। यह तरंगों को ले जाता है और तरंगों मं तरंगित हो करके मानव के जीवन को महान् बना देता है पूज्यपाद गुरुदेव ने ऐसा कहा अैर मैंने उस वाक्य को स्वीकर कर लिया। परन्तु जब विज्ञान के क्षेत्र में आया और जब नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करने लगा, एक समय मैंने आग्नेय अस्त्र का निर्माण किया तो जहाँ वह यन्त्र ठोस रूप मं बन गया था। गुरूतव रूप में उसका निर्माण हो गया, उसमं से अशुद्ध तरंगों का निकास होने लगा। जब अशुद्ध तरंगकों का निकास होने लगा तो मैंने ऋषि मुनियों के मध्य में विद्यमान हो करके यह कहा कि प्रभु! यह मैंने जो आग्नेय अस्त्र का निर्माण किया है जिसमें से कुछ विष की धाराओं का जन्म हो रहा है। उन्होंने कहा तुम याग करो। वेद मन्त्रों को उद्घोषित किया और साकल्य की आहुति दी तो वह मैंने यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात किया। याग की जो तरंगकें थीं, धारा थीं वह विष की तरंगों को अपने में निगल रही थीं। जब निगलती मैंने दृष्टिपात की जिससे मुझे यह सिद्ध हुआ कि वैज्ञानिक यह चाहता है कि दूषित वायुमण्डल बन जाताहै विज्ञान से। परन्तु वह याग में जब परणित हो जाता है और वह उनकी अशुद्ध धाराओं को निगल करके, शुद्ध और पवित्र धाराओं का उन्मूलन हो जाता है। वह वायु मण्डल में ओत प्रोत हो जाती हैं।

वेद का आचार्य कहता है महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में वैज्ञानिकों ने कहा प्रभु! उस समुद्र के तट पर हमने यह निर्णय किया है कि याग ही विज्ञान है और विज्ञान ही याग है। इस विज्ञान में एक महानता है। महाराजा अश्वपति ने जब यह श्रवण किया तो नत मस्तक हो करके राजा ने कहा, हे वैज्ञानिको! तुम राष्ट्र के प्राण हो। क्योंकि वह जो

विज्ञान है, यह राष्ट्र का प्राण है। जो वैज्ञानिक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता होते हैं यह राष्ट्र का मस्तिष्क कहलाता है। मुनिवरों! राष्ट्र का मस्तिष्क और राष्ट्र का प्राण दोनों का परस्पर समन्वय होता है। राजा ने कहा हे वैज्ञानिकां! इस याग का विज्ञान में अपना अपना महत्व माना गया है। उन्होंने जब पुनः यह प्रश्न किया तो उन्होंने कहा प्रभु! यह जो विज्ञान है यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपम धारा है। यह जो अनुपम धारा है इसका समन्वय श्रद्धा से माना गया है ओर जब श्रद्धामयी का जन्म होता है क्योंकि परमपिता परमात्मा जहाँ यज्ञमयी स्वरूप है, यज्ञशाला का निर्माण करने वाले हैं वहाँ वह विज्ञानमयी स्वरूप भी हैं और वह यागमयी स्वरूप भी हैं। दोनां का मिलान हो करके चेतना में एक सूत्र में दोनों पिरोएं जाते हैं। वह दोनां एक ही मनके के सूत्र हैं और वह सूत्र क्या है? वह चेतनामयी सूत्र है ओर वह चेतना में कटिबद्ध जड़ रूप मं है। चेतना के आँगन में गति कर रहा है। मेरे प्यारे! जब राजा को यह निर्णय कराया तो राजा आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने कहा यह मैं कैसे स्वीकार करूं कि दोनों एक ही सूत्र के मनके हैं और वह मनके जड़ और चेतना के रूप मं हैं। उन्होंने कहा, हाँ भगवन्! उन्होंने कहा, वह कैसे? एक मनस्ततव के रूप मं है और एक प्राणस्ततव के रूप में है। प्राणस्तत्व का जो रूप है वह चेतना से समन्य है और मन का जो स्वपरूप है वह जड़ के आँगन में गति करता है यह प्राण की सहायता से कटबद्ध हो रहा है। इसी प्रकार जितना भीन यह भौतिक विज्ञान है, प्रकृतिवाद है चाहे वह किसी रूप में क्यों न हो परन्तु वह एक जड़वत् के रूप में निहित रहता है। इसी की सहायता से प्रकृति अपन में गति करती है। वाम में क्या है? वह चेतना है। वह प्राणस्ततव माना गया है जहाँ प्राण का समन्वय मन के साथ हुआ तो साधक साधनावादी बन जाता है। जहाँ विज्ञान से इसका समन्वय हुआ तो वहाँ मन प्राण में कटबद्ध हो करके एक एक परमाणु अपने मे गतिशील होना प्रारम्भ हो जाताहै और वह अपने में जब गतिशल होना प्रारम्भ हो जाता है और वह अपने में जब गतिशील होना प्रारम्भ हो जाता है तो यह जगत् अपनी अपनी धारा में गतिशील बन करके नृत्य करने लगता है। कोई भी बुद्धिमान आ करके किसी भी प्रकार की उड़ान उड़ने लगता है वही उसको प्राप्त हो

जाता है। उसी में वह अपनी धाराओं को अपने में धारण करने लगता है। इस प्रकार जब ऋषियें ने, वैज्ञानिकों ने, राजा को यह निर्णय कराया कि मनस्ततव, प्राणस्तत्व दोनां का यह जगत् है। वैज्ञानिक मन के आँगन में प्रवेश करता है, चेतना को कटिबद्ध कर लेता है, उसमें सम्मिलित कर लेता है तो यह नाना प्रकार के यानों का निर्माण करने लगता है। यन्त्रवादी बन जाता है। एक धारा में रत्त होता हुआ अपनी विचित्र धारा अस्वत में तत्पर हो जाता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ राजा और वैज्ञानिक दोनां अपने में चर्चाएँ करते रहते थे और वैज्ञानिक

इन वाक्यों को कह कर शान्त हो गए। जब शानत हो गए तो राजा अश्वपति ने यह कहा कि हे वैज्ञानिको! यह मेरे विचार में यथार्थ रूपों में परणित हुआ है।

आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी उसी यज्ञशाला में विद्यमान थे। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं से बोले, हे आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं! भौतिक विज्ञान से तुम्हारे आध्यात्मिकवाद का क्या समन्वय रहता है? उन्होंने कहा प्रभु! वास्तव में जानना चाहते हो? उन्होंने कहा, हाँ। उन्होने कहा पांचों इन्द्रियों को मेरे समीप लाओ राजन्। उस ऋषि ने कहा कि हे भगवन्! आप मुझे अपनी पांचों इन्द्रियों को प्रदान कर दीजिए। राजा ने उनके विषय को बखन करते हुए ऋषि को प्रदान कर दिया। ऋषि उनको ले करे बोले कि यह जो विज्ञान है, जैसे नेत्रों का विज्ञान है वह केवल सूर्य तक सीमित रहता है। चन्द्रमा का जो विज्ञान है वह रसों तक सीमित रहता है जो श्रोत्रों की धाराएँ हैं वह दिशाओं तक सीमित रहती हैं। जो तुम्हारी त्वचा है वायु से उसका समन्वय होता है। उन्होंने कहा यह जो घ्राण है सुगन्ध से पृथ्वी से इसका समन्वय होता हैं तो प्रत्येक इन्द्रियें के विश्य को साकल्य बना करके जब हम हृदय रूपी यज्ञाशाला में, हृदय रूपी गुफा में विद्यमान हो रके जब हम याग करते हैं, आध्यात्मिक याग करते हैं तो वह ऐसा विज्ञान बन जाता है यह विज्ञान नहीं सम्भूति कहलाता है। ऐसा प्रतीत होता है जहाँ से यह अणु परमाणु त्रिषेणु जहाँ वैज्ञानिकों का समापन होता है वहाँ आत्म विज्ञान की उपलब्ध्यिँ हो जाती हैं और वह आध्यात्मिक याग बन जाताहै क्येंक जैसे भौतिक यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में नाना प्रकार के पदार्थों को ले करके पौष्टिक और प्राण वर्द्धक और रुग्ण नाशक इन

तीनें प्रकार की औषधियों को ले करके अग्न्याध्यान कर देता है। वह अग्धान उनका विभाजन कर देती है। इसी प्रकार ज्ञान, कर्म, उपासना को ले करके, राजोगुण, तमोगुण, सतोगुण को ले करके, जो इन्द्रियों में समाहित हो रहा है, कोई रूप मे आँगन में, कोई रसों के आँगन में कोई पृवि के सुगन्ध के आँगन में, इन सबाको साकल्य बना करके हृदय रूपी यज्ञाशालार में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है, ज्ञान रूपी अग्नि का उद्बुद्ध हो गया है, आत्म प्रकाश की अग्नि प्रकाश देने लगी है, जब यज्ञमान इनको हूत कर देता है तो वह आध्यात्मिक याग बन जाता है और आध्यात्मिक याग उस काल में बनता है जब भौतिक विज्ञान का समापन हो जाता है और आध्यात्मिकवाद की उपलब्धियाँ हो जाती हैं।

तो मेरे प्यारे! विज्ञानवेत्ता प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है। वह दोनां प्रकार के यागों को समेटे करके मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है। वाह रे मेरे प्रभु! तेरा विज्ञान कितना नितान्त है? कितना महान्? महाराजा अश्वपति ने जब यह प्रसंग लिया तो मौन हो गए। आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, इन दोनां प्रकार के विज्ञान का समावेश करके अपने में शान्ति की स्थापना करने वाले बनें। यह है बेटा! आज का वाक्। आज का विचार क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण गान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाए। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि परमात्मा का वह अनूठा जगत् है, यह अनुपम है। हम इसकी अनुपमता को जानने का प्रया करें। यह है बेटा! आज का वाक् आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठनल होगा। ई 31, लातपत नगर 3

९ 20 09 1985 पुष्प 49 निःस्वार्थ विस्तृत प्रणाली से राष्ट्र पवित्र बनता है

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की

महिमा का गुनगान गाया जाता है। वे परमपिता परमात्मा एक अनुपम माने गए हैं उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों का गुणवादन प्रायः हमारे यहाँ होता रहता है। तो आज हम जब उस परमपिता परमात्मा की महती में गमन करते हैं तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आता है कि सर्वत्र यह जो विज्ञानमयी धारा है अथवा मानवीय जो मस्तिष्क है उस सर्वत्र धाराओं में प्रभु का गमन हो रहा है अथवा उसमें वह रमण कर रहा है। परन्तु हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार की विवेचनाएँ होती रहती हैं, उन विवेचनाओं की धारा में कहीं राष्ट्रवाद का वर्णन आता है। कहीं विज्ञानवाद का वर्णन आता है कहीं और भी नाना प्रकार के वेद हैं और उन वादों का वर्णन होता रहता है।

जब हम राष्ट्रवाद की विवेचना करते हैं तो हमारा यह राष्ट्र केसा होना चाहिए, इसके ऊपर हमारा वैदिक साहित्य और एक एक वेद के मन्त्रों के चिन्तन करने से राष्ट्र की महानता का वर्णन प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र राष्ट्रवाद के लिए केवल इतना उद्घोष कर रहा है कि हे राजन्! तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने का प्रयास कर और अपने राष्ट्र को तू विष्णु राष्ट्र की स्थापना कर, जैसे विष्णु सतोगुण से पालन करने वाला है। हे राजन! तू भी विष्णु बन करके तू अज्ञान को समाप्त करके प्रकाश में संतों में लाने का इस समाज का कर्त्तव्यव्रहः मानव इसी में तू रत्त हो। तो वेद का मन्त्र राष्ट्रवाद की चर्चा करता है और राष्ट्रवाद के लिए कहता है कि जब तुम राष्ट्र के अन्तिम सूत्र में प्रवेश करोगे, तो राष्ट्रवाद अपने में कोई राष्ट्रवाद नहीं है। वह तो केवल प्रजा और समाज को कर्त्तव्यवादी बनाने के लिए उसका निर्वाचन, उसका क्रिया कलाप होता रहता है और यदि राष्ट्रवाद मानव समाज को उस कर्त्तव्यवाद में नहीं ला सका है, प्रकाश में नहीं ला सका है, तो उस राजा को राष्ट्र वह राज्य, वह प्रजाओं के ऊपर अनुशासन करता हुआ अपने में अभिमान को जागरूक कर लेता है। हमारे यहाँ राष्ट्रवादों में भी भिन्न भिन्न प्रकार के वादों का जन्म हुआ है, कहीं साम्यवाद की कल्पना कर रहा है प्राणी, कहीं और भी नाना देखो, राष्ट्रवृत्तियों के वादों में रत्त होने वाला है। कोई देखो, नाना प्रकार के उन यागों में लगा हुआ है जो अश्वमेध रूपों

में जिनकी प्रतिक्रियाएँ कहलाती हैं।

आज यह वाक् तो बड़ा विचित्र आ गया है। साम्यवाद की कल्पना करते हैं तो साम्यवाद में अन्तिम सूत्र में शासन की आवश्यकता नहीं। साम्यवाद उसे कहते हैं जहाँ राजा के राष्ट्र में प्रत्येक मानव बुद्धिजीवी बन जाता है और बुद्धिजीवी बन करके अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। उस कर्त्तव्य में भी जिनकी आस्था अपने में न चाहने वाला हो, ऐसा जो राष्ट्रवेत्ता है वह समाज में महान् बन करके रहता है। मेरे पुत्र महानन्द जी ने कई काल में मुझे वर्णन कराया कि रूढित्र वाद का खंडन होना चाहिए। रूढिवाद का खंडन कौन करता है, राजा को करना चाहिए। क्योंकि जितना भी अज्ञान पनपेगा, उस अज्ञानता से रूढ़ियों की उपलब्धि हो करके उनका संकीर्ण हृदय बन जाता है और संकीर्णता ही मृत्यु है, राष्ट्र की मृत्यु मानी गई है। राष्ट्र की मृत्यु क्या है संकीर्णता, व्यापकता का नाम जब राष्ट्र अपने राष्ट्र को व्यापक बनाता है और व्यापकवाद में ले जाता है तो कर्त्तव्य की वेदी पर निहित हो करके प्राणीमात्र उसी में रत्त हो जाता है। मैं साम्यवाद की विवेचना नहीं, केवल यह चर्चा कर रहा हूँ साम्यवादी कहते हैं कि हम प्रजा को साम्य बनाना चाहते हैं, सम बनना चाहते हैं परन्तु जब प्रजा सम बन जाती है, कर्त्तव्यवाद आ जाता है तो राजा स्वतः कर्त्तव्यवादी बन करके साम्यवादी बनता है। यदि वह प्रजा से वैभव को अपने में संग्रह करने वाला है तो राजा साम्यवादी नहीं कहलाता। एक वह राष्ट्र होता है जिस राष्ट्र में कर्त्तव्यवाद की वेदी के ऊपर मानव अपनी विस्तृत प्रणाली को पवित्र बनाता हुआ जैसे यज्ञशाला में याग करने वाला यज्ञमान अग्नि के मुखारबिन्दु में यज्ञ आहुति प्रदान कर देता है। और वह यज्ञ आहुति जब अग्नि के मुखारबिन्दु में जाती है तो अग्नि अपने लिए नहीं ग्रहण कर रही है, वह अग्नि जल को प्रदान कर देती है, वही गुरूतव पृथ्वी को प्रदान कर देती है, वही वायु में प्रवेश कराती है, अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाती है। तो परिणाम क्या? कितनी सुन्दर निःस्वार्थ प्रणाली है।

जब राजा के राष्ट्र में यह प्रणाली पवित्र होती है जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान याग कर रहा है और वह याग में निःस्वार्थ प्रणाली का स्वामी कौन है, वह यज्ञ आहुति देने वाला

है, वह जो जल को परीक्षण कर रहा है। जल को परोक्षण प्रतिक्रिया में ले रहा है और वह कहता है, हे अमृत! तू मेरा देव है तू खाद्यों में दृष्टिपात आता है क्योंकि तू उसका पिंड बनाता है। तू नाना प्रकार की वनस्पतियों के रूप में उनके नाना प्रकार के खनिज इत्यादियों में तेरा जो वह जल का ही तो, अमृत का ही तो पिंड है। हे पिंड! मैं तुझे सरस्वती के नाम से वर्णन कर रहा हूँ। हे पिंड का निर्माण करने वाले तू बुद्धि को सौम्य में परणित कराने वाला है। तू जब वह पश्चिम दिशा में तेरी आभा नियुक्त होती है तो अन्न का भण्डार तेरे से जन्म लेता है और जन्म ले करके वही अन्न का भण्डार तेरे लिए महान् पवित्र बन जाता है। प्राणीमात्र उसी में खिलवाड़ करता है। तो वह यज्ञमान अपने में परीक्षण कर रहा है, समुद्राम भविते ब्रह्मा जैसे जल के अनेक रूपों में जल ही जल प्रतीत होता है, वह अमृत है, वह आहा है, सम्भूति है, वह अमृत प्राण को देने वाला है।

तो विचार विनिमय क्या? मैं दूरी न चला जाऊँ। विचार केवल यह कि जैसे यह विस्तीर्ण प्रणाली यज्ञ में सृष्टि के पिता ने सृष्टि के प्रारम्भ में मानव समाज के हृदय में यह प्रेरणा दे करके याग की रचना हुई। जब विज्ञान के आँगन में वैज्ञानिक प्रवेश करता है तो सुगन्धि को ले करके चलता है, उस सुगन्धि का परिवर्तन जब दुर्गन्धि में हो जाता है तो पुनः भी वह सुगन्धि कर रहा है। मैं आज तुम्हें एक बड़ी विचित्रसी गाथा वर्णन कर रहा हूँ और वह वर्णन यह है कि सम्भवा लोकाम् वह यज्ञ द्वारा देखो, यज्ञमान अपने में याज्ञिक बना हुआ है और वह अपनी पवित्र हृदय की वाणी को अग्नि की धराओं पर विद्यमान हो करके और वायु में गमन कराती हुई द्यौ लोक में प्रवेश रही है और वह जब द्यौ लोक में प्रवेश करती है तो द्यौ ही तो मानव का पवित्र बनना चाहिए। यही द्यौ ही लोक है जो पवित्रतम बनाने वाला है वह पवित्र होना चाहिए।

तो मेरे प्यारे! मैं विवेश विवेचना में न जाता हुआ, केवल आज मैं तुम्हें प्राण के ऊपर विवेचना देना चाहता हूँ। यह प्राण कितना सखा है यह प्राण कहाँ कहाँ गति कर रहा है। संसार को और परमाणु को गतिशील बना रहा है। यह प्राण कहीं वायु के रूप को धारण करता है, यही प्राण कहीं जल के रूप को धारण करता है, यही प्राण कहीं

देखो, अग्नि के स्वरूप में प्रवेश हो जाता है। तो यह प्राण जहाँ प्राण सत्ता विद्यमान है वहीं तो प्राण अपने में सखा बन रहा है। अपने में सखा बन करके ही तो विचित्र बन रहा है। मैंने प्राण के सम्बध में तुम्हें बहुत सी विवेचना दी हैं। प्राण के सम्बन्ध में नाना प्रकार की विवेचनाएँ होती रहती हैं। जब यह मानव शरीर का निर्माण हुआ किसी भी काल में, सृष्टि के पिता ने इसका निर्माण किया मानव शरीर का तो यह ब्रह्माण्ड की कल्पना करके ही शरीर का निर्माभ्रा हुआ पिंडे ब्रह्माण्डम् ब्रह्मा वृताम् वेद का वाक्य कहता है कि पिंड ब्रह्माण्ड की एक ही कल्पना की गई है। परन्तु देखो, यह जब पिंड का निर्माण हुआ तो पिंड में ब्रह्माण्ड को भरण कर दिया। जब ब्रह्माण्ड को इसमें भरण कर दिया तो यही पिंडाकार बन करके एक महानता में गति करने लगा। इसमें विद्यमान होने वाले देवताजन वह जो देवता क्रिया कलाप कर रहे हैं, बाह्य जगत् में वही अन्तर्जगत् में क्रिया कलाप कर रहे हैं। उन देवताओं का एक समय एक समूह एकत्रित हुआ और समूह एकत्रित हो करके वह अपने में चर्चा करते रहते थे। परन्तु देखो, उन देवताओं में यह प्रतिभासित हो गया कि मैं कहाँ कहाँ अपने में प्रवेश करूं। तो सूर्य ने अपना वास देखो, नेत्रों में किया और दिशाओं ने अपना वास स्रोत्रों में किया और पृथ्वी ने अपना वास ग्रहण में किया। वायु ने अपना वास मुनिवरों! देखो, यह स्पर्श में, स्पर्श इन्द्रियों में ओत प्रोत करा दिया। जितने भी रस हैं संसार ने जितने भी स्वादन हैं वह सब इन्द्रियों को प्रदान करते हैं। जब पांच प्रतिभा में यह जगत् पञ्चीकरण दृष्टिपात आने लगा। जब यह पञ्चीकरण दृष्टिपात आने लगा, तो कुछ ऋषि मुनियों ने यह विचारा कि हम प्राण सखा को जानना चाहते हैं, यह प्राण सखा कैसे जाना जाएगा?

तो ऋषि मुनियों ने साकल्य बनाना प्रारम्भ किया, जैसे बाह्य जगत् वाला यज्ञमान् नाना प्रकार की सुगन्धि पोष्टिक और देखो, रोगनाशक, रुग्ण नाशक नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करता है और वह नाना प्रकार के साकल्य बनाता है। गृहस्थ श्रद्धामयी घृत को उसमें ओत प्रोत कर देता है और ओत प्रोत करके वह याग करता है। यागाम् ब्रह्म वाचोः वह बाह्य जगत् में याग हो रहा है। इसी प्रकार योगीजन, साधकजन, आन्तरिक याग करते हैं। वह प्राण सखा के समीप प्राण को जानने का प्रयास करते हैं। यह प्राण

कहीं वायु के गति रूप में रमण करता है, कहीं यही मुनिवरों! देखो, यह विद्युत बन करके ऊर्ध्वा दे रहा है, कहीं अग्नि बन करके यह ऊर्ज्वा में प्रवेश कर रहा है, कहीं दिशाओं में ओत प्रोत हो करके अपने को सिमट रहा है, कहीं आपो में ओत प्रोत हो करके उसमें अपनी धारा को रत्त करा देता है। कहीं पृथ्वी उसको गुरूतव में परणित करा देती है। तो परिणाम क्या हुआ मुनिवरों! देखो, प्रत्येक इन्द्रियों का जो एक साकल्य बन गया है, वह साकल्य कौन गुरूतव अमृतत्व प्रकाशत्व ऊष्णात्व अमृतत्व दिशातत्व और नाना प्रकार की रसा, रस्सत्वाम् ब्रह्म वाचाः वहीं चन्द्रमा रूपों में रत्त रहने वाला इन सबका एक साकल्य बना दिया और वह साकल्य बना करके मुनिवरों! देखो, वह यज्ञरूपी जो हृदयरूपी गुफा में एक याग हो रहा था, वह जो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने वाला योगीजन इनकी साकल्य बना करके आहूत कर रहा है। हूत करके अग्नि वह जो ज्ञान रूपी अग्नि जिसको ब्रह्मा अग्नि कहते हैं, यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की अग्नियों का चयन प्रायः होता रहा है। परन्तु वह जो ब्रह्मारूपी अग्नि है उस अग्नि को वह हृदय में प्रदीप्त करके और ब्रह्मरूप अग्नि में साकल्यों की प्रकृति के सूक्ष्म सूक्ष्म तन्तुओं का साकल्य बना करके हूत कर रहा है। इससे अज्ञानता न आ जाए, तू ज्ञान में परणित हो जाए।

मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार जब प्रत्येक मानव अपने जीवन को क्रियात्मक बना लेता है, उस मानव के जीवन की धारा विचित्र बन जाती है। देखो, मैं राष्ट्र की चर्चा कर रहा था और प्राणसखा की चर्चा कर रहा था। इनमें प्राण है इनमें उग्रता है। वह जब पृथ्वी का पिंड बनता है तो वह भी प्राण के कारण बनता है, जब जल रूप में रस आता है वह भी प्राण है, जब यह तेजोमयी अग्नि बन करके यह दाह कर देती है, अग्नि कहीं शीतल बन करके रहती है, कहीं यह उत्तेजित बन करके रहती है, उष्ण बन करके रहती है। कहीं यह अग्नि ज्ञानरूपी अग्नि बन करके रहती है, कहीं यही अग्नि राष्ट्र पिता के यहाँ राष्ट्रीय अग्नि बन करके रहती है, कहीं यही अग्नि अजामेध बन करके यही अग्नि राजा के राष्ट्र को पवित्र बनाती रहती है। उस अग्नि का भिन्न भिन्न रूपों में चयन किया गया है। कहीं यही अग्नि है जब हम अग्निष्टोम याग करते हैं, जब हम अजामेध,

पुत्रेष्टियाग नाना प्रकार के याग क्रिया करते हैं तो यह वही तो अग्नि है। यह अग्नि ब्रह्म वाच प्रहे ब्रह्म लोकाम् प्राणाम् ब्रह्म वाचाः कहीं यही प्राण सखा के रूप में स्वीकार की गई है, कहीं यही अग्नि प्रकाश के रूप में परणित हुई। जब राष्ट्र इस अग्नि का दुरूपयोग करना प्रारम्भ करता है, वह जो राष्ट्रीय अश्वघ्न है, राष्ट्रीय अग्नि क्या है विस्तृत प्रणाली, जब विस्तृत प्रणाली देखो, भ्रष्ट हो जाती है, तो उस राजा के राष्ट्रीयता भी नष्ट हो जाती है। उसका राष्ट्रीय स्तर समाप्त हो जाता है।

तो विचार क्या? मुनिवरों! देखो,! यह भव्य अग्नि है। इस अग्नि का चयन करते हुए राजा के राष्ट्र में दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। जब इस अग्नि का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है, यही अग्नि दाह बन करके राजा को अपने में निगल जाती है, राष्ट्र को समाप्त कर देती है। तो परिणाम क्या? मुनिवरों! देखो, मैं दूरी न चला जाऊँ। मैं योगियों की चर्चा कर रहा था, यौगिक क्षेत्रों में प्रवेश हो रहा था। जब यह विचार विनिमय कहीं महाराज अश्वपति के यहाँ होता रहता था। प्राण के ऊपर विवेचना मुनिवरों! बड़ी विचित्र मानी गई है। जब तक यह प्राण इस शरीर में गति करता है, चित्त के मण्डल का निर्माण करता है, तो आत्मा इसमें वास करता है, जब यह अग्नि चित्त के मण्डल को ले करके गमन करता है तो आत्मा भी उसके साथ चला जाता है, आत्म चेतना नहीं रहती, मानव का शरीर एक शव रूप में दृष्टिपात आने लगता है। वह दाह कहाँ चली गई, वह विचित्र प्राणधारा कहाँ चली गई? यहाँ यह प्राण कोई अपने में धारण कर रहा है, यह जल में भी प्राण, अग्नि में भी प्राण, पृथ्वी भी प्रमाणाम् ब्रह्मा पिण्ड व्रते यही अन्न के रूप में, यही प्राण नाना प्रकार के धातु और पिपादों को ले करके पिंड बन जाता है। अन्न का पिंड बनता है, अन्न के पिंड बनाने से उस पिंड के रूप को समापत करता है, समाप्त करके पुनः उसको पिंड बनाता है, अग्नि में उसका पिंड बनाकर उसको अपना आहार बनाता है और जब आहार बना करके वही प्राणसत्ता ले करके मानव जीवन को प्राणी बना देता है।

वाह रे देव! तू केसा विचित्र है, जब मैं तेरी रचना पर विचार करता हूँ, तेरी रचना को हम जान तो नहीं सकते, केसा विचित्र है! मुनिवरों! देखो, पृथ्वी में जब कृषक इस

पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देता है, पिंड को वह पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर देता है। पृथ्वी के गर्भ में वही पिंड मुनिवरों! देखो, पिंडाकार अपने को समाप्त कर देता है। वही एक पिंडाकार अंकुर के रूप में उपज जाता है, वह वही अन्नाद का एक पौधा बन जाता है और पौधा बन करके वही पिंड बनना प्रारम्भ होता है, वही पिंड बन करके सूर्य जो प्रकाश देता है, जो अग्नि ऊष्णा बना रही है, वही तो उस पिंड को परिपक्व बना देता है और परिपक्व बना करके वहीं पिंड मानव अपने रसास्वादन के लिए उसी पिंड को सूक्ष्म बनाता है। उसी पिंड को नष्ट करता हुआ उसको एक सरल के रूप में लाता है, एक रेतस के रूप में लाता है। परन्तु उसके पश्चात् पुनः मेरी माता उसी पिंड को मिश्रण करके उसको जल के संयोग से, जल की संगतिकरण से मुनिवरों! देखो, उसका पिंड बना देती है और पिंड बना करके वही अग्नि में तपा करके, अग्नि से प्राणसत्ता कले करके उसके पिंड के रूप में अग्नि को प्राण को गूंथ देती है और वही उदर में जाता है, उदर में प्रवेश करता है। देखो, दन्त उसे पुनः रेतनस बनाते हैं। अन्तड़ियाँ उसे रेतस बना देती हैं। नाना प्रकार के रेतस बना करके वही मानव प्राणात्ता के रूप में कहीं रस बनता है, कहीं मज्ञा बनता है, कहीं रेतस बन करके वह ब्रह्मचारी बन जाता है।

वाह रे देव! तू केसी विचित्र धारा वाला है। यह केसा मैं एक रचना में चला गया हूँ। माता उस अन्न को तपाती रहती है, संगतिकरण करती रहती है। इसीलिए हमारे यहाँ यागों में सबसे प्रथम संगतिकरण का एक विशेष वर्णन आया है और यह कहा है कि यह जो याग है यह संगतिकरण और दानेषु मानी गई है। यह संगतिकरण है, प्रत्येक साकल्य को ले करके संगतिकरण कर रहा है यज्ञमान। उसको पिंड बना रहा है, यज्ञमान उसका पिंड बनाता है, साकल्य एकत्रित करके पिंड बनाता है, सामग्री सामूहिक रूप में सब पदार्थों को लाता है। घृत के द्वारा पिंड बनाता है, पिंड बना करके उसको अग्नि के मुख में प्रवेश कर देता है वही अग्नि उसके सूक्ष्म वृत्तियों में पिंड को सूक्ष्म बना करके वायु में प्रवेश कर देता है, वही तर्पण करके सुगन्धि पौष्टिक हो करके वह कहीं मुनिवरों! देखो, प्राणियों के नथनों के रूप में प्रोण के रूप में प्राण शक्ति प्रदान कर रहा है। कहीं वही देवताओं में प्राण शक्ति, ऊर्ज्वा उससे प्राप्त हो रही है। वायुमण्डल

पवित्र हो गया है, उसका संगतिकरण हो गया है और वही संगतिकरण है जो मानव को विचित्र बनाता है, मानव के पिंड को बनाता है। मानव के पिंड को कौन बनाता है? मैं प्रभु को कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यही पिंड ब्रह्मा वही नाना प्रकार की देखो, औषधियों का रस बनाता है, नाना प्रकार की औषधियों का, इन्हीं साकल्यों का रस बनता है जो यज्ञ में देवताजन पनपते रहते हैं। कहीं सूर्य से तेजोमयी का जन्म हो रहा है, कहीं अग्नि वृत्तियों में रत्त हो रही है, उसको रेतस बनाया जा रहा है, पिंड बनाया गया है। उसे पान करता हुआ वही रसों के रूप में परणित हो गया। वह वनस्पतियों का रस बन गया है और वनस्पतियों का रस बन करके, माता पिता ने एक संगतिकरण किया। उस संगतिकरण से यह मानव जीवन का पिंड बन गया, मानव शरीर का पिंड बन गया। केसा पिंड बन गया? इसमें नाना प्रकार की अस्थियाँ कृतियों में रत्त हो गई हैं, यही तो प्राणसत्ता है। एक प्राणसत्ता ने पिंड बना दिया है, गूंथ करके पिंड बनाया है, निर्माणवेत्ता ने इसका पिंड बना दिया है और पिंड बन करके वह नाना प्रकार के रूपों में इस संसार में नाना क्रिया कलाप कर रहा है। केसी क्रिया कलाप कर रहा है? कोई पुत्र के रूप में पिंड है, कोई पिता के रूप में पिंड है, कोई पत्नी के रूप में पिंड है, कोई भौजाई के रूप में पिंड बना हुआ है, कोई राजा के रूप में पिंड है। जो पिंड में परणित हो करके आत्मा जितना त्याग और तपस्या में परणित हो जाता है, जितना वह पिंड अपने में पिंडाकार को ऊर्ध्वा में ले जाता है, वे परमपिता परमात्मा की कृति को जान करके, मानवीयता को जान करके एक महानता की जो वेदी पर रत्त हो जाता है, वह प्राण रूपी पिंड बन गया है वहीं पिंड अवस्था बनती रहती है। अवस्था के साथ साथ वहीं पिंड रेतस बन गया है और पिंड रेतस बन करके, वही रेतस बन करके वही प्रकृति का सूक्ष्म स्वरूप बन गया है। उसमें शिशु है, उसमें अणु है, उसी में परमाणु है, उसी में सर्वत्र विज्ञान की धाराओं का जन्म हो जाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, एक एक पिंड को जब रेतस बनाया जाता है तो ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। एक एक पिंड, एक एक परमाणु को जब रेतस बनाया जाता है तो अणु के रूप में, परमाणु के रूप में अग्नियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। उन अग्नियों को वैज्ञानिक

ले करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। कोई यन्त्र राष्ट्र को भस्म कर देता है। कोई यन्त्र मानव को ही नष्ट करता है, कोई यन्त्र अन्तरिक्ष में जा करके वायुमण्डल को दूषित बना देता है। वही तो रेतस से पिंड बना है और पिंड से रेतस बना है और रेतस दूषित हो गया है। तो मुनिवरों! देखो,! यह तो बड़ा विचित्र एक गहन जगत् है, जिसके ऊपर मैं नाना प्रकार की विवेचना प्रायः देता रहता हूँ। देखो, मैं यागों की चर्चा करता रहता हूँ, याग में परणित होता रहता हूँ। विचार यह आता रहता है कि यह केसा अनुपम जगत् है जिसके ऊपर मानव अपने में वृत्तियों को धारण कर रहा है, अपने में ओत प्रोत हो करके अपनी धारा को जानना चाहता है। मृत्यु से विजय होना चाहता है। जब तक यह रेतस बनना, पिंड बनना समाप्त नहीं होता तब तक इसे मोक्ष की पगडण्डी भी प्राप्त नहीं होगी, वहाँ क्योंकि वह एक रस होना है उसमें, तो एक रस हो करके ही तो गति कर सकता है।

तो मेरे प्यारे! देखो,! आज मैं विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ। केवल तुम्हें यह वाक् प्रगट कराने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को यह जान लेना चाहिए। इसी से तो विवेक उत्पन्न होता है और विवेक से ही मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त होती है। जब तक मानव इसको जान नहीं सकेगा, यह वास्तव में क्या है, जिसके ऊपर हम इतने अपने को रत्त कर रहे हैं यह क्या है, तो इसके ऊपर विचार विनिमय जब तक नहीं होगा, यह नाना प्रकार का विज्ञान क्या है, आध्यात्मिक वाद क्या है, इसमें सबमें प्राण क्रिया अपने में क्रिया कलाप कर रही है, प्राणों से गुथा हुआ जगत् है। प्राणों से पिंड बना हुआ है, प्राण ही रेतस कहलाता है, प्राण ही भिन्न भिन्न रूपों में दृष्टिपात आता है। आज मैं जब बाह्य जगत् में प्रवेश करता हूँ तो बाह्य जगत् में भी एक एक कृतियों में प्राण ही प्रतिष्ठित हो रहा है। एक एक अणु की प्रतिभा में देखो, वह प्राणसत्ता ही तो है जिसको वह अग्नि अन्तरिक्ष में प्रवेश करके लोकों पर आक्रमण करता है।

मुझे स्मरण आता रहता है, भारद्वाज मुनि के यहाँ से एक यान उड़ान उड़ता है और वह मंगल पर जा करके आक्रमण करता है, क्योंकि मंगल का वैज्ञानिक पूर्वकाल से एक महान् बना हुआ है। आज भी आधुनिक जो वर्तमान का काल चल रहा है उस

काल में भी देखो,! मंगल का वैज्ञानिक ऊर्ध्वा में गति कर रहा है। नाना प्रकार के यान इस पृथ्वी मण्डल पर आ रहे हैं। नाना प्रकार के यान इस पृथ्वी मण्डल पर आ रहे हैं। नाना प्रकार के यान मंगल से आ रहे हैं, नाना प्रकार के यान बुद्ध में आ रहे हैं, नाना प्रकार के यान गति करते हुए शुक्र लोक में आ रहे हैं। तो यह नाना प्रकार के लोकों में उसके यान भ्रमण करते हैं। कहीं मानव को ले जाता हैं, कहीं मानव को उसका चित्र ले करके उसको त्याग देते हैं। कहीं देखो, वह उनका यान वृत्तियों में अपने में विकृति के रूप में विकृत हो जाता है। प्राणीमात्र को नष्ट कर देती है, कुछ ही समय हुआ है मुझे ऐसा दृष्टिपात हुआ है कि मंगल के वैज्ञानिकों ने बुद्ध मण्डल पर आक्रमण किया और आक्रमण करके वह अग्नि विस्फोट विकृतियों के रूप में उसका जीवन अस्वस्थ हो गया और जीवन के अस्वस्थ होने पर वही मंगल अपने में कृतिरूप बन गया है। इस प्रकार का विज्ञान प्रायः यह प्राण रूप सखा से पिरोया हुआ जिसमें जितने प्राणसत्ता को जान लिया है उतना उसका विज्ञान एक महान् पवित्र बन गया है। महानता में गति करने लगा है। परन्तु देखो, विज्ञान केवल मृत्यु ही मृत्यु को पुकार रहा है और जब आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता विज्ञान के रूप को जान लेता हैं, प्राण सखा को जान लेते हैं, वह चित्त के मण्डल को जान लेते हैं, वह विवेक में परणित हो करके सर्वत्र अग्नि को समेट करके शीतल बना करके शान्ति की स्थापना करके अपने में शान्त हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ प्रकार की धाराओं वाला यह ज्ञान और विज्ञान है इसको हमें विचारना चाहिए। इस धारा को जान करके ही हम संसार से पार हो सकते हैं। परन्तु देखो, जहाँ मैं राष्ट्रवाद की चर्चा कर रहा था। राष्ट्रवाद केसा हा? प्रत्येक रूप में पवित्र होना चाहिए। कर्त्तव्यवाद की वेदी पर विस्तृत प्रणाली में पवित्र होती है तब तक मानव का शरीर स्वस्थ्य बना रहता है। जब विस्तृत प्रणाली में भेदारोप हो जाते हैं, उसी काल में मानव का शरीर रुग्ण होना प्रारम्भ हो जाता है। वह रुग्ण रहता हुआ, वह विशाल रूप को भी धारण कर लेता है। इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में यदि विस्तृत प्रणाली में दोष आ गया है, तो दोष को पवित्र बनाएँ उस दोष

का शोधन करें और यदि शोधन नहीं होता तो धीमे धीमे वह ऐसा एक रुग्ण बन जाएगा कि राष्ट्र का उदर समाप्त हो जाएगा। जब राष्ट्र का उदर समाप्त हो गया, तो राष्ट्र में रह ही क्या गया? उसकी प्राण सत्ता भी चली गई, उसका नाना क्रियात्मक जीवन भी चला गया। इसी प्रकार मानव को, राजा को चाहिए कि अपने में विस्तृत प्रणाली पवित्र है, और याग जैसे उत्तम क्रिया कलापों को करते हुए बाह्य प्रणाली पवित्र रहेगी और यदि हम अपने शरीर को क्रियात्मक सञ्चार रूप से क्रियात्मक बना लेते हैं तो उसकी विस्तृत प्रणाली पवित्र रहेगी और उस प्रणाली का परिणाम यह होगा कि मानव का शरीर स्वस्थ्य रहेगा और जब यह स्वस्थ्य रहेगा तो स्वस्थ्य रहने से ही यह संसार के नाना प्रकार के क्रिया कलापों में परणित हो करके अपने चित्त के मण्डल में महान् से महान् संस्कारों को जन्म देगा और वह जन्म जन्मांतरों जब चित्त मण्डल में प्रवेश कर जाते हैं। वही तो जन्मों को धारण कराते हैं।

आज का वाक् यह क्या कह रहा है? मैं बहुत दूरी चला गया हूँ वाक् उच्चारण करते करते। विचार केवल यह कि बेटा! यह प्राण कैसे पिंड बनाता है, कैसे पिंडों का निर्माण हो रहा है। यही तो प्राण सखा है इसको जानने के लिए मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूंगा। योगीजन इस प्राण को कैसे अपने में वशीभूत करते हैं यह चर्चाएँ कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् केवल विचार यह है कि हम अपने को महानता में परणित कराते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ।

मेरे प्यारे! देखो, माता के गर्भस्थल में हम जब शिशुओं का पिंड ही तो बनता है पांचों प्रकार की धार्मिक धाराओं को ले करके पिंड इसमें एक एक परमाणु को पिरो देता है। माता प्रसन्न हो रही है, जगत् प्रसन्न हो रहा है। यह पिंडम् ब्रह्मा व्रतम् देवाः। आज देखो, पिंड और ब्रह्माण्ड की जब हम कल्पना करते हुए व्यष्टि समष्टि में प्रवेश करा करके अपने जीवन को ऊँचा बनाया करते हैं। यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्राण की विस्तृत प्रणाली पवित्र हो करके समाज ऊँचा बनेगा। यह है बेटा! आज का वाक्। समय मिलेगा शेष चर्चाएँ हम कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। ई.31 लाजपत नगर 3

समय : रात्रि 8 बजे

१० 21 09 1985 पुष्प 49 राजा अश्वपति ने राष्ट्र में प्रत्येक गृह में

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान् है, वे परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं। क्योंकि यह ब्रह्माण्ड उस परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ानें उड़ता रहता है। उन उड़ान उड़ने वालों में बहुत से ऋषि इस प्रकार के हुए हैं जिनका अनुसरण उनकी विचित्र एक महान् प्रतिक्रिया रही है। आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है, उसके गुणों का वर्णन कर रहा है। वह अनन्तमयी दृष्टिपात आने वाला है, प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा की सृष्टि को जब निहारने लगता है तो गम्भीरता से निहारता है, अपने में वह आन्तरिक मुद्रित हो जाता है। उस मुद्रा में प्रवेश हो करके निहारता रहता है, परन्तु जब यह संसार को अच्छी प्रकार जान लेता है, और व्यष्टि और समष्टि में दोनों का एक रस बना देता है, तो ज्ञान और विज्ञान के पश्चात् जो एक विवेकमयी धारा उत्पन्न होती है, जब यह विवेक अपने में जागरूक हो जाता है तो वे परमपिता परमात्मा का वह अमूल्य दृष्टि से उसके विज्ञान को और भी रूपों में निहारने लगता है परन्तु वह केसा विचित्र पुरुष है जो परमपिता परमात्मा को एक अमूल्य आभा में निहारता रहता है और उस निहारने का परिणाम यह होता है कि उसके हृदय की जो ग्रन्थियाँ हैं उनका स्पष्टीकरण हो करके वह इस ब्रह्माण्ड को अपने में ही दृष्टिपात करने लगता है।

मैं विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ। हमारा विषय कुछ और चल रहा है। आज मैं प्राण सूत्र में तुम्हें पिरोना विशेष नहीं चाहता हूँ क्योंकि वह पिरोना ही ब्रह्मवर्तों प्रवाह।

इससे पूर्वकाल में हम नाना प्रकार के क्षेत्रों की चर्चाएँ कर रहे थे, परन्तु जब हम नाना प्रकार के यागों में परणित होते हैं और सृष्टि के प्रारम्भ के ऋषि मुनियों ने याग के ऊपर अपनी टिप्पणियाँ जब प्रारम्भ कीं तो यह संसार एक यज्ञमयी दृष्टिपात आने लगा। ऋषि मुनियों ने उसी नृत्य को समाधिष्ट हो करके प्राण और अपान में रत्त हो करके ड़ान में उसकी पुट लगा करके और समान उसके ऊपर विश्राम कर जाता है। वह जो उड़ान ब्रहे, वह जब अपने में विश्रामित हो जाता है तो इस ब्रह्माण्ड और याग को एक ही स्वरूप में वह दृष्टिपात करने लगता है। मानव का जितना भी क्रिया कलाप है वह सर्वत्र वास्तविक रूपों में जब आता है तो वह याग में भासने लगता है। जब याग में वह भासता रहता है तो महानता का प्रायः दर्शन हो जाता है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा लगी रहती है कि मैं उस पगडण्डी को ग्रहण करना चाहता हूँ जिस पगडंडी को ग्रहण करने से मेरा सखा मुझे प्राप्त हो जाए। मेरा देव! मैं देव की देवतवता को दृष्टिपात करने लगूं। प्रत्येक मानव की यह आकांक्षा लगी रहती है, प्रत्येक मानव अपने में सुखद और आनन्द की प्रतिभा को चाहता रहता है। चाहे वह याज्ञिक हो, परन्तु भौतिक विज्ञान में हो, चाहे वह आध्यात्मिक विज्ञान में हो, चाहे वह राष्ट्रीय स्तरों वाला प्राणी हो, चाहे अराष्ट्र वाला हो, प्रत्येक प्राणी उस पगडण्डी को चाहता है, जिस पगडण्डी को गमन करने के पश्चात् मेरे मार्ग में एक आनन्द की अनुभूति मुझे प्राप्त हो जाए, उसको वह चाहता रहता है।

आज का हमारा वेदमन्त्र बेटा! क्या कह रहा है? मैं महाराजा अश्वपति की चर्चाएँ कर रहा हूँ। कई समय हो गए हैं, महाराजा अश्वपति एक महान राजा थे। उस राजा के क्रिया कलाप में, उसकी क्रियाओं में यह रहता था कि वह स्वतः अपने में कला कौशल करके अपने कृषि का उद्गम करके उस मानव अन्नाद को पान करते थे और उस अन्न को पान करके ही मुनिवरों! देखो,! वह राष्ट्र, राष्ट्र की राष्ट्रीयता उद्घोष करती रहती थी अथवा उसका पालन करते रहते थे। परन्तु जब यह विचारआता है कि वह अपने में राजा कृषि का उद्गम करके ही पान क्यों करते थे? देखो, माता वसुन्धरा मानव को परिश्रम के पश्चात् नाना प्रकार की वनस्पतियाँ और देखो, नाना अन्नाद को देती हैं, जैसे

मेरी प्यारी माता अपने बालक को लोरियों का पान कराती हुई और वह उसे ऊर्ध्वा में उद्घोष करती है और जैसे माता मल्दालसा का जीवन मुझे प्रायः हमें स्मरण आ रहा है। माता कौशल्या का जीवन भी प्रायः स्मरण आता रहता है वह जब लोरियों का पान कराती है माता तो अपने बाल्य को अपने विचारों में महान् बना करके और बाल्य को एक महानता की शिक्षा देती है और वह बालक को महान् बना देती है, पवित्र बना देती है। तो वह जो उसकी पवित्रता है वही तो उसके जीवन के एक सार्थकता का एक मूलक माना गया है। तो इसी प्रकार राजा अपने राष्ट्र में उस अन्न को पान करके यह चाहता है कि मेरा राष्ट्र का जितना प्राणीमात्र है, वह महान् बना रहेगा। प्राणीमात्र में सदैव प्रीति की तरंगें ओत प्रोत हो जाएँ। राजा के हृदय में यह आकांक्षा प्रायः लगी ही रहती है। राजा इसलिए स्वयम् उद्यम कृषि का करना और देखो, राष्ट्र को महान् और बुद्धिजीवी बनाने का उनका एक क्रिया कलाप रहता था।

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण है, एक समय महाराजा अश्वपति ने एक सभा की। जितने भी राष्ट्र में विद्यालय थे, उन विद्यालयों के राष्ट्रीय कृतियों में बृह्मा, आचार्यों को निमित किया और आचार्यों की एक सभा हुई और महाराज अश्वति ने सभा में अपना यह उद्घोष किया कि हे आचार्यजनो! तुम अपने जीवन की आचार संहिता बनाते रहते हो। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि राष्ट्र में विद्या का जो घोष है, जिस विद्या को तुमने निगला है वह विद्या तुम ब्रह्मचारियों को प्रदान करते हो, विद्यार्थियों को प्रदान करते रहते हो। उससे तुम क्षत्रिय और वैश्य, शूद्र इनमें इनकी बुद्धि को एक अंकित करते हुए, देखो, तुम चुनौती प्रदान करते हो। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह राष्ट्रीयता की जो विद्या है यह और कैसे ऊँची बन सकती है? उसका कोई हमें उद्घोष कीजिए। आचार्यजनों ने कहा कि हे राजन्! यदि तुम हमारे वाक् को स्वीकार करते हो तो हमारे जीवन में यह आता है कि यदि वह ब्रह्मचारी विद्यालय में अध्ययन कर रहा है, जो ब्रह्मचारी माता की लोरियों का पान कर रहा है, गृह आश्रम में जिस ब्रह्मचारी का निर्माण हो रहा है, वह स्वतः अपने में सुगन्धित हो जाए। जब वह विचारों की सुगन्धि से सुगन्धित होगा तो बाह्य जगत् की जो अमूल्य सुगन्धि है, उसको वह जान

करके राष्ट्रीयता में परणित करता रहेगा।

राजा ने कहा, हे आचार्यों! मैं तुम्हारे उद्देश्य को जान नहीं पाया हूँ। उन्होंने कहा, प्रभु एक समय हमारा विद्यार्थियों का एक मानव समूह द्वितीय राष्ट्र में पहुंचा। परन्तु वह जब श्वेतकेतु राष्ट्र में पहुंचा तो माधुरी माधुर्य एक राजा थे। जब उसके समीप पहुंचा तो विद्यालयों का ब्रह्मचारियों ने निरीक्षण किया और ब्रह्मचारियों ने जब निरीक्षण किया तो उन्होंने दृष्टिपात किया, प्रत्येक ब्रह्मचारी विद्यालय में अपने अपने आसनों पर विद्यमान हो करके याग की प्रतिक्रिया को रचा रहा है, याग की प्रतिभा में रत्त हो रहा है। जैसे महाराजा वशिष्ठ मुनि के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी प्रातःकालीन याग में परणित हो करके वह अपने में उद्घोष आचार्यों से ब्रह्म विद्या को पान करते थे। परन्तु देखो, कोई भी मानव हो इस संसार में राजा हो चाहे प्रजा हो, प्रजा में भी विद्यार्थी वर्ग हो, चाहे वह आचार्यजन जब तक उसमें याग की, याग का कर्मकाण्ड नहीं आ सकेगा, सत् का आचरण नहीं करेगा, राष्ट्र को राष्ट्रवादी नहीं मानेगा और अपने में, अपने जीवन के राष्ट्र को ऊँचा नहीं बना सकेगा तब तक यह जगत् ऊँचा नहीं बनेगा आचार्यों ने जब ऐसा कहा तो राजा ने कहा तुम्हारे आशय को नहीं जाना हूँ अब भी। परन्तु आचार्यों ने कहा प्रभु! जब तक मानव अपने स्वतः आचारसंहिता नहीं बनाता है और उसकी जो आचारसंहिता है वही उसको देखो, महान् बनाती है। राजा आने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो राजा को स्वतः अपनी आचारसंहिता महान् बनानी होगी और जब उसकी आचारसंहिता पवित्र बनती है तो प्रजा की बनती रहेगी और जब प्रजा की बनेगी तो यह संसार की बनेगी। इस प्रकार का विचार उन्होंने व्यक्त किया आचार्यों ने।

मेरे प्यारे! देखो,! राजा ने कहा तो आज से तुम्हें एक नियमावली देते हैं कि तुम्हारे विद्यालयों में प्रायः प्रातःकालीन गऊओं का पालन होना चाहिए, गो की सेवा होनी चाहिए। गो कौन है? गो दूध देने वाले पशु को भी गो कहा जाता है, परन्तु गो नाम इन्द्रियों को भी कहा गया है। मानव की देखो, ब्रह्मचारियों की इन्द्रियों पर संयम होना चाहिए, जब इन्द्रियों पर संयम हो जाता है तो गो घृतं ब्रह्मवाचाः यागाहम् वह जो दुग्ध देने वाला पशु है उसको मन्थन किया जाता है और मन्थन करके उसमें श्रद्धामयी घृत

का जन्म होता है। जैसे योगीजन अध्ययन करता रहता है, दर्शनों का अध्ययन करता रहता है, दर्शनों का अध्ययन करते करते उसे ज्ञान हो जाता है और ज्ञान के पश्चात् उसे विवेक हो जाता है तो विवेक क्या है? इसी प्रकार जैसे गो का दुग्ध है उसको मन्थन किया जाता है और मन्थन करके श्रद्धामयी घृत का जन्म होता है। तो इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, घृत के तुल्य श्रद्धामय प्रहा एक विवेक का जन्म होता है और वह जो विवेकी पुरुष है, वह जो विवेक में अपने को ले जाता है, वह जो विवेकी है वही तो राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाता है। अपनी आचारसंहिता उसकी बन गई है क्योंकि उसने संसार के स्थूल जगत् को त्याग दिया है। अपने विचार आकृतियों में रत्त हो करके विवेक को अपना लिया है।

विवेक किसे कहते हैं? किसी भी वस्तु में उसकी आसक्ति नहीं रहती। किसी भी वस्तु में वह आसक्त नहीं होता, वह केवल जो भी क्रिया कलाप हो रहा है वह भी प्रभु के आश्रित कर देता है और प्रभु का जगत् यह स्वीकार करता है और प्रभु का यह राष्ट्र स्वीकार करके वह संसार में अपने जीवन का, जीवन का अवरोध करने लगता है तो वह विवेकी पुरुष अपने में महान् बन करके संसार को, राष्ट्र को ऊँचा बना रहा है। राजा से यह घोषणा कराई कि ब्रह्म तुम्हारे यहाँ गऊओं का पालन होना चाहिए। गऊ किसे कहते हैं? एक तो विवेकी पुरुष गो के दुग्ध का मन्थन कर रहा है। वह कौन सा दुग्ध है? जैसे मानव की पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं और पांच ज्ञानेन्द्रियों का वह विषय एकत्रित करता है। उसके दुग्ध, उसके विषय रूपी दुग्ध को एकत्रित करता है। जैसे मैंने साकल्य की कल्पना की है, वह उसे एकत्रित करता है। नेत्रों से वह रूप को लेता है, घ्राण से वह मानो सुगन्धि को लेता है, मन्द सुगन्ध को लेता है और देखो, वह श्रोत्रों से शब्द को लेता है, त्वचा से स्पर्श लेता है, प्रीति लेता है और रसना से रसों को लेता है। परन्तु देखो, इनका वह एक विषय व्रताम् वह इन्द्रियों को ब्रह्म देखो, उसके दुग्ध को निकाल लेता है। वह इन्द्रियों का दुग्ध कहलाता है और उसका जब मन्थन करताह ै, जब उन विषयों का मन्थन करता है उसका चिन्तन करता है, विशाल चिन्तन करता है

तो नवीन ब्रह्माण्ड उसके समीप आ जाता है। केसा नवीन ब्रह्माण्ड आ गया है? देखो, जो अग्नि नेत्रों में समाहित थी वह अग्नि उसके समीप आ गई है जो तेजोमयी थी। पृथ्वी का जो सुगन्ध और गन्ध है वह उसका रूप है, वह भी उसके स्वरूप को जान गया है। प्रीति के स्वरूप को जान गया है वह रसों को, षट् रसों को जान करके, चन्द्रमा के रूप में और देखो, जल के रूप में वह संसारमयी रसना को दृष्टिपात करने लगता है।

मैं विशेष विवेचना नहीं, केवल विचार यह कि इनका वह मन्थन करता है और वह विवेक रूपी घृत का जन्म हो जाता है, ज्ञान रूपी आभा का जन्म हो जाता है। वह महान् बन करके अपने जीवन की देखो, विवेकमयी आचारसंहिता बन करके वह योगेश्वर बन जाता है। तो बेटा! मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। तुम्हें केवल परिचय यह देने के लिए आया हूँ कि हमें घृतं ब्रह्म राजा अश्वपति ने अपने राष्ट्र में यह घोषणा की कि मेरे राष्ट्र में गो का पालन होना चाहिए विद्यालय में। तो गो का पालन होने लगा। गो के दुग्ध को निकाला जाने लगा और निकाल करके उसका श्रद्धा मयी घृत को निकाला गया। राजा से यह प्राप्त किया गया कि हे राजन्! गो का घृत हो गया है अब हम क्या करें? तो राजा अश्वपति ने यह कहा यज्ञं ब्रह्म व्रतम् देवो ब्रह्म। वेद की आख्याकिया उच्चारण करके राजा ने कहा कि मेरे राष्ट्र में क्या विद्यालयों में याग होना चाहिए। उस याग से ही संसार की प्रतिक्रिया का जन्म होता है। राजा अश्वपति के राष्ट्र में यह घोषणा हुई कि इस घृत के द्वारा यह श्रद्धामयी घृत है, यह अग्निमयी घृत कहलाता है, यह गो ब्रह्म यह अग्नि है, गो और गो से दुग्ध और दुग्ध से घृत और घृत से अग्नि उसमें ओत प्रोत होती है।

केसी विचित्र धारा है मेरे देव की मुनिवरों! देखो, जब याज्ञिक याग करता है तो याग करके वह उसमें स्वाहा देता है, आहुतियाँ देता है, हूत करता है। तो वही श्रद्धामयी घृत मानव को द्यौ लोक में पहुंचा देता है। वायुमण्डल पवित्र बन जाता है। वायुमण्डल में एक महान् धारा का जन्म हो जाता है, जिस धारा को पान करके मानव अमरावती को प्राप्त हो जते हैं। तो विनिमय क्या? महाराजा अश्वपति ने यह अपने विद्यालयों में जा

करके यह घोषणा की कि प्रत्येक ब्रह्मचारी याज्ञिक में यागों में परणित होने वाला हो, याग की प्रतिक्रिया जाने और यज्ञशाला के अंग संग विद्यमान हो करके वह जल को परोक्षण में लेते हैं, जल को परोक्षण में ले करके जल का आचमन करते हुए वह कहते हैं, प्रभु से, हे प्रभु! यह जो जल है यह अमृत है। यह प्राणवर्द्धक है। जब कृषक की भूमि सुखद हो जाती है। और उसको जब जलोमयी अमृत प्रदान कर देते हैं तो अन्नाद को ले करके इस मानव के समीप आ जाता है। यह जल अमृत है, उदान में जब यह प्राण प्राणित होता है तो एक प्राणसत्ता को जन्म देता है वही अमूल्य से प्राणसत्ता है। उसे पान करके कहता है सम्भूति ब्रह्मा अमृताः हे देव! मैं अमृत को पान कर रहा हूँ। अमृत को अंग अंग से स्पर्श कर रहा हूँ। और अंग ब्रह्म वाचो कहता हूँ कि मेरी वाकशक्ति इतनी माधुर्य हो, इतनी पवित्र हो, जैसे यह जल अपने में शीतल और पवित्र प्राणवर्द्धक है। मेरी वाणी में प्राणसत्ता होनी चाहिए। जैसे एक उद्घोष करने वाला उद्घोष कर रहा है उसकी वाणी में बल है, सत्ता है, ऊर्ज्वा है उसी ऊर्ज्वा को ले करके अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाता है। वह राष्ट्र को भ ऊँचा बनाता है। इसके पश्चात् मुनिवरों! देखो, वह अपने में जल ब्रह्म वाचो देवाः बाह्य जगत् की प्रतिक्रिया को अपनेपन में ही धारण करता हुआ वह याग हो रहा है। जब वह याग हो रहा है तो राजा के विद्यालयों में यह घोषणा हो गई कि प्रत्येक विद्यालय में याग हो, प्रत्येक गृह में याग हो, जिससे गृह में प्रत्येक प्रातःकाल में वेद ध्वनि प्रत्येक गृह के आँगन से वेद ध्वनि अन्तरिक्ष को गुंजायमान करने वाली हो, ध्वनित करने वाली हो और वह जो ध्वनित होने वाली शब्दम् ब्रह्मा। उसी ध्वनि से तो गृह के परमाणु पवित्र होंगे, राष्ट्र के परमाणु पवित्र होंगे, विद्यालय महान् बनेगा। वायुमण्डल पवित्र बनता चला जाएगा।

तो वेद का विचार बेटा! बहुत ऊँची एक घोषणा कर रहा है। वेद बहुत ऊँची घोषणा करता है इस सम्बन्ध में वह कहता है यज्ञं ब्रह्मा व्रतम् देवाः। मानव का प्रत्येक क्रिया कलाप जितना भी संसार का है वह याग में परणित हो जाता है वह याग की धाराओं में रत्त हो जाता है। अग्न्याध्यान में जब अग्नि प्रदीप्त होती है, तो काष्ठों वाली अग्नि भी जागरूक हो जाती है। वह वायु में गति करने वाली जो धारा प्राण की है, वह भी अग्नि

में मिश्रण हो, मिश्रित हो करके वही तो यज्ञमान के सत्य को द्यौ लोक में पहुंचाती है। वही तो होताजनों के शब्दों को द्यौ लोक में ले जाती है। द्यौ क्या है? जहाँ मुनिवरों! देखो, प्रकाश है, अनुपमता है, महानता है, पवित्रता है ओजस्वता है वही तो मानवीतया को ऊँचा बनाता है। तो विचार क्या राजा अश्वपति प्रातःकालीन राष्ट्र में भ्रमण कर रहे हैं, विद्यालयों में भ्रमण कर रहे हैं आचार्यजन अपनी आचार संहिता में निहित हैं, ब्रह्मचारियों के मध्य में हैं, याग हो रहा है, प्राणों की प्रतिक्रिया का एक अनूठा अभ्यास कराया जा रहा है, जिससे प्राणसूत्र में मानव पिरोने वाला हो। वास्तव में विचार किया गया है वेद के विचार से वाक् आता है कि प्रत्येक शब्द प्राणसूत्र में पिरोया हुआ है। प्रत्येक परमाणु प्राणसूत्र में पिरोया हुआ है।

मुनिवरों! देखो, राजा अश्वपति ने जब विद्यालय में यह घोषणा की तो वैज्ञानिकों के मध्य में पहुंची। वैज्ञानिक जब समय यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे, अणु और परमाणुओं को एकत्रित कर रहे थे, जहाँ उसमें से जिस भी परमाणु का ओजस्वी परमाणु का विभक्त करने वाले बनें, तब उसमें से एक महान् अपारशक्ति का जन्म हुआ। उस जन्म शक्ति से कुछ अशुद्धियाँ प्राणवर्द्धक और प्राणनाशक दोनों प्रकार की ऊर्जा का जन्म हुआ, ऊर्जा के जन्म होते ही राजा ने कहा, हे वैज्ञानिको यह क्या हो रहा है? उन्होंने कहा प्रभु! हम नहीं जान पाए हैं, उन्होंने कहा इसके ऊपर अनुसन्धान करो। तो वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए तत्पर हो गए। तो अनुसन्धान में यह जाना वैज्ञानिकों ने इस परमाणु को हम जिसका विभाजन करते हैं। जिसमें दोनों प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। एक प्राणनाशक है, एक प्राणवर्द्धक है। दोनों प्रकार के परमाणुओं का जन्म होता है, अब प्राणनाशक को कैसे समाप्त करें। क्योंकि वह वायुमण्डल को अपवित्र बनाएंगी और प्राणवर्द्धक वायुमण्डल का शोधन करेगी। तो उन्होंने कहा प्रभु! अब क्या करें? उन्होंने कहा तुम प्रातःकालीन याग की रचना करो। प्रातःकालीन तुम्हारे इस विद्यालय में विज्ञानशाला में एक यज्ञशाला होनी चाहिए, तुम्हारी आचार संहिता पवित्र होनी चाहिए। केवल विज्ञान के आँगन में न ले जाओ। तुम देखो, तुम्हारी आचार संहिता पवित्र हो तो प्रातःकालीन याग करो। प्रातःकालीन देव पूजा करो और वह देवपूजा है, साकल्यों

का संगतिकरण करो। जैसे तुम परमाणुओं का संगतिकरण करते हो, संगतिकरण करके एक दूसरे परमाणु का मिलान कर देते हो, जैसे जैसे पृथ्वी के परमाणु अग्नि में प्रवेश करते हो, अग्नि के परमाणु ले करके जल के परमाणु को ले करके उससे सम्मिश्रण करते हो और उसमें वायु की पुट लगाते हो, तो उसमें एक नवीन ऊर्ज्वा का जन्म होता है और उस नवीन ऊर्ज्वा को ले करके उसका पुनः मन्थन करते हो, उसे और सूक्ष्म बनाया जाता है। जब सूक्ष्म बना करके और नाना परमाणुओं को वायुमण्डल में लेकर के उस ऊर्ज्वा से उनका मिलान करते हो, तो कहीं कुड़ी ऊर्ज्वा बन करके उसका तुम यन्त्र निर्धारित करते हो। यन्त्रों का निर्माण करते हो, वहीं यन्त्र मानव को सूर्य की परिक्रमा करा रहा है, कोई चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है। कोई लोक लोकान्तरों में रत्त हो रहा है।

तो विचार आता रहता है उसी ऊर्ज्वा को देखो, तुम ब्रह्मवाचा तो उस ऊर्ज्वा को पवित्र बनाने के लिए तुम्हें याग की प्रतिभा में रत्त होना होगा। राजा के इन वाक्यों को ऋषि मुनियों ने वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया कि हम प्रातःकालीन सुगन्ध करेंगे। नाना प्रकार के साकल्य उनके समीप थे। अनुसन्धान से यह प्रतीत हुआ कि बहुत सी वनस्पतियाँ ऐसी हैं और जो देखो, गो घृत हैं उसमें ऐसे परमाणु ऐसी मानव धाराओं का जन्म होता है जो अशुद्ध परमाणुओं को निगलते रहते हैं, जो प्राणनाशक जो धाराएँ हैं उसको निगल जाते हैं और निगल करके जैसे सम्भवा रहे उसको निगल करके शुद्धीकरण कर देते हैं। वायुमण्डल पवित्र बन जाता है। तो वैज्ञानिकों को यह जब सिद्ध हुआ तो वैज्ञानिकों ने प्रातःकालीन मिष्ठान और गो घृतम् देखो, श्रद्धामयी घृत को ले करके, उन्होंने कुछ औषधियों को एकत्रित करके उनका याग करते थे। प्रतःकालीन याग होता उसके पश्चात् विज्ञानशाला में अनुसन्धान होता। केवल महाराजा अश्वपति के यहाँ ही नहीं था, यह महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में भी प्रायः ऐसा होता रहता था। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ भी मुनिवरों! देखो, इस प्रकार का अन्वेषण, अनुसन्धान विचारणीय था। उनकी सभाओं में भी एक विचारणीय प्रश्न बना हुआ था। परन्तु उनके यहाँ एक यज्ञशाला में नाना यन्त्र और उन यन्त्रों में भी एक अमूल्य धारा इस प्रकार की

थी कि इसको जान करके मानव का हृदय एक घृत बन जाता था।
मुझे स्मरण आता रहता है वही विज्ञानशाला का अनुसरण करते, राजा अश्वपति के राष्ट्र में हुआ और उसके राष्ट्र में उसकी प्रतिभा ऐसी विचित्र बनी इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण हुआ। शब्द चित्रावली आभा में रत्त रहा, उसमें ओत प्रोत रहती। मैं विशेष विवेचना में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। मैं विज्ञान के युग में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह कि राजा अश्वपति के राष्ट्र में आचार संहिता के ऊपर मैं अपने विचारार्थ दे रहा था। उनकी आचार संहिता क्रिया कलाप में विचित्र थी। आज विद्यालयों को ऊँचा बनाना है, तो विद्यालयों में आचार संहिता होनी चाहिए और भिन्न भिन्न प्रकार के याग होने चाहिए। सबसे प्रथम विचारों का याग हो देखो, आचार्य विचार रखो, ब्रह्मचारियों को ले करके विचारों का याग करने वाले हों। विचार कैसे हों? उसकी वाणी का पुनः शोधन होना चाहिए। उसकी वाणी में पवित्रता होनी चाहिए और वही पवित्रता उसके मानवीयता को ऊँचा बनाती है।
तो आज मैं विशेष विवेचना में तो तुम्हें ले जाने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक आभा में आचार पवित्र हो। जैसा मुझे स्मरण आता रहता है त्रेता के काल का राष्ट्र और उनकी प्रतिभा भगवान् राम जब याग करते थे प्रातःकालीन, तो यह घोषणा करते थे, उनकी यह घोषणा होती थी राष्ट्र के कर्मचारियों से कि प्रत्येक गृह से वेद की सुगन्धि होनी चाहिए। अग्नि में आहुति देने के शब्द होने चाहिए। वेद के मन्त्रों की ध्वनि होनी चाहिए, जिससे वायु मण्डल और गृह दोनों पवित्र बन जाएँ और पवित्र बन करके मानव समाज सत्यता के आँगन में प्रवेश करके अपने को ऊँचा बनाता रहे। तो मुनिवरों! देखो, यह प्रातःकालीन देवयाग प्रत्येक मानव के गृह में होते रहते थे।
एक समय मुझे स्मरण हैं जब भगवान राम का राष्ट्र पनप रहा था और अयोध्या में इस प्रकार की अयोध्या का निर्माण था जैसे मानव का शरीर है, अष्ट चक्र और नौ द्वारों वाली अयोध्यापुरी कहलाती थी। उसमें अष्टचक्र थे और नौ द्वार थे, जैसे मानव के शरीर में अष्ट चक्र और नौ द्वार हैं इसी प्रकार अयोध्या का निर्माण किसी काल में भगवान् मनु ने किया था। भगवान् मनु ने अयोध्या को अनेकों वृत किया था, उसको अपने में

निर्माणित किया था। महाराजा अश्वपति ने भी अयोध्या राष्ट्र में ही अपनी राष्ट्रीयता का पालन किया है।
परन्तु विचार क्या? भगवान् राम के समीप कुछ ऋषि मुनि पहुंचे तो जब ऋषि मुनि राजा भगवान राम के समीप पहुंचे तो उन्होंने कहा प्रभु! आओ, आप तो वेद के मर्म को जानने वाले हो, बुद्धिजीवी हो, चलो आज हम अयोध्या राष्ट्र में भ्रमण करेंगे। हमारे राष्ट्र में प्रातःकालीन वेदध्वनियाँ आती हैं या नहीं आती, जैसे हम अपने राष्ट्र में अपने गृह में वेदध्वनि के द्वारा सुगन्धित करते हैं, ऐसे ही मैं अपने राष्ट्र को जानना चाहता हूँ। तो ऋषिवर कुछ ऋषि और भगवान राम दोनों ने अयोध्या राष्ट्र में भ्रमण करना प्रारम्भ किया। बेटा! देखो, अयोध्या नगरी में जब भ्रमण किया तो प्रत्येक गृह से प्रातःकालीन सूर्य उदय होने से पूर्व ध्वनियाँ आ रही हैं और सुगन्धि आ रही है प्रत्येक गृह से। भगवान् राम बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्नचित्त हो करके ऋषियों से बोले कि प्रभु! यह जो तुम हमें नाना शिक्षा देते रहते, शिक्षा का यह परिणाम है। देखो, सर्वत्र राष्ट्र में नगरी में भ्रमण किया, उप नगरों में पहुंचे उप नगरों में भी सुगन्धि आ रही है। वनों में पहुंचे जहाँ मानव विद्यमान है वहाँ भी याग कर रहा है, कोई जल से याग कर रहा है, कोई याग सुगन्धि से कर रहा है। जल से कैसे होता है?
महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज एक समय अपनी स्थली पर विद्यमान थे। उनसे ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! हम याग करना चाहते हैं, परन्तु याग में यदि समिधा न हो, घृत न हो तो हम क्या करें? उन्होंने कहा समिधा न हो तो कोई बात नहीं, अग्नि में अप्रतम् देखो, अग्नि भी न हो तो उन्होंने साकल्य से आहुति दी। उन्होंने कहा साकल्य को देखो, वह पृथ्वी में अर्पित कर दो, उन्होंने कहा साकल्य भी न हो, उन्होंने कहा कि मन्त्रों के द्वारा याग करो, मन्त्रों से वह जल को लो और जल से परोक्षण करके प्रत्येक आहुति स्वाहा की दो। परन्तु देखो, जल से भी परोक्षण किया जाता है। उन्होंने कहा प्रभु! यदि यह जल भी न हो, जल का अभाव हो, उन्होंने कहा तो मन से आहुति दो। मानव उद्घोष करो मन्त्रों का, आहुति देना प्रारम्भ करो। उन्होंने कहा प्रभु! यह आलस्य प्रहे ब्रह्मा वास्तव में तुम्हारा वाक् यथार्थ है मन्त्रों के द्वारा ध्वनि होनी चाहिए। क्योंकि

देखो, जहाँ अग्नि होत्र किया जाता है देवपूजा के रूप में यदि वह मानव प्रातःकालीन वेद मन्त्रों का उद्घोष करता है तो वाणी जितनी पवित्र होगी, जैसे वाणी पवित्र है और वाणी पवित्र वाला उद्घोष कर रहा है, तो वह वायु मण्डल पवित्र बन रहा है। यदि वह अग्नि में आहुति दे रहा है तो उससे अधिक प्रभाव हो गया है। यदि वह मानव बृह्म जलम् बृही वृत्ताम् देवाः यदि वह अग्नि में साकल्य दे रहा है और मन्त्रों का उद्घोष कर रहा है तो और भी महानता बन रही है। जितनी भी उसमें प्रतियाँ बनती रहेंगी उतना ही वह महान् क्रिया रूपों में रत्त होता रहेगा। वेद का ऋषि कहता है याज्ञवलक्य मुनि महाराज के वाक्य उद्धृत करते हुए भगवान् राम ने कहा कि ऐसा भगवन्! ऋषियों ने वर्णन किया है। तुम्हारी क्या विचारधारा है? उन्होंने कहा बहुत प्रियतम हम इसको स्वीकार करते हैं।

विचार विनिमय क्या? मानव को अपने विचारों को इतना पवित्र बन करके अपनी आचार संहिता इतनी महान् बननी चाहिए जिससे राष्ट्र पवित्र बन करके राजा उसकी प्रतिक्रिया का निर्माण करने वाला हो। अश्वपति ने जब विद्यालयों में यह घोष करा दिया, नगरियों में घोष करा दिया कि मेरे राष्ट्र में याग होने चाहिए। तो महाराजा अश्वपति और महामन्त्री पुरोहित को ले करके राष्ट्र का भ्रमण कर रहे थे। विद्यालयों में प्रातःकालीन, विद्यालयों में ध्वनियाँ हो रही हैं, वेद ध्वनि हो रही है, उद्गीत गाए जा रहे हैं, ब्रह्म का चिन्तन हो रहा है। जो उपनगरों में पहुचे वहाँ भी प्रत्येक गृह में प्रायः ऐसा ही हो रहा था। तो राजा अश्वपति ने प्रत्येक उपनगरियों में एक पुरोहित को निर्वाचित्त किया और उस पुरोहित का यही कार्य था कि वह प्रत्येक गृह में देखो, सुगन्धि आनी चाहिए, किसी भी रूप में हो परन्तु वह सुगन्धि विचारों के रूप में हो, प्रीति के रूप में हो। यह महाराजा अश्वपति ने घोष किया। राजाओं के विचारों में जब इस प्रकार की प्रतिभा बन जाती है तो राष्ट्र पवित्र बन जाता है। यह जो दूषित वायुमण्डल हो हो रहा है, यह जो दूषित ऊष्णा हो रहा है, यह नहीं रह सकेगा किसी भी काल में और जब तक यहाँ नाना प्रकार के संघर्ष करता रहेगा, एक दूसरे में विवाद बना रहेगा, एक दूसरे में संघर्ष बना रहेगा, एक दूसरे के विचार क्रोधमयी बने रहेंगे, लल्हाट बने रहेंगे, ईर्ष्या और घृणा में

युक्त रहेंगे, यह वायु मण्डल कदापि भी पवित्र नहीं बन सकता।

ब्रह्मा वाचप प्रहे लोकाम् मैं बहुत उदाहरण देने के लिए चल पड़ा हूँ परन्तु इतना समय तो है नहीं। एक और दिए देता हूँ कि महाराजा! शुकेतुकातुक राजा थे, वह शुकेतुकातुक राजा लंका के राजा रावण से एक हजार प्रणाली के, प्रणाली से पूर्व सुकेतु राजा थे और राजा के राष्ट्र में अशान्ति आ गई और सुकेतु राजा के राष्ट्र में अशान्ति क्यों आई? राजा न रह करके, राजा तो थे ही परन्तु उनकी आचार संहिता भ्रष्ट हो गई थी, परादेवी गामी बन गए। जब गमन करने लगे, सुरा पान करने लगे मदम् ब्रह्मः दूसरे प्राणियों के गर्भ को पान करने लगे तो प्रजा का उसका अनुसरण करने लगी। जब प्रजा में इस प्रकार की धाराओं का जन्म होने लगा तो राजा के राष्ट्र में अशान्ति आ गई, द्रव्य की बलवती हो गई और द्रव्य के बलवती होने पर उसमें सामान्यता न रह करके अशान्ति का उद्घोष हो गया। जब अशान्ति बलवती बन गई, अशान्ति आ गई, उसका मूल कारण क्या कि एक दूसरा प्राणी स्वार्थ की परिता में आ करके एक दूसरे प्राणों को हनन करने लगा। जब एक दूसरे प्राणों को हनन करने लगा, अज्ञानता आ गई, अज्ञानता के मूल में रूढ़िवाद आ गया। धर्म के नामों पर नाना प्रकार का रूढ़िवाद बन गया, तो राजा ही अशान्ति का मूल कारण बन गया। राजा ही अशान्ति में परणित हो गया। बहुत समय हो गया जब प्रणाली व्रहे आकृतियों में बन गई तो कुछ बुद्धिमान उनके द्वार आए। उन्होंने कहा सुकेतु राजा तेरा राष्ट्र तो अशान्त बन गया है। मैं नहीं जानता यह क्या कारण बन गया है, यह नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन गई हैं, धर्म के नामों पर रूढ़ियाँ बन गई हैं और रूढ़ियाँ बन करके एक दूसरा प्राणी प्राणी को नष्ट कर रहा है। यह वायुमण्डल अपवित्र बन गया है। इस वायुमण्डल में देखो, दूषित वायुमण्डल बन गया है। विज्ञान का तेरे राष्ट्र में दुरूपयोग हो रहा है, मेरी पुत्रियों के असीम चित्रों के चित्रण हो करके देखो, मानव प्रसन्न हो रहा है, इस प्रकार की धारा अनेक रूपों में बन रही है। हे राजन! ऐसा प्रतीत हो रहा है तुम्हारा राष्ट्र अब नष्ट होने वाला है। जब ऋषि मुनियों ने, बुद्धिजीवीयों ने यह वाक् राजा को कहा तो राजा कहाँ श्रवण करता? राजा के मस्तिष्क में तो स्वार्थ परिता का एक गति हो रहा था, परन्तु बुद्धिमानों ने विचारा

क्या करें? तो बुद्धिमानों ने एक ब्रह्मक्रान्ति प्रारम्भ की, मानव कुछ समाज को अपनाया। समाज को अपना करके मृत्यु को प्राप्त हो गया, उनका पुत्र यह जानता था, सुकेतु के पुत्र मान्धाता हुआ और मान्धाता देखो, महान् बना, वह याज्ञिक बन करके अपने राष्ट्र को पुनः से उसने ऊँचा बनाया। तो इस प्रकार विचार आते रहते है। कि जब राजा के राष्ट्रीयता, आचार संहिता जब भ्रष्ट हो जाती है तो यह नाना प्रकार के विचारों में द्वेष, ईर्ष्या की अग्नि जागरूक हो जाती है। वही अग्नि रूढ़िवाद के आसनों में पनपती रही है और वही राष्ट्र के विनाश का कारण बन जाती है। एक दूसरे के रक्तों को पान करने लगता है। जब मैं इन विचारों को ले करके गति करता हूँ तो मेरा हृदय दुःखित होता है।

परन्तु आज मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। महाराजा अश्वपति की मैं यह चर्चा कर रहा था कि उसने अपने राष्ट्र में प्रत्येक गृह में वेदरूपी प्रकाश को ज्ञान को अपनाने के लिए उद्घोष किया। आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्राय क्या है कि प्रत्येक मानव को अपनी आचार संहिता को बनाना चाहिए, विचित्र बन करके रहना चाहिए राग और द्वेषों से रहित हो करके, हिंसा से रहित हो करके अहिंसा में अपने विचारों को जब तक नहीं बनाओगे, तुम्हारा गृह पवित्र नहीं बनेगा, गृह ऊँचा नहीं बनेगा। तो ऊर्ज्वा सार्थक ऊर्ज्वा का जन्म नहीं होगा और जब ऊर्ज्वा का जन्म नहीं होगा तो बाह्य जगत् को भी ऊँचा नहीं बना सकेगा।

यह है बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूंगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण गान गाते हुए संसार सागर से पार हो जाएँ। यह है आज का वाक्, आज का वाक् अब हमारा समाप्त होने जा रहा है, शेष चर्चाएँ हम कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों को पठन पाठन। ई.31, लाजपत नगर 3 समय रात्रि 8.00

११ 22 09 1985 पुष्प 49 राजा को राष्ट्रहित में अहिंसक, याज्ञिक, सदाचारी

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण

गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन होता रहता है क्योंकि परम्परागतों से ही, हमारे ऋषि मुनि एक एक वेदमन्त्र को ले करके बहुत ऊँची ऊँची उड़ानें उड़ते रहते थे। वह यज्ञ सूत्रों में ब्रह्माण्ड को पिरोने का प्रयास प्रायः करते रहते थे और अपने मानवीय जीवन को उसी सूत्र में पिरोने का प्रायास करते थे। मानव के जन्म जन्मान्तर समाप्त हो जाते हैं, उस सूत्र में अपने जीवन को पिरोते हुए, परन्तु वह पिरोया नहीं जाता और जब पिरोया जाता है तो उस सूत्र का एक मनका बन करके इस सर्वत्र सूत्रों का एकीकरण बन जाता है। तो इसलिए कई समय हो गया है हम यज्ञ सूत्रों में अपने को पिरोने का प्रयास कर रहे हैं और अपने को पिरोना चाहते हैं यह उत्कट इच्छा बनी रहती है कि हम यज्ञमयी अपने को पिरोने वाले बन जाए।

परमपिता परमात्मा का यह जो अनूठा याग है जो कहीं यह अग्निहोत्र के रूप में दृष्टिपात आ रहा है, कहीं यह देव याग के रूप में दृष्टिपात आता है, कहीं यह पितरों के याग में दृष्टिपात आ रहा है, कहीं यह अतिथि याग के रूप में दृष्टिपात आ रहा है। तो यह भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का क्रिया कलाप है। यह प्रायः मानव के मस्तिष्कों में सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक की स्थलियों में निहित रहा है और बुद्धिमानों के मस्तिष्क में नृत्य करता रहता है। तपस्वियों का हृदय उससे तपश्चर बन जाता है। तो विचार क्या मेरे पुत्रो! हमें अपने जीवन को यागों में परणित कर देना चाहिए, समर्पित करना ही एक बलि स्थिति कहलाई जाती है, समर्पित करना ही हमारे लिए एक चरु कहलाती है और चरु को जब हम प्रदान कर देते हैं, वह दूसरों को सुगन्धि देती है और स्वतः अपने रूप को भस्म कर देती है। तो इसी प्रकार हम एक एक वस्तु से शिक्षार्थी बनें और शिक्षा ले करके हम अपने को उस ब्रह्म सूत्र में पिरोने वाले बनें जो यज्ञोमयी स्वरूप है, जिसका वह आयतन माना गया है। कई समय हो गए हैं विचार देते हुए आज भी मेरे प्यारे! महानन्द जी मुझे प्रेरणा देते रहते हैं यागों के सम्बन्ध में बहुत सी विचार धाराएँ। पुरातन काल में हमने अनुसन्धान भी किया था,

वह अनुसन्धान की वार्त्ता भी तुम्हें प्रगट कराते रहते हैं।
आज मुझे कोई अपनी विशेष विवेचना तो देनी है ही नहीं परन्तु इस सन्दर्भ में मेरे प्यारे! महानन्द जी बड़े उत्सुक हैं कि मैं अपने विचारों को व्यक्त करूं। प्रायः उनके विचार तो दाह युक्त होते हैं और वह ऐसे विचार हैं जिन विचारों का कोई हमारे विचारों में तो उसका ऊर्ध्वाकरण नहीं हो सका। परन्तु वह इनके हृदय में वेदना ही बनी रहती है और वह वेदनामयी शब्दों का उद्घोष करती रहती थी। परन्तु आज का हमारा विचार क्या कह रहा है कि हम अपने में याज्ञिक बन करके अपने जीवन को यज्ञ सूत्र में पिरोने का प्रयास करें। संसार का जितना भी आत्मीयकर्म है, आत्मीय क्रिया कलाप है वह सर्वत्र एक याग के रूप में परणित किया गया है। जितना भी मानव को सुविचार, जो अन्तरात्मा से उद्गार उत्पन्न होते हैं। चाहे वह सूर्यमण्डल में जाने के हों, चाहे वह मंगल में जाने के हों, चाहे वह पृथ्वी के ऊपर भिन्न भिन्न प्रकार की गतियों में लाने वाले हों, परन्तु वह सर्वत्र एक याग के रूप में प्रायः हमें दृष्टिपात आता है। जैसे परमपिता परमात्मा का सखा परमात्मा ही की चर्चा कर रहा है और वही एक याग के रूप में उसका परिवर्तन होता रहता है। तो विचार क्या? सवर्रूत्रता में जितना भी सुआत्मीय मानवत्व स्थली पर एक याग की विवेचना प्रायः हमारे मष्तिष्कों में नृत्य करती रहती है। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अब मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे क्योंकि इनके हृदय में एक दाह रहती है, एक वेदना और विडम्बना बनी रहती है। उस विडम्बना के रूपों में अपने विचार व्यक्त कर ही रहे हैं। बहुत समय हो गया है संसार का परिचय देते रहते हैं। आज भी पुनः से उसका परिचय देने वाले हैं।
गतौ शन्ना वाचन्नमम् ब्रह्मः गृहणान्त्वाः।
मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे भद्र ऋषि मण्डल और मानव समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी यागों की भूमिका बना रहे थे और याग के सम्बन्ध में इनका जो अनूठा अध्ययन हैं संसार की प्रत्येक वस्तुओं को ला ला करके वह हमारे समीप नियुक्त करते रहते हैं। परन्तु आज जो यह आधुनिक एक प्रतिक्रिया का जो काल उद्बुद्ध हो रहा है, अभी अभी हमारा एक याग सम्पन्न होने के रूप में हमें दृष्टिपात हुआ। मेरा अन्तरात्मा

बड़ा प्रसन्न रहता है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो गम्भीर समुद्र में चले जाते हैं और वह ऐसा गम्भीर समुद्र है जिसमें नाना प्रकार के रत्नों और स्वर्णमयी धाराओं को ला करके हमारे समीप नियुक्त करते रहते हैं। परन्तु मैं तो इतना नहीं क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव के समीप यदि मैं अपनी धृष्टता करूंगा, तो यह मेरे लिए प्रियतम नहीं होगा। मेरे पूज्यपाद तो आत्मा परमात्मा की क्या याग के ऊपर बहुत अध्ययन संसार के प्रायः वस्तुओं में रत्त नहीं हुए। परन्तु मैंने बहुत अध्ययन करने के पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव से एक ही वाक् पाया है कि संसार में मानव को अपनी मानवीयता को विचित्र बनाना है। पूज्यपाद कह रहे थे इससे पूर्वकाल में प्रत्येक मानव को अपनी आचार संहिता का निर्माण करना चाहिए। जब तक हमारी आचार संहिता पवित्र नहीं होगी तो हमारा जीवन उद्बुद्ध नहीं हो सकेगा। आज यज्ञ की पूर्णता पर मेरा तो विचार सदैव यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य प्रायः अखंड बना रहे क्योंकि अखंडमयी ज्योति एक श्रद्धामयी ज्योति जागरूक हो जाती है। वह श्रद्धा की श्रद्धामयी जो देवी है वह मानव हृदय में उद्बुद्ध हो जाती है और सुप्रेरणा उसे प्राप्त होने लगती है। वह प्रेरणा यागों के रूप में हे यज्ञमान! तेरे जीवन की धरा, यह जीवन की धरा बन करके रहे और जीवन की धारा बन करके क्योंकि यह जो आधुनिक काल का युग मुझे दृष्टिपात आ रहा है, यह युग वास्तव में महापुरुषों का युग तो परम्परा से रहा है, परन्तु यह जो युग है इसमें जहाँ महापुरुष भी हैं तो वहीं वाममार्ग का विशेष प्रसार हो रहा है। वाममार्ग किसे कहते हैं? मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को बहुत पुरातन काल में निर्णय कराया आधुनिक काल में जो याग का खंडन करता है, जो याग को जानता नहीं है, जो याग के स्वरूप के प्रति अपने स्वरूप को मिलान नहीं कराता, वह एक वाममार्ग कहलाता है। परन्तु जैसे जैसे मध्यकालीन अतीत के काल में एक वाममार्ग सम्पदा बना था और वाममार्ग सम्पदा ने इस याग को प्राप्त करना चाहा। इसमें मांस इत्यादियों की आहुति देना, गो इत्यादियों के मांस की ओर इनके अंगों की आहुति देना, उनका एक नृत्य बन गया था। आधुनिक काल में जब मैं दृष्टिपात करता हूँ वह काल तो अतीत में चला गया। जो मैं आधुनिक काल में दृष्टिपात करता हूँ तो सर्वत्र यह जो ब्रह्माण्ड यह जो

संसार है, पृथ्वी मण्डल है इसमें बीज के अंकुरों को त्याग करके मैं यह कह सकता हूँ कि अब इस समय जो वाममार्ग का प्रसार है वह बहुत ही उससे महाबलवती बना हुआ है। प्रत्येक मानव दूसरे के प्राणियों के रक्त को पान कर रहा है, दूसरे के प्राणियों पान करके अपने उदर की पूर्ति करने और अपने ऐश और उल्लास को उन्नत करना चाहता है। मैं यह कहता हूँ कि ऐसे उल्लास को उन्नत करना चाहता है। मैं यह कहता हूँ कि ऐसे उल्लास से समाज का जीवन कैसे बनेगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इसमें पूर्वकाल में एक राष्ट्र का मुझे वर्णन कराया था। इन्होंने राष्ट्र का एक रूपक दिया, मुझे और उससे हमें यह मान हो गया कि राजा ही यहाँ वाममार्गी हैं जो प्राणियों को अग्नि में तपा करके उनके रसों का पान करने वाला वह राजा नहीं, वह वाममार्गी कहलाता है। वाममार्ग कहते हैं जो उल्टे मार्ग की गति करता है, उसका संयुक्त मार्ग नहीं, परन्तु मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि जो मानव मांस का भक्षण कर रहा है, जो दूसरों के गर्भ को पान कर रहा है, वह सब वाममार्ग की प्रथा यह कहाँ जा करके इसका शमन होगा। जब मैं यह विचारता हूँ कि देखो, यहाँ मुहम्मद के मानने वाले जब गोष्ठियाँ करते हैं तो यह कहते हैं कि हमारा जो मत है, हमारा जो मदप्रही रूढ़ि है वह एकांकी ईश्वर के ऊपर निर्धारित है। परन्तु यह द्वितीय जो धर्म के आलम्बी हैं यह नाना देवी देवताओं को स्वीकार करते हैं। यह कुछ में बिखरे हुए हैं परन्तु इनके विकृत हो रहे हैं। मैं भी कह रहा हूँ, वही नहीं कहते, मैं भी उच्चारण कर रहा हूँ परन्तु जब मैं उनके द्वार पर जाता हूँ, यह कहता हूँ कि तुम्हारे यहाँ जो एक वाममार्ग की प्रथा बनी, देखो, जब इसको तुम स्वीकार करते हो, मैं मुहम्मद हूँ, परन्तु मुहम्मद का प्रारम्भ का जो समाज हुआ, उसे समाज में कोई भी प्राणी उनके अंग संग आने वाला कोई भी मांस भक्षण करने वाला नहीं था, कोई भी मांस भक्षण नहीं करता था। केवल अन्नाद की महात्मा मुहम्मद ने, मैं महात्मा तो उसे नहीं कहता हूँ, यह राष्ट्रीय स्थल वाला कह सकता हूँ। उनकी पत्नी ने देखो, 12 वर्षों का बहुत काल तक उन्हें सत अन्नाद का पान कराया जो ऋषि मुनि किया करते थे पुरातन काल में। उस अन्न को तपा करके देती थीं, उसी में वह महान् बन गए थे महानता की ज्योति आ गई थी।

उसका परिणाम यह हुआ कि जो उस राष्ट्र में दूसरे के प्राणों को भक्षण करने वाले थे, वह दूसरों के अनग्रहे उसके स्त्रियों, गर्भों को पान करने वाले थे। जब वह स्थलियों पर आए तो उसका उन्होंने खण्डन किया और अच्छाइयों का मण्डन करना प्रारम्भ किया। वह राष्ट्रीयवादी बन गए।

जब मैं यह विचारता हूँ कि इसके मानने वाले क्या कर रहे हैं? उसके मानने वाले उस वाममार्ग को उन्होंने अपनाया है, जिस वाममार्ग में देखो, कहीं भी स्थली ऐसी नहीं है जहाँ अच्छाइयों का अंकुर हमें प्राप्त हो जाए। केवल देखो, जितने भी इस मानव का यह स्वभाव है, मन का स्वभाव है जहाँ इसे मन के, प्रकृति के हिंसकवाद इसके समीप आते हैं, यह मन उतना ही प्रसन्न होता है और जितना ब्रह्म के आँगन में गति करता है या चेतना में जाने की उत्सुकता में लगता है तो वहीं यह खण्डन में लग जाता है। यह उकसा अन्तरात्मा से विरोध करता है, विरोधाभास हो जाता है। जैसे एक मानव परमात्मा के लिए, साधना करने के लिए तत्पर होता है परन्तु वह साधना करता है तो मन ऐसे ऐसे गति करता है जैसे सूर्य की किरण अपने प्रकाश के लिए गति करती है, ऐसे यह मन गति करता है। वह भी प्रकाश का, प्रकाश की गति भी देखो, धुंध में चली जाती है परन्तु ऐसा यह गतिवान गति को ले करके भ्रमण करता है। तो उसकी जो आकांक्षा है साधक की वह भी अपने में शून्यगति को प्राप्त हो जाती है। नाना प्रकार के संस्कार चित्त के मण्डलों में से ला लाकर के इसके समीप नियुक्त कर देता है। साधक तो साधक अपने में शून्य बन जाता है। इसी प्रकार मुहम्मद के मानने वालों की यह मैं प्रथा उद्गीत गा रहा था कि उनके यहाँ वाममार्ग जो प्राणियों का भक्षण करने वाले थे, जो प्राणियों की बलि प्रदान करने वाले हों, बलि के अर्थों को जो समाज नहीं जानता वह भी अज्ञान के उस गढ़े में परणित हो जाता है, जहाँ उसे प्रकाश का अंकुर प्राप्त नहीं होता। वह मानव कहता है कि मैं बलि दे रहा हूँ। अरे, मानव! बलि के अर्थों को जानने का प्रयास करो। हमारे यहाँ बलि देना कोई पाप नहीं है। बलि का अर्थ केवल समर्पित कर देना है। जब अपने को समर्पित करता है, उसका नाम बलि है। बलि प्राणी को नष्ट करके उसे आहार करना बलि नहीं कहलाती है। बलि करते हैं जो अपने में

पुरुषार्थ करता है, बलि का अर्थ क्या बना?

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया था। एक समय हम दोनों एक राजा के याग में पहुंचे थे। उसके यहाँ जितना कृषक समाज था वह निठल्ला बन गया और कृषक समाज ने क्रिया करना प्रायः समाप्त कर दिया था, शून्य बन गए। तो राजा ने उन्हें उल्लासता में परिणित कराया और हमें भी राष्ट्र में ले गए। तो वहाँ एक उल्लास की धारा का जन्म हुआ, तो कृषक अपनी बलि देना प्रारम्भ करने लगा पुरुषार्थ करने लगा, अपने को समर्पित कर दिया। तो पुरुषार्थ में उसका परिणाम यह हुआ कि जहाँ बलि दी तो उल्लास बन गया। राजा का राष्ट्र पुनः से सम्पन्न बन गया। गृह गृह में पुष्पांजलियाँ छा गईं। तो परिणाम यह हुआ उनका कि उनके राष्ट्र में एक महानता का जन्म होने लगा, जो एक बृहा वाचक बनने लगा। पृथ्वी अपने स्वरूप में उद्गीत गाने लगी। तो विचार क्या? इस प्रकार का जो वृताम् बलि का अभिप्राय है कि प्रत्येक मानव जैसे देखो, अपनी युवावस्था से ले करके वृद्धाकाल तक क्रिया कलाप करता रहता है और गृह को अपने को समर्पित करता है, अपने पुत्रों! में, पौत्रों में, पत्नी में अपने को समर्पित करता है, तो वह समर्पित करना गृह के लिए उसे बलिदान हो जाना है। यह बलि कहलाई जाती है। यह बलि का अभिप्राय है। परन्तु आधुनिक काल में मुहम्मद के मानने वालों का एक दिवस आता है, वास्तव में तो प्रतिदिन इस प्रकार का है, जो धर्म के नामों पर वह जो सूक्ष्म राष्ट्रीय प्राणी हैं जो एक दूसरे प्राणी प्राणी का सहायक बना हुआ है, परन्तु उसको अग्नि में तपा करके उसको आहार कर जाते हैं, उसको वह बलि कहते हैं। अरे, भोले प्राणी! इसका नाम बलि नहीं है। बलि का अभिप्राय इतना है कि हम प्रभु का अपना समर्पि करना चाहते हैं, प्रत्येक इन्द्रियों को हम ज्ञान से सजातीय बना करके और प्रभु में अपने को समर्पित करते रहते, उसका नाम बलि कही जाती है। वह समर्पित करना है परन्तु मुहम्मद के मानने वालों ने यह एक इस प्रकार का जहाँ गो का भक्षण है प्राणियों का भक्षण करने लगता है, तो यह प्राणी उस आभा को समाप्त कर गया है जहाँ मानवप मानव में प्रीती की प्रतिभा आ जाए। यह राष्ट्र तक यह रूढ़ि सीमित रह जाती है। उसका परिणाम अशुद्धियाँ प्रतीत होने लगती हैं। उन रूढ़िवादों

में यह समाज परिणित हो गया है और परिणित हो करके एक प्राणी प्राणी का भक्षण करने के लिए तत्पर हो गया है। अरे, जिन प्राणियों को अपनी गो माता की बलि, दुग्ध देने वाले पशु की बलि और जो नाना प्रकार के लाभप्रदक बलि प्रदान कर देते हैं उनको नष्ट कर देते हैं, उनको बलि कह करके और अपने को नष्ट नहीं करते, जो उनकी वास्तव में बलि होनी चाहिए। परन्तु यह विडम्बना मेरे हृदय में बनी रहती है।

मैं राष्ट्र से कहता हूँ हे राजन! यदि तू सुचरित्र है, यदि तू महान् बनना चाहता है तो राष्ट्रीय स्तर पर विद्यमान हो करके ऐसे नियमों को धारण करा समाज से, जिन नियमों को धारण करा करके तेरे राष्ट्र में महानता की प्रतीति होने लगेगी मुझे वह काल भली भांति मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे स्मरण भी कराया है राम के काल में मनु सिद्धान्त को ले करके उन्होंने पद्धति का निर्माण किया था और अपने राष्ट्र में यह घोषणा कराई थी, उनके यहाँ नियमावली बना करती थी, उन नियमावलियों में यह निर्धारित किया कि याग होना चाहिए, सुगन्धि होनी चाहिए, दुर्गन्धि नहीं होनी चाहिए। दुर्गन्धि की मीमांसा करने वाला, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो दुर्गन्धि की मीमांसा करने वाला, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो दुर्गन्धि की मीमांसा भिन्न भिन्न प्रकार से करते हैं। मैं एक ही मीमांसा करने वाला हूँ और वह मीमांसा यह है कि मानव को अपने विचारों से ले करके, अपनी वाणी से ले करके प्राणी के रक्त को बहाने तक यह केवल अप्रताम् हिंसा कहलाती है। यह दुर्गन्ध कहलाती है। दुर्गन्ध क्या है? एक स्थली पर विद्यमान हो करके पति पत्नी अपनी स्थलियों पर विद्यमान हैं, बाल्य उनके समीप विद्यमान है। वह जानता है कि यह मेरे माता पिता हैं। जब वह अपने अपवाद में कोई विवेचना करते हैं, चर्चा करते हैं, तो अशुद्ध बन करके बालक अपवित्र कर देते हैं यहाँ तक हिंसा का कृत बन जाता है। मनु ने, हमारे ऋषि मुनियों ने यह कहा हे गृह स्वामी! हे गृह स्वामिनी! यदि तुम अपने गृह को ऊँचा बनाना चाहते हो, तो पांच वर्ष के बाल्य के समीप तुम्हें आमोद प्रमोद भी नहीं करना चाहिए। वह तुम्हारे बालक के जीवन को अशुद्ध बना देगा, उनमें एक विचार धारा संस्कार की उपलब्धि हो करके और वह आगे आने वाले भविष्य के समय में वह राष्ट्र और विचारों का घातक बन जाएगा। यहाँ तक मीमांसा ऋषि मुनियों

ने की, आचार्यों ने बहुत सी मामांसाएँ की हैं कि अशुद्धवाद नहीं होनाचाहिए। यदि राजा प्रजा के सुखार्थ के लिए एक वाक् यदि उसमें गर्भ पनप में उच्चारण होता है वह प्रियतम है और जिससे प्रजा का हनित होता हो, राजा को मिथ्यावादी नहीं बनना चाहिए। मिथ्यावादी वह राजा नहीं बनेगा जिसका आहार और व्यवहार आहार पवित्र नहीं होगा, आहार अपवित्र होगा तो विचार भी अपवित्र अवश्य बनेगा। आहार इतना पवित्र होना चाहिए कि वह आहार अपने भुजों की वृत्तियाँ परिश्रम वाला हो। वह अपने में परिश्रम करके उसे बलं वृहे अपने में पान करने वाला हो और राष्ट्र के लिए अपने हृ की वेदना प्रगट करने वाला हो। उस अध्याय के अनुसार अध्ययन उसका गम्भीर होना चाहिए।
मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कि आधुनिक यह जो काल चल रहा है यह एक वाममार्ग का काल चल रहा है, क्योंकि राजा वाममार्गी है। तो प्रजा भी वाममार्गी है, क्योंकि देखो, राजा नाना प्राणियों को पान कर जाता है प्रातःकाल होते ही तो प्रजा भी कर रही है, तो दोनों ही वाममार्गी है। तो हम कैसे उच्चारण करें कि यह समाज पवित्र बन रहाह ै, यह समाज महान् बन रहा है। जहाँ तक प्रकृति के तत्त्वों का समन्वय है, विज्ञान का समन्वय है, मैं विज्ञान की विवेचनाओं में ले जाता हूँ, तो विज्ञान मुझे सार्थकता में दृष्टिपात नहीं आ रहा है। विज्ञान का दुरूपयोग इसलिए है क्योंकि राजा अपने विचारों का दुरूपयोग कर रहा है। तो उसके विज्ञान का भी दुरूपयोग हो रहा है और जब विज्ञान की दुरूपयोगिता आ जाती है, उसी काल में देखो, रक्तमयी क्रान्ति का उद्घोष होने लगता है, रक्तमयी क्रान्ति की आभा का जन्म हो जाता है। वही रक्त में मानव अपने जीवन को राष्ट्रीयता को बना करके, सांत्वना को प्राप्त हो जाता है। आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह निर्णयकरा रहा हूँ कि हमारी यह आकाशवाणी मृत्युलोक में जा रही है जहाँ यागों का खंडन और यागों को जानते नहीं है। मेर पूज्यपाद गुरुदेव यागों की चर्चा कर रहे थे गम्भीरपूर्वक, राजा के राष्ट्रों की चर्चाएँ। राजा के राष्ट्र में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया कि प्रत्येक विद्यालयों में गो का पालन, उसके गृहस्थ याग होना ब्रह्मचारियों को आहार और व्यवहार में पवित्र बनाना, अध्ययन गम्भीर होना चाहिए। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव ने यागों का

वर्णन किया था कि यागाम विद्यालयों में होने चाहिए। आधुनिककाल का विद्यालय केसा हैं मैं विचारता रहता हूँ। मैं विद्यालयों में जब भ्रमण करता हूँ आधुनिककाल में वर्तमान के काल में तो विद्यालयों में ब्रह्मचारी कहीं एक दूसरे के प्राणों को हनन करने की गोष्ठियाँ यदि ब्रह्मचारियों में विभक्तवाद नहीं हुआ तो तुम्हारा जीवन रहेगा यहाँ। परन्तु मृत्यु का भय लगा हुआ है, मृत्यु के क्षेत्र में प्रवेश हो गए हैं। परन्तु मैं जब विद्यालयों में और गम्भीरता से भ्रमण करता हूँ तो विद्यालयों में जहाँ अमृतमयी सुगन्धि अन्न की होनी चाहिए। वहाँ देखो, भोज्य अन्न के द्वारा जहाँ अन्न का निर्माण हो रहा है वहाँ दुर्गन्धि उत्पन्न हो रही है, वहाँ मांस इत्यादियों का जहाँ ब्रह्मचारियों का मस्तिष्क अशुद्ध बन रहा है।

मेरे विचारों को आधुनिक काल का प्राणी यह कहता है कि कौन से काल की चर्चा कर रहे हो? परन्तु मैं यह कह रहा हूँ कि मैं प्रत्येक काल की चर्चा कर रहा हूँ। यह काल यह अच्छाइयाँ प्रत्येक अपने में उन्हें अपने अपने स्थलियों पर नृत्य करती रही हैं। मैं आधुनिक काल की विवेचना नहीं, भविष्य में तुम्हें प्रतीत होगा कि अतीत में क्या कहते थे, अतीत वाले क्या कह रहे थे, यह अब भी हो रहा है। अब भी वैज्ञानिकजन अपनी अपनी गोष्ठियाँ कर रहे हैं और गोष्ठियाँ करके यह विचारते है। अतीत के ऋषि मुनियों ने जो विचार दिया था उसको हम यन्त्रों में ग्रहण करना चाहते हैं। परन्तु देखो, वह यन्त्र का निर्माण ही नहीं हुआ। वह यन्त्र का निर्माण तो महाराजा भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में दृष्टिपात होता रहा है, उद्दालक गोत्र के ऋषियों में उनके सौ सौ महापिताओं के विचार और उनके चित्र ले करके यन्त्रों में मानव उनका अध्ययन करता रहता था। आधुनिक काल में तो वह चित्रावली नहीं आई, आधुनिक काल में तो वह चित्रावली मानवीय आभा में आ गई है, जिस चित्रावली से मानव अपने जीवन को मनोरंजन का एक नृत्य बना रहा है और अपने जीवन को भ्रष्ट कर रहा है, अपने बाल्य बालिकाओं को अग्नि के मुखारबिन्दु में परणित कर रहा है। परन्तु देखो, आधुनिक जगत् जब यह बुद्धकाल आयेगा समाज का उस समय यह मानव अनुभव करता है कि तुमने

अपने जीवन में महानता का कोई क्रिया कलाप नहीं किया।
आज मैं इन विचारों को विशेषता में नहीं देना चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि आज का हमारा वाक् यह कह रहा है कि हम याज्ञिक बनें। मेरा सदैव यह विचार रहता है। यज्ञमान तेरे विचारों में यागों की धारणा बनी रहे क्योंकि इस वाममार्ग के काल में तेरी एक धारणा बन गई है कि मैं याज्ञिक बनूं, मैं सुगन्धि में जगत् को परिवर्तित करना चाहता हूँ, अपने जीवन को सुगन्धि में परणित करता हूँ। आज सर्वत्र द्रव्य का अपव्यय व दुरूपयोग हो रहा है और मैं यज्ञमान को यह कह कर यज्ञमान तेरे जीवन की धारा बनी रहे क्योंकि तेरे द्रव्य का यह ऊँचा सदुपयोग है, यह देवताओं का कर्म है, देवताओं का क्रिया कलाप है। जब ऋषि मुनि विराजमान होते हैं तो नाना प्रकार के यागों के ऊपर हम चर्चाएँ करते रहते थे। अन्तरिक्ष में अपने विचारों को सुगन्धि के सहित उद्बुद्ध कराते रहते थे, जिससे अशुद्धवाद समाप्त हो जाए। आधुनिक काल में जो दोषारोपण हो रहा है, प्रदूषण हो रहा है, वायुमण्डल छायामान हो रहा है। वैज्ञानिक कहता है आधुनिककाल का कि वह काल दूरी नहीं है, वह काल देखो, निकट आ रहा है जिस काल में अग्निम् ब्रह्मः वाचाः जहाँ अग्निम् बृहे लोकाम् निर्वृताः आधुनिककाल का विज्ञान यह कहता है वह काल दूरी नहीं है जब मानव की सांस लेते ही मृत्यु हो जाएगी, शरीर का त्याग हो जाएगा। परन्तु देखो, ऐसा आधुनिक काल का वैज्ञानिक कह रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक यह कहता है, परन्तु उसका उपराम भी वह अपने में ही विचारता है कि गो घृत के द्वारा अग्नि में प्रवेश करने से परमाणुओं का जन्म होता है, वह अशुद्ध परमाणुओं को निगल करके उसका शुद्धीकरण कर देता है। ऐसा आधुनिककाल का विज्ञान अपने में किसी किसी काल में घोष किया करता है, समुद्रों में परणित होता रहता है। ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण पुरातन काल में महाभारत के काल में रहा है जो आधुनिककाल में भी, वर्तमान काल में भी यान अन्तरिक्ष में गति कर रहा है, चन्द्रमा और पृथ्वी के आकर्षण शक्ति के मध्य में भी यन्त्र अब तक विद्यमान हैं, चन्द्रमा और बुद्ध के दोनों की आकर्षण शक्ति के द्वारा आज भी यन्त्र विद्यमान है। वह यहाँ के प्राणियों को निगल रहा है, वह विज्ञान, विज्ञान से

मिलान करके यहाँ के विज्ञान को समाप्त कर देता है। इस प्रकार का विज्ञान आधुनिक जगत् में दृष्टिपात होता रहा है, मैं यह दृष्टिपात करता रहता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन करता रहता हूँ। हमारे यहाँ देखो, महाभारत के काल में एकलव्य ने ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया था, वह द्रोणाचार्य की सहायता ले ले करके, वह यान आज भी चन्द्र सूर्य की परिक्रमा करते रहते थे और लाखों वर्ष का आयु है यानों का लाखों वर्ष आयु यन्त्रों का है, वह यान अपने में गति कर रहा है, परिक्रमा वृत हो रहा है। तो मैं विशेष चर्चा न देता हुआ पूज्यपाद गुरुदेव को मैं यह परिचय कराना चाहता हूँ कि यह जो समाज है, इसको महान् बनने के लिए यागों का आश्रय लेना होगा। याग की एक ही व्याख्या नहीं है, इसकी एक ही मीमांसा नहीं है, अग्निहोत्र करना याग है क्योंकि इससे देवता, यह कौन देवता है, हमारे शरीर में क्रिया कलाप करते रहते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तो देवयाग के सम्बन्ध में बहुत सी विवेचना दी हैं। मुझे तो वह काल स्मरण आता रहता है जब यह मान कजली वनों में विद्यमान हो करके एक देवयाग के ऊपर यह देखो, दो दो वर्षों तक एक ही विषय के ऊपर चिन्तन और मनन करते रहते थे। उस चिन्तन मनन की शैली बड़ी विचित्र, गहरे अगाध समुद्र में चले जाते, समुद्रों से नाना प्रकार के रत्नों को ला करके वह लेखनियों में बद्ध करते रहे हैं। क्योंकि रस संहिता संघशाखा जो अतीत के कुछ काल के पश्चात् देखों यहाँ मुहम्मद के मानने वालों के काल में राष्ट्रीयता आने से वह अग्नि के मुखारबिन्दु में परणित हो गए।

मैं इस विषय में विशेष चर्चा दे नहीं रहा हूँ विचार केवल यह उद्बुद्ध कर रहा हूँ कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनाना चाहिए। मेरी प्यारी माता श्रृंगार में प्रसन्न हो रही है। जब मैं यह विचारता रहता हूँ माता को अपने पुत्र को सजातीय कितनी बनाती है, तो माता मौन हो जाती है। माता का कर्त्तव्य है कि वह श्रृंगार में परणित न हो करके, वह केवल अपने पुत्र को श्रृंगारित बना दे और पुत्र को बुद्धिमान करके विवेकी बना करके ऊर्ध्वा में गति कराने वाला। माता तेरा जीवन उस काल में सफल होता है, तू याज्ञिक बन जाती है, तू यागों में परणित हो जाती है। तेरा जो याग है वह तेरा पुत्र है। यदि

तू उसे महान् बना देती है, बाल्य को ऊँचा बना देती है, तो उसकी सुगन्धि ओत प्रोत होती हुई सर्वत्रता में परणित हो जाती है। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, मैं तो अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ परिचय देने के लिए आया और वह परिचय क्या है? वह विडम्बनामयी है। मैं यज्ञमान को अपनी शुभकामना प्रगट कर रहा हूँ। हे यज्ञमान! आधुनिक जगत् तो वाममार्ग के क्षेत्र में जा रहा है याग जैसे कर्मों को वह पाखण्ड की मीमांसा, पाखण्ड की भाषा कह करके मौन हो जाता है। अरे, मानव! जो तू क्रिया कलाप कर रहा है क्या वह पाखंड नहीं है? सुरा और सुन्दरियों में पान कर रहा है, क्या वह पाखण्ड नहीं है? जो तुझे सुविचार जो मानवीयता जो ऋषि मुनियों का एक अनुपम विचार है, उसको पाखण्ड कह करके तू अपने में मौन हो जाता है। परन्तु देखो, आज का विचार मैं विशेष न देता हुआ केवल यह उच्चारण कर रहा हूँ, हे मानव! तू अपनी मानवीयता को ऊँचा बना करके तेरे राष्ट्र में भिन्न प्रकार की रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। यह जो रूढ़ियों के ऊपर रक्त के एक प्राणी, प्राणी का भक्षण हो रहा है, रक्त को पान कर रहाह ै यह तेरे राष्ट्र में नहीं होना चाहिए। यह तेरी राष्ट्रीतया की धृष्टता है। तेरा हृदय आत्मबल इतना बलिष्ठ नहीं हुआ है, जो तू राज्य का अधिकारी बन जाए, तुझ राष्ट्र का अधिकार नहीं। राष्ट्र का अधिकार उसको होता है जिसका आत्मा बलवान होता है। जो ब्रह्म ज्ञान में रत्त होता है। पुत्र और प्रजा का न्यायालय में एकसा न्याय करता है, वही तो राजा होता है, परन्तु देखो, वह राजा निर्भय हो करके, जब राजाओं को मृत्यु का भय लगा रहता है तो वह राष्ट्र प्रियता नहीं कहलाता।

आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। केवल यह वाक् उच्चारण करने के लिए कि यह मृत्यु विडम्बना क्यों बन गई है? राष्ट्र की धृष्टता, उनका स्वार्थवाद, उनका आहार और व्यवहार पवित्र न रहने से नाना प्रकार की रूढ़ियाँ पनपती रहती हैं। उन रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। वैदिकता के स्तर पर प्रकाश के मार्ग पर आ जाना चाहिए, प्रत्येक प्राणी को और प्रकाश का मार्ग क्या है, जिसको हम मानव दर्शन कहते हैं। जिसको हम हिंसा कहते हैं वह हिंसा है जो अपने को दुरिता में दृष्टिपात आते ही दूसरों

के लिए हम क्रिया कलाप करते हैं तो वह पाप बन करके तुम्हारा ही भक्षक बन जाता है। तो यह विचार देने के लिए तो विशेष नहीं आया हूँ। वास्तव में इन विचारों को तो देता ही रहूँगा, परन्तु आज मैं विशेषता में नहीं जाना चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि आज जहाँ यह हमारी आकाशवाणी जा रही है, हमारा शब्द जा रहा है वहाँ एक याग पूर्णता को प्राप्त हुआ है। मैं अपने विचार, केवल यज्ञमान के साथ मेरे विचार रहते हैं और मैं यह कहा करता हूँ हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, महान बना रहे, स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहनी चाहिए। यह आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपने विचार और राष्ट्र अपने में वाममार्ग प्रथा को धारण कर रहा है, तो राष्ट्र ऊर्ध्वा में प्राप्त नहीं हो सकेगा। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने बहुत प्रिय अपने वाक् प्रगट किए हैं क्योंकि यथार्थ वाक् मुझे भी प्रिय नहीं लगते, न राष्ट्र को प्रिय हैं। यथार्थ वाक् तो यथार्थ ही होता है। मानव अपनी परम्पराओं को समाप्त न करे। हमारी जो मानवीय दर्शनों की जो प्रथा है, जो वृत्तियाँ हैं अथवा जो उनकी पद्धति हैं, उसे अपने में धारण करना चाहिए। ऋषि मुनियों ने तप किया है, तब करने के पश्चात् किसी शब्द को नियुक्त किया है, वह तपा हुआ है, अकारथ नहीं होता। इसी प्रकार मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपने यह अकाट्य शब्दों की प्रतिभा का वर्णन किया है और वास्तव में राजा के राष्ट्र में रूढ़ियाँ या प्रभु के नामों पर नाना प्रकार की हिंसा नहीं होनी चाहिए। यह राष्ट्रीयता का ह्रास है, यह मानव समाज का ह्रास, यह परमपिता परमात्मा के राष्ट्र को हम दूषित कर रहे हैं। तो आज का यह विचार समाप्त। जैसा मेरे प्यारे! महानन्द जी ने कहा कि यज्ञं भवे वृताम् हे यज्ञमान! जीवन की सार्थक्ता सदैव और द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, द्रव्य का सदुपयोग होना ही जीवन है और मानवीयता को ऊँचा बनाना ही आत्मीयता है। निर्भयता रहना ही आत्मा का बल है और देखो, अपने में अहिंसक बनना यह दर्शनों की परम्परा है। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। ई 31 लाजपत नगर 3 समयः प्रातः

10 बजे।

१२ 04 11 1985 पुष्प 50 महानन्द जी के राष्ट्र निर्माण पर विचार

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है। जितना भी ये जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है और ऋषि मुनियों ने इसके ऊपर बहुत मनन और चिन्तन किया है। वे परमपिता परमात्मा जो सर्वत्र है कोई स्थली ऐसी नहीं है, समुद्रों की कोई तरंगें ऐसी नहीं हैं, पर्वतों की कोई ऐसी गुफा नहीं है जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो। एक एक कण कण में दृष्टिपात आ रहा है, एक एक अणु और परमाणु में वह जो गतिशील होने वाला परमाणु है, वह जो उसके मिलान में, ब्रह्माण्ड की प्रतिभा में निहित रहने वाला है।

मुझे बहुत से वाक् स्मरण आते रहते हैं, वेद के जब विचार विनिमय में विचार बिन्दु में प्रवेश होते हैं तो प्रभु का यशोगान हमारे समीप आता रहता है क्योंकि जब तक मानव परमपिता परमात्मा को एक एक कण कण में अथवा ब्रह्माण्ड के मूल में दृष्टिपात नहीं करेगा तब तक वह मानव साधक नहीं बन सकता। क्योंकि साधक और योगेश्वर उस काल में बनता है जहाँ वह अपनेपन को समाप्त कर देता है जैसे अणु और परमाणु की विवेचना हमारे प्रायः वैदिक साहित्य में आती रही है, अणु का विभाजन करने से, परमाणु का विभाजन करने से ब्रह्माण्ड की चित्रावलियाँ, उसके समीप आ जाती हैं, परन्तु आज मैं मुनिवरों! इस सम्बन्ध में कोई विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ। आज का हमारा वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है, प्रेरणा दे रहा है, प्रेरित हो रहा है। मेरे प्यारे! आज हमारा यज्ञ ब्रह्मे व्रत देवाः। मेरे प्यारे! महानन्द जी मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा देते रहते हैं, परन्तु यज्ञं भविता लोकाः, मेरे प्यारे! ये जो यज्ञ कर्म है। ये परम्परागतों

का एक मानवीय क्रियाकलाप है। सृष्टि के प्रारम्भ में आदि ऋषियों ने वेद के मन्त्रों को ले करके उसके ऊपर अनुसन्धान किया और वैज्ञानिक रूपों को ले करके, मानो इसके ऊपर नाना प्रकार की चित्रावलियों का निर्माण भी किया है। इसलिए जो भी क्रिया कलाप सृष्टि के प्रारम्भ से मानवीय मस्तिष्कों में व क्रियाकलापों में परणित रहा है वही क्रियाकलाप पुनः मानव के जीवन की वृत्तियों में महानता लाने के लिए हमारे ऋषि मुनियों ने नाना प्रकार के यागों का वर्णन किया है, क्योंकि उसमें ज्ञान है, विज्ञान है एक सार्थकता निहित रहती है।

महर्षि भारद्वाज गोत्र में तो यागों की अपनी विज्ञान की धारा को जाना है उद्दालक गोत्रीय ऋषि मुनियों ने इसके ऊपर बड़ा गम्भीर अध्ययन किया है। उस अध्ययन के नाते ही आज मुनिवरों! देखो, हमे कुछ वेदमन्त्र भी स्मरण आए हैं वेदमन्त्र कहते हैं चित्रं रथम् यज्ञो वृत्ति देवाः। ये जो नाना प्रकार के चित्र हमारे समीप आते रहते हैं और वह वायुमण्डल में मिश्रित होते हैं, वायुमण्डल में वह गति करते रहते हैं, तो वह जो विज्ञानां वृते याग में जो मानव की भावनाएँ और तरंगें, वायुमण्डल में प्रवेश कर जाती हैं। मैंने इस सम्बन्ध में पुरातन काल में भी तुम्हें निर्णय दिया था, एक समय व्रेतकेतु राजा के मन में यह वाक् आया कि मेरा जो जयेष्ठ पुत्र है वह सुयोग्य बन गया है और मैं साधना करने के लिए गमन करूं, तो उन्होंने अपने जेठे पुत्र को राष्ट्र दे करके यह मनु वंश की चर्चा हैं। वह अपने राष्ट्र को त्याग करके भयंकर वन में पहुंचे। व्रेतकेतु राजा अपने में यह अनुसन्धान करने लगे कि साधना के लिए तो मैंने राष्ट्र को त्याग दिया है, अब मुझे साधना करनी है। तो वह मुञ्जुक ऋषि के द्वार पर पहुंचे और मुञ्जुक ऋषि से कहा कि प्रभु! मेरा अन्तःकरण कैसे पवित्र होगा। तो मुञ्जुक ऋषि ने कहा कि तुम अपने वायु मण्डल को पवित्र बनाओ, उसके पश्चात् तुम, साधना करो। उन्होंने कहा प्रभु! वायुमण्डल कैसे पवित्र होगा? तो साधना के लिए वायुमण्डल का पवित्र होना बहुत अनिवार्य है। तो श्वेतकेतु मंगल बृहे श्वेतकेतु भयंकर वनो में मुञ्जुक ऋषि से उसके क्रिया कलाप के सम्बन्ध में प्रश्न करने गले उन्होंने कहा तुम याग करो। उन्होंने भयंकर वनों में से लाकल्य एकत्रित किया। नाना प्रकार की औषधियों का मिश्रण हो गया उसमें

सुगन्धित पदार्थ पुष्टि कारक पदार्थ, मेरे प्यारे! आयु को वृद्धि करने वाली थी। उस औषधियों के साकल्य को एकत्रित किया और वह मुञ्जुक ऋषि के यहाँ एक कामधेनु गऊ रहती थी। उस गो घृत को लिया जो श्रद्धामयी जो घृत होता है वह याग की सफलता का एक मूल, मूलक बन जाता है तो मानो उन्होंने याग का प्रारम्भ किया। जब याग प्रारम्भ हुआ और अपने शुद्ध हृदय से मानो निरवय बन करके याग का प्रारम्भ किया जब याग प्रारम्भ हुआ तो मेरे प्यारे! उस भयंकर वन में सिहराज और मृगराज भी ध्वनि को अपने में श्रवण करने लगे।

मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है मुनिवरों! देखो, वहाँ कहीं से भ्रमण करते हुए भारद्वाज गोत्रीय विश्वातम ऋषि महाराज कहीं से भ्रमण करते हुए ऋषि के द्वार पर आ गए। मुञ्जुक ऋषि भी विद्यमान हैं, उन्होंने मुनिवरों! देखो, साकल्य को अग्नि में अर्पित वह भी करने लगे, तो उन्होंने कहा ऋषिवर! उनके अन्तःकरण को मुञ्जुक ऋषि ने दृष्टिपात किया और मुञ्जुक ने कहा कि तुम्हें यह प्रतीत है कि यह जो श्वेतकेतु याग कर रहे हैं यह क्यों कर रहे हैं? उन्होंने कहा प्रभु! मैं तो नहीं जानता, उन्होंने कहा यह आत्म शुद्धि के लिए कि यह वायु मण्डल को पवित्र बनाएँगे, बाह्य जगत् जब तक हमारा पवित्र नहीं होगा हम आन्तरिक जगत् को पवित्र नहीं बना सकते। इसलिए यह बाह्य जगत् का शोधन कर रहे हैं तो मानो उन्होंने ऐसा स्मरण है उन्होंने कहा तो प्रभु! क्या मैं नहीं बना सकता। तुम्हारी विचारधारा में तमोगुण छाया हुआ है और वह तमोगुण की तरंगें का वायुमण्डल अग्नि के ऊपर विश्राम करके वायु मे प्रवेश कर गएं तो यह वायु मण्डल पवित्र नहीं हो सकेगा। इसलिए तुम अपनी विचारधारा को पवित्र बना करके आओ। उन्होंने कहा मुञ्जुक ऋषि से प्रभु आप यथार्थ कहते हैं, मेरा रजोगुणी विचार बन रहा है और मैं सतोगुणी बनाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा जाओ तपस्या करो। तो उन्होंने देखो, याग का प्रारम्भ किया तो राजा श्वेतकेतु ने याग सम्पन्न किया। वह महामा मुञ्जुक ऋषि के सहयोग से याग से वायु मण्डल पवित्र हो गया। तो वायु मण्डल में जो शब्दों की धारा हैं, अथवा ध्वनियाँ हैं वह गृह में क्या आश्रम में क्या वह वायु में भ्रमण करती रहती हैं, अग्नि की तरंगों पर विद्यमान हो जाता है यह ज्ञान हमारे समीप

परम्परागतों से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है तो मुञ्जुक ऋषि महाराज ने एक वर्ष तक इस प्रकार याग का प्रारम्भ किया, प्रातःकालीन याग होना, मध्यकालीन अध्ययन होना और देखो, सायंकाल को याग के पश्चात् चिन्तन करना, मुनिवरों! देखो, उनका हृदय, एक वर्ष के पश्चात् उनकी जो भावना रजोगुण की जो भावना वह समाप्त हो गई हृदय में से और उनका बाह्य जगत् पवित्र बन गया।

वह साधना में परणित हो गए, साधना उनकी बड़ी विचित्रता में आगे चल करके ब्रह्मवेत्ता बने। तो मुनिवरों! देखो, वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा यह कि हम अपने इस मानवीय जीवन को इतना महान्, इतना पवित्र बनाएँ कि हमारा बाह्य जगत् आन्तरिक जगत् दोनों पवित्र हो जाए और हम ब्रह्म को एक एक कण कण में दृष्टिपात करने लगें। तो मुनिवरों! हमारा अन्तर्हृदय निरभिमानी बन सकता है और निरभिमानी बन करके हम वेद रूपी प्रकाश को अपना करके स्वतः प्रकाशमान जो जाएँ। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् मैंने अभी अभी प्रगट किया है अब मेरे प्यारे! महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करगें।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् सर्वाणि गतम् मनाः वाचन्नम बृहे कृतं देवा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भक्त ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव वेद और दर्शन की वार्त्ता प्रगट कर रहे थे, क्योंकि ये जो मानवीय दर्शन है ये परम्परागतों से ही, विचित्र माना गया है। हम जब पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत होते हैं। हम अपने में अपने को धन्य स्वीकार करते रहते हैं। बहुत समय हो गया है, इनका अध्ययन करते हुए मुझे किसी किसी काल में यह असमंजस हो जाता है कि पूज्यपाद के हृदय में कितने ज्ञान की धाराओं की उपलब्धियाँ होती रहती हैं, कितनी महान् स्मरण शक्ति है जिस स्मरण शक्ति के द्वारा यह अपने उद्गीत गाते रहते हैं और ऐसे अघाध समुद्र में चले जाते हैं वहाँ से नाना रत्नों को ले करके आते हैं। अब मेरे पूज्यपाद गुरुदेव याग की कितनी महान विवेचना कर रहे थे, कितना इनका विवेचनामयी हृदय अगम्यमयी ज्योति वाला जो उद्देश्य है वह हमारे हृदयों को स्पर्श करता रहता है। परन्तु आज पूज्यपाद गुरुदेव को मैं तो कुछ परिचय देने चला आता हूँ, मैं व्याख्या देना नहीं

पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ उद्गीत गाने के लिए चला आता हूँ और वह क्या है कि जहाँ यह हमारी आकाशवाणी जा रही है जहाँ हमारी यह प्रेरणादायक शब्द जा रहे हैं उस स्थली पर एक याग का समापन हुआ है। मेरा हृदय बड़ा गद्गद् रहता है कि यह जो काल है बड़ा विचित्र काल चल रहा है। यहाँ सुरा पान महान् मांसाहार की एक गतियाँ मानव के हृदय में गतिशील हो रही हैं, परन्तु वायु मण्डल में अशुद्ध शब्दों का भरण हो रहा है। उसके पश्चात् भी मैं अपने यज्ञमान को यह वाक् उच्चारण करता रहता हूँ। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। यह जो काल चल रहा है वाममार्ग का काल चल रहा है। यहाँ उलटे मार्ग पर जाने वाला समाज है, जब यह एकान्त स्थली में विद्यमान होता है, तो यह मांस और सुरापान की ही चर्चा करता है, या यह अपने में कृतियों की चर्चा करता है, परन्तु महानता की चर्चा इसके द्वार से नष्ट होती जा रही है। मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराया था कि याग ऐसा विचित्र एक कर्म है जो सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है, सृष्टि के प्रारम्भ से यह याग कर्म चला आ रहा है, सुगन्धित होना चाहता है मानव वह किसी भी स्थली पर रहता है किसी भी रूप में रहता है उसके हृदय में एक आकांक्षा है कि मैं सुगन्धित हो जाऊँ। सुगन्धि के भी नाना अग्नियों का चयन करता रहता है। परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ कि यह नाना प्रकार की जो अग्नि है यह अपने में निहित हो करके हमें विचित्र बना सकती हैं, यदि हम उनको जानने का प्रयास करें।

परन्तु देखो, जब यहाँ वृन्नम् ब्रहे महाभारत के काल में पश्चात् की वार्त्ता हैं। पूज्यपाद गुरुदेव तो इन वाक्यों को इतने विस्तृत रूप से जानते नहीं, परन्तु मैं इनको परिचय कराता रहता हूँ। हमारा यह परिचय रहता है कि महाभारत के काल के पश्चात् यहाँ नाना प्रकार के विचार और वाममार्ग सम्प्रदाय का यहाँ एक ऊर्ध्वा में रूप धारण किया गया उस वाममार्ग ने देखो, याग और मेरी माताओं का तिरस्कार किया। दोनों का तिरस्कार जब महाभारत काल के पश्चात् हुआ, नाना प्रकार के मतमतान्तरों में यह समाज, यह मानव समाज का एक बंटवारा बन गया। नाना मत मतानतरों क्या, सबसे प्रथम बौद्ध काल में यह कहा गया, जब बोद्ध का काल आया कि मैं ऐसे वेद को

स्वीकार नहीं करता, जिसमें हिंसा हो। तो उसका परिणाम यह हुआ कि वाममार्ग और वह बौद्धकाल के मानव ने यह नहीं विचारा, न महात्मा बुद्ध ने यह विचारा कि इस वेद का अध्ययन तो करना चाहिए। जब एक एक वेद के मन्त्रों के यौगिक अर्थ हैं, वैज्ञानिक अर्थ हैं, मानव के व्यावहारिक अर्थ हैं उसको न मानना ही एक बुद्ध समाज का ह्रास हो गया, बुद्ध समाज में बौद्धिको ने उन्होंने भी मांस का आहार आरम्भ किया। उसका परिणाम यह हुआ कि यहाँ नाना प्रकार की रूढ़ियों का प्रादुर्भाव हुआ। महात्मा बुद्ध के कार्यकाल के पश्चात् नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बनीं और वह जो वाममार्ग समाज था उसने वेदों की अवहेलना की, यागों मांस की आहुति प्रदान करने लगे, तो याग का तिरस्कार हो गया। वैदिक साहित्य का ह्रास हो गया। जब मैं विचारता हूँ कि यहाँ जैन काल में भी ऐसा हुआ उन्होंने कहा कि मैं तपस्या को प्रथम स्वीकार करता हूँ। वेद के एक अंग को अपनाया है तपस्या का, परन्तु देखो, सर्वांग अंग वह प्राणी होता है जो याग, सुगन्धि और विचार सुगन्धि और इसका समन्वय करके जब परणित होता है, तो वह सर्वत्र पूर्ण देखो, वह एक समिधा के रूप में ही उसका जीवन बन जाता है।

जब मैं यह विचारता हूँ कि कितना तिरस्कार हुआ है मेरी पुत्रियों का, यहाँ देवियों का तिरस्कार हुआ, तो देखो, यहाँ दुरीता में देखो, सन्तान का जन्म होना प्रारम्भ हुआ। परन्तु देखो, उसके जन्म के पश्चात् वैदिक सिद्धान्तों की अवहेलना करने वाला समाज बन गया। जब मैंने यह विचारा कि अस्वतम् ब्रह्मः महात्मा बुद्ध का परिणाम यह बना कि बौद्ध के जानने वालों का राष्ट्र हुआ। महात्मा महावीर के मानने वालो का राष्ट्र हुआ, तो यहाँ जितना वैदिक साहित्य था वह कुछ को त्याग करके अग्नि के मुख में परणित कर दिया था। कि ऐसे हम वैदिक साहित्य को नही स्वीकार करें, इसमें हिंसा है, परन्तु भोले प्राणियों ने उनका अध्ययन नहीं किया। जो अध्ययन कर लेते तो यह अज्ञानता या याग का तिस्कार नहीं हो सकता था याग का तिरस्कार जब होता है, जब अज्ञान की प्रतिभा का जन्म होता है तो अपने से वह सुगन्धि को नष्ट कर देता है। इसी प्रकार जब देखो, यहाँ वैदिक काल समाप्त हुआ तो इसमें इतनी हीनता को जैन और देखो, बौद्ध समाज ने इस समाज को इतना निर्दयी और ऋणी बना दिया कि उसमें ऐसी

निर्लज्ञता आ गई, कृतियाँ बन गई, वीरता का देखो, सन्निधान समाप्त हो गया। उसका परिणाम यह हुआ कि नाना प्रकार के देखो, यहाँ यवनों का काल आ गया। यवनों के काल में यवन यहाँ आए, दूसरे राष्ट्रों से आए, परन्तु देखो, उन्होंने आ करके यहां वैदिकता को नष्ट करना प्रारम्भ किया और प्यारी माताओ के श्रृङ्गार को हनन करने का प्रयास किया। नाना प्रकार के मत मतान्तरों में नाना प्रकार की रूढ़ियों में यह समाज परणित हो गया। यह संसार पृथ्वी का प्राणी नाना प्रकार की रूढ़ियों में महाभारत के काल के बाद हुआ है। महाभारत के पूर्वकाल का साहित्य यह नहीं कहता है कि यहाँ रूढ़ियाँ थी, यहाँ नाना प्रकार के मत मतान्तरों वाला समाज था कोई मत मतान्तर नहीं था।

मुझे वह काल मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में रहा हूँ मैंने उस काल को भी दृष्टिपात किया है। उस काल में सर्ववेद का याग करने वाले राजा अपने राष्ट्र में यह घोषणा करते रहते थे कि देखो, यहाँ प्रत्येक प्राणी को याज्ञिक बनना चाहिए प्रत्येक गृह में से वेद की ध्वनि होनी चाहिए, चाहे वह किसी का गृह हो, परन्तु वेद की ध्वनि होगी, तो यहाँ ऋण से उऋण होने वाला समाज बन जाएगा। राजाओं के यहाँ पूर्वातीत के काल में यह घोषणा होती रही है। महाराजा अश्वपति ने तो अपने राष्ट्र में यह घोषणा कराई थी कि मेरे राष्ट्र में प्रत्येक प्राणी याज्ञिक होना चाहिए। याज्ञिक होगा याग में केवल अग्नि में ही आहुति देना नहीं है। याग का अभिप्राय यह है कि यज्ञ में आहुति होनी चाहिए। परन्तु सदाचार और शिष्टाचार भी होना चाहिए, सदाचार और शिष्टाचार की वेदी वाला जो राष्ट्र होता है, जो अपने राष्ट्र में वेद के प्रकाश को पनपाता रहता है, परन्तु देखो, ऐसा जो विचित्र राष्ट्र है वही तो समाज को महान बना सकता है। जो राजा स्वतः याग में परणित होने वाला हो, अपने गृह को सुगन्धित बनाने वाला हो, वही तो महान् बनेगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्वकाल में राजा रावण की चर्चा कर रहे थे। राजा रावण के राष्ट्र में भी यह घोषणा थी कि मेरे राष्ट्र में याज्ञिक प्राणी होने चाहिए और वह स्वतः अश्वमेध याग भी करते थे। प्रजा और राजा मिल करके अश्वमेध याग होता है। परन्तु

यहाँ महाभारत काल के पश्चात् के विद्वानों ने, उनको मैं विद्वान तो नहीं कह सकता, परन्तु अर्थों का अनर्थ करके ही याग में घोड़े के मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। अश्व उसे कहते हैं जो राजा है प्रजा को ऊँचा बनाने वाला हो और अश्वमेध याग करने वाला हो, अश्व नाम राजा और प्रजा मेध जो दोनों मिल करके याग करते हैं, उसको अश्वमेध याग कहते हैं। परन्तु देखो, यहाँ अर्थों का अनर्थ हुआ। अजामेध याग उसे कहते हैं, जो द्वितीयों को अपने हृदयों को विजय करने वाला हो, द्वितीय राष्ट्र को विजय करने वाला हो। परन्तु देखो, अजामेध का अभिप्राय आधुनिक इस महाभारत के काल के पश्चात् रसास्वादन करने वालों ने वाममार्ग ने यह अपनाया कि बकरी के मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। परन्तु देखो, यह विद्वानों की सब रसना स्वादन की चर्चाएँ हैं। कोई मानव यह कहता है कि मेरी मांस से उदर की पूर्ति होती है। तो मैं यह कहता हूँ कि यह तुम्हारी रसना की पूर्ति है। अरे, तुमने अपने शरीरों को एक मुर्दालय का एक स्थली बनाई है, जिसको तुम पान करते रहते हो और यागों का तिरस्कार करने से समाज यह बन गया है। आज मैं यदि संसार के भ्रमण करने के पश्चात् मैं यह उद्गीत गाने लगूं कि यहाँ का संसार का प्राणी इस समय वर्तमान काल में सौ अर्वतियों में पिच्यानवें प्रतिशत के लगभग देखो, मांस और सुरापान का पान कर रहा है। परन्तु देखो, इतना प्राणी संसार में रह रहा है, तो यह कितना अपने शरीरों को यह नष्ट कर रहे हैं। तो आज हम यह कल्पना करने लगे कि राम का काल आ जाए या कृष्ण की वह राजसभा आ जाए और ऋषि मुनियों का वह काल आ जाए तो यह मुझे बड़ा आश्चर्य में दृष्टिपात आता रहता है। मैं इसको स्वीकार किसी किसी काल में करता रहता हूँ कि देखो, बीज का अंकुर तो रह रहा है परन्तु देखो, जब हम यह विचारते है। कि मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह चर्चा करता रहता हूँ हे भगवन्! इस प्रकार का यह जो समाज बन रहा है, यह जो वाममार्ग बन रहा है। यह कहाँ जाएगा प्रभु!। परन्तु आज मैं यही कहने आया हूँ कि हे यज्ञमान! मेरा अन्तर्हृदय गद्गद हो रहा है ऐसे वाममार्गी काल में जो द्रव्य देखो, मुद्रा को विशेष मान लिया है, ऐसे काल में देखो, अपने द्रव्य का सदुपयोग कर रहा हैं यह तेरे जीवन का सौभाग्य है, तेरी मानवीयता

का सौभाग्य है, मैं तो सदैव यज्ञमान के समीप यह कहा करता हूँ कि तेरे जीवन का सौभाग्य अखंड बना रहे जिससे तू अपने द्रव्य का सदुपयोग करता रहे अपने गृह में। हमारे यहाँ महाभारत के काल से पूर्व राम के काल के समाज की गाथा देखो, उनकी विचित्रता का वर्णन करता है। राम के काल में माता पिता से प्रथम पुत्र का हनन नहीं होता था, मृत्यु नहीं होती थी। उसका मूल क्या है? उसके मूल में प्रत्येक गृह में याग होता था। माता पिता संयमी बन करके ओजस्वी सन्तान को जन्म देते थे। जब माता अपने गर्भस्थल में ही बालक को बनाना प्रारम्भ करती थी, वेद की ध्वनियों की ध्वनि में ध्वनित करके, अपने अंग अंग को जब वेद की ध्वनि से ध्वनित हो रहा है तो माता के गर्भ में बालक का निर्माण हो रहा है। परन्तु वह निर्माण इतने पूर्ण आयु की आत्मा संस्कारों से माता पिता से पूर्व उस बालक का हनन नही होता था माता पिता अपने जो सन्तानों का उपार्जन है, अन्त में देखो, वह प्रसन्न हो करके संसार से जाते हैं। आज संसार नार्किक है क्योंकि देखो, आहार और व्यवहार तिरस्कार होने से यह होता है कि माता का पुत्र माता से प्रथम समाप्त हो जाता है। माता का अन्तःकरण दुःखित हो जाता है, वही वायुमण्डल की धारा गृहों में प्रवेश होती हैं, वही वायुमण्डल में जाती हैं, विज्ञान का दुरूपयोग हो गया है, तो वायुमण्डल आज दूषित हो रहा है। उसके वायुमण्डल के दूषित होने का परिणाम यह है कि हमारे यहाँ देखो, ध्वनि पवित्र नहीं रही है, ध्वनि में अध्वनि बन गई है। क्योंकि संसार में एक वस्तु का मिलन हुआ है और उसका विच्छेद होता है तो वही अपार कष्ट है। परन्तु जो वस्तु हमें प्राप्त हुई है वह ज्यों की त्यों बनी रहती है, तो उसका कष्ट नहीं होता और वह उसमें रुधनता नहीं आती। तो इसीलिए मैंने भगवान् राम के काल की चर्चाएँ की हैं।

उससे प्रथम यह महाभारत का काल, जिस भी काल में, काल स्वार्थ में परणित हो जाएगा, राष्ट्र त्याग में नहीं रहेगा तो वहाँ माता पिता और पुत्र का वियोग सदैव अपने में ग्रहण करते रहेंगे और जब मानव निस्वार्थ हो जाता है, कर्म के आधार पर वह अपने जीवन को व्यतीत करता है, कर्त्तव्यवाद की वेदी पर जाता है तो न तो विज्ञान का दुरूपयोग होता है न यहाँ देखो, यह दूषित वायुमण्डल बनता है। यह पवित्रता में परणित

रहने वाला ज्ञान और विज्ञान अपने में सार्थक बन करके रहता है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराने आया हूँ कि आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है, वह संसार का पृथ्वी मण्डल पर कोई भी राष्ट्र हो, परन्तु वह राष्ट्र नहीं रहा है, वह केवल रक्तभरी क्रान्ति की एक स्थली बनती चली जा रही है। यहाँ मत मतान्तरों के कारण इस पृथ्वी मण्डल पर एक मानव, मानव को हनन करने के लिए तत्पर हो रहा है। उसके मूल में क्या है? राजा हिंसक बने हुए हैं, राजा हिंसा की वेदी पर परिणत हो रहा है। जब राजा हो गया तो प्रजा भी हिंसक बन गई। उसका परिणाम क्या हो रहा है? उसका परिणाम यह है कि मानव का हृदय अशान्ति के तट पर निहित रहता है। मैं यह विचारता हूँ कि जब मेरे से यह प्रश्न किया जाए। राजा यह कहे कि इसका निवारण क्या है? इन वाक्यों का तो निवारण मैं उच्चारण किए देता हूँ। मैंने कई काल में राष्ट्रीय निवारणों की चर्चाएँ प्रगट की हैं। संसार के सब राजा एकत्रित हों, अपने अपने जो सम्प्रदायों के आचार्य हैं अथवा रूढ़िवादों के जो सम्प्रदायों के आचार्य उनकी एक पंक्ति लगाई जाए और उसका शास्त्रार्थ होना चाहिए। जो ज्ञान, यज्ञ और देखो, मानवीय दर्शन पर घटित हो जाएँ उसको उसी सिद्धान्त को राजा को अपनाना चाहिए। उस सिद्धान्त को अपना करके अहिंसा परमोधर्मः की वेदी को अपना करके, जब क्रिया कलाप करेगा तो वही राम का राष्ट्र पुनः से आ सकता है। परन्तु देखो, जब यहाँ नाना प्रकार के मत मतान्तर केवल अपनी राष्ट्रीय सत्ता के लिए उनसे विचारा नहीं जाता, उनसे वाक् नहीं की जाती, तो राजा और प्रजा दोनों हिंसक बनते चले जा रहे हैं।

जब मैं विचारता हूँ कि मौलिक सिद्धान्तो को लिया जाए, विज्ञान के ऊपर जो तत्पर हो, धर्म और मानवता के ऊपर जो तपस्या में परिणत हो जाए, उसी को तो हमें स्वीकार करना है। परन्तु जब हम वेद के उस अंग को लेते हैं, वेद के सर्वांग इन विचारों को लेते हैं, तो उसमें विज्ञान है, उसमें मानवता है, उसमें मानवीय दर्शन का निर्माण है, तो उस वाक् को हमें अपनाना चाहिए। परन्तु राष्ट्रीयता का निवारण केवल यही है कि हम उसको निवारण इन रूपों में कर सकते हैं। चाहे जितने मत मतान्तर हैं इनको समाप्त किया जाए। इनको एक वेदी पर लाया जाए और एक वेदी पर ला

करके जब एक वेदी का प्राणी हो जाता है, एक विचार हो जाता है वायु मण्डल में उनके शुद्ध विचार प्रवेश करेंगे, तो वायु मण्डल पवित्र होगा, राष्ट्र पवित्र बनेगा। मानव में से विचारों की सुगन्धि आना प्रारम्भ हो जाएगा तो इसीलिए मैंने बहुत पुरातन काल में राष्ट्रीयता का एक निवारण होता है इस राष्ट्र का निर्माण सबसे प्रथम भगवान् मनु ने किया था। तो मनु से एक समय एक ऋषि ने यह प्रश्न किया कि हे भगवन्! हे मनु जी! तुमने राष्ट्र का निर्माण क्यों किया है? तो भगवान्, मनु यह कहा कि राजा के राष्ट्र में मछली से ले करके, किसी भी प्राणी का हनन नहीं होना चाहिए। और क्योंकि देखो, राष्ट्र का निर्माण इसलिए होता है कि यहाँ सम्भवबृहे मानवता को कर्त्तव्यवाद के लिए मानव को शिक्षा दी जाए। राष्ट्रीय है क्या? राष्ट्र अपने मे महान् नहीं है, परन्तु देखो, राष्ट्र का पालन राष्ट्र इसलिए निर्माणित होता है कि वह अपने मानव को कर्त्तव्य की वेदी पर ला सके। इसलिए महापुरुषों का निर्वाचन होता है और राजाओं को चुनौती उसको वशिष्ठ की चुनौती प्रदान करके कहा जाता है कि तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बना, मानव समाज को कर्त्तव्यवाद में लाने के लिए तत्पर हो। परन्तु देखो, मनु जी का सिद्धान्त, मनु जी का राष्ट्र का निर्माण किया हुआ, दिखाया हुआ मार्ग अपनाओ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते हैं, कि देखो, जब वह समुद्र के तट पर तपस्या करने पंहुचे, तो कमण्डलों में जब तर्पण करने लगे, तो जल को जब कमण्डलु में लिया, तो उसमें एक मछली आ गई। वह जब कमण्डलु को समुद्र में पुनः रिक्त करने लगे, तो मछली अपनी वेदनामयी विचार व्यक्त करती है क्योंकि राजा वह होता है जो प्रत्येक प्राणी के विचारों को अपने में देखो, अनुमान के द्वारा उनका मन्थन करने वाला हो। तो भगवान् मनु ने उस मछली को दृष्टिपात किया, तो मछली कहती है, हे भगवन्! हे राजन्! हे ऋषिवर! मैं इसलिए तेरे समीप आई हूँ कि समुद्रों का यह सिद्धान्त है कि बड़ी मछली छोटी को आहार करती हुई वह प्रबल बन जाती है। मेरी इच्छा यह है मैं आपके कमण्डलु में आई हूँ, आपकी शरण में आई हूँ, आप मेरी रक्षा करो। भगवान् मनु के कमण्डलु में वह मछली पनपती रही, उन्होंने एक गढेला बनवाया, उसमें मछली का प्रवेश किया, उसमें पनपती रही। तो वही मछली देखो, जब प्रबल हो गई, विशाल

बन गई वह अपने समुद्रों को चली गई और उसने चलते समय यह कहा, हे मनु! कुछ काल के पश्चात्, वह भविष्य करने लगी कुछ काल के पश्चात समुद्रों मे जल प्लावन आयेगा और मेरा मिलन समुद्रों से होता और तुम एक नौका बनवा लेना, वह नौका मेरे सिंग से मेरे अनुभूतियों से उसको जकड़ देना। मैं तेरी नौका की रक्षा करूंगी। वही तो प्राणी रक्षक होता है जिसकी तुम रक्षा करो। जिसकी तुम रक्षा करोगे वह तुम्हारी रक्षा करेगा। शरीर के लिए तुम महान् बनोगे तो शरीर तुम्हें महान् बना देगा।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् गुरुदेव ने बहुत कुछ उच्चारण किया है, परन्तु देखो, राष्ट्र का संसार में यदि कोई राजा हुआ है तो भगवान् मनु हुआ है। उन्होंने किसी नगरी का निर्माण किया तो अयोध्या का किया, क्योंकि अष्टचक्रा नौ द्वारों वाली एक नगरी का निर्माण किया था, उसमें मनु महाराज के लगभग एक लाख पिचहत्तर हजार पांच सौ बावन वंशलजों ने राष्ट्र का पालन किया और वह पालन इसी आधार पर किया क्या आधारित वही बनाया कि समाज को कर्त्तव्यवाद में लाना है। इससे माता का वियोग नहीं दृष्टिपात किया जाता, पिता का वियोग नहीं दृष्टिपात किया जाता। यह वियोग जब नहीं होगा जब मानव सात्विक बनेगा, पवित्र बनेगा। माता अपने कर्त्तव्यवाद का पालन करेगी, राजा अपने कर्त्तव्य का पालन करें, समाज कर्त्तव्य का पालन करके राजा और प्रजा को कर्त्तव्यवाद में लाता रहे और वह प्रजा का सेवक स्वीकार करे, तो राष्ट्रीयता कुछ रह नहीं पाएगी। राष्ट्रीयता तो देखो, आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद चल रहा है, वह कैसा है? वह समाज को सम्प्रदायों को अपना अपना करके अपने में अपने को देखो, राजा बनाना चाहता है। परन्तु हे राजन्! राष्ट्रीयवाद का निवारण करना होगा, तो तुझे वह कर्त्तव्य करना होगा जिससे यह समाज महान् बन जाए। जिससे एक दूसरा प्राणी, प्राणी के रक्त का पिपासी न बन जाए, पिपासी अज्ञानता में बनता है। इसलिए तेरे द्वारा ज्ञान होना चाहिए, पिपासी स्वार्थ में हेता है, कर्त्तव्यवाद का पालन कर। तो मुनिवरों! देखो, यह राष्ट्रीयवाद का निवारण है। नाना प्रकार की सम्प्रदायों में उदधृत वाला समाज कदापि भी महान् नहीं बन सकता। मैंने बहुत पुरातनकाल से इस समाज को दृष्टिपात किया। महाभारत काल के पश्चात् महाभारत में स्वार्थवाद आया था और

स्वार्थवाद क्या था? महाराजा शान्तनु ने सबसे प्रथम स्वार्थवाद की भावना आई उसने क्या स्वार्थवाद दिया? अपने पुत्र को कहा कि तू ब्रह्मचारी रहे और मेरा संस्कार हो। पुत्र ने ब्रह्मचर्य के वश में भीष्म प्रतिज्ञा की और पिता का संस्कार हुआ। उसका परिणाम यह हुआ कि महाभारत काल में स्वार्थवाद आया और स्वार्थवाद में विधाता विधाता रक्त के पिपासी बन गए अज्ञानता में। यदि शान्तनु के हृदय में यह स्वार्थ की भावना न होती, तो यह अनुचित्त क्रिया कलाप नहीं होता, तो यह समाज नष्ट नहीं हो सकता था, विद्वानों का ह्रास नहीं हो सकता था।

परन्तु देखो, भावी प्रबल है। जब मैं यह उद्गीत गाता हूँ तो यह मानवीयता का ह्रास हुआ। उसका परिणाम यहाँ मेरी पुत्रियों के श्रृंगारों को हनन किया गया। उसके पश्चात् नाना प्रकार की अज्ञानता में सम्प्रदायों का जन्म हुआ, वह सम्प्रदाएँ आधुनिक काल में जितनी पनप रही हैं, राष्ट्र की हीनता है क्योंकि राजा इसलिए नहीं होता है। एक ईश्वरवाद में कुछ कह रहा है, एक धर्म की विवेचना कुछ कर रहा है। धर्म केवल मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है। व इन्द्र देखो, इन्द्रियों वाले धर्म को ला करके राजा को उसकी व्याख्या करनी चाहिए। जब राजा देखो, किसी भी मत से मठ की पूजा में जाता है, वहाँ उस धर्म की प्रशंसा करने लगता है, वाम मार्गीयों में जाता है वहाँ वाममार्ग की प्रशंसा करता है, गुरुओं में जाता है वहाँ गुरुओं की प्रशंसा कर रहा है यह राजा निर्लज्ज हो जाना चाहिए। ऐसे राजा नाना धर्म की जो चर्चा कर रहा है। अरे, धर्म तो भोले प्राणी व्याकरण की दृष्टि से, एक ही धर्म कहलाता है। उस धर्म को अपनाना चाहिए। वह धर्म क्या है? मुनिवरों! देखो, नेत्र सुदृष्टिपात करेंगें तो मानव का पूजन होगा यदि कुदृष्टि करेगा तो उसका अन्तरात्मा उसे धिक्कारने लगता है। वह नेत्रों में धर्म समाहित रहता है। स्वाहा वाणी सदैव सत्य उच्चारण करती है तो उसका धर्म है, अशुद्ध उच्चारण करती है, तो उसका अधर्म बन जाता है। वह वाणी का धर्म सत्य ही उच्चारण करना है। सुगन्धि में मानव प्रसन्न रहता है, दुर्गन्ध में देखो, अपने अन्तर्हृदय को धिक्कारता है। अरे, सुगन्धि ही उसका जीवन है देखो, इसी प्रकार स्पर्श सत्ता है उसको प्रेम से मगन हो करके ज्ञान के द्वारा स्पर्श करता है वह उसका धर्म है। मेरे

प्यारे! श्रोत्रों में शब्द आते हैं। सुशब्दों को ग्रहण करता है वह उसका धर्म है।

तो आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हमें इस समाज को ऊँचा बनाना है, मानवीयता की रक्षा करनी है, मानव दर्शन को अग्रणीय बनाना है और राष्ट्र के निवारण के लिए मैंने चर्चा की है कि प्रत्येक, जो रूढ़िवादी आचार्य हैं, वह एकत्रित हो करके राजा के सन्निधान में वह अपने अपने विचारों की व्याख्या करें और जो विचार विज्ञान से और मानवीयता से स्थिर हो जाए वह विचार वही धर्म रहना चाहिए मानव का। तो आज का विचार यह क्या कह रहा है? आज का विचार हमारा केवल यही है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन करा रहा था क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव का वह विचार है जब इस संसार में कोई भी रूढ़िवाद नहीं था। वह मानवता के याग की चर्चा करते हैं, वह विज्ञान की चर्चा कर रहे हैं आज का विज्ञान भी रूढ़िवादी बना हुआ है। परन्तु मैं उच्चारण करने के लिए तो बहुत कुछ वाक् हैं परन्तु जब मेरा विचार यह समाप्त ही होने वाला है। आज का विचार केवल मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि मैं पूज्यपाद गुरुदेव को परिचय करा रहा हूँ कि यह काल एक वाममार्ग काल है, जहाँ राजा भी वाममार्गीय है और मतमतान्तर भी वाममार्गीय हो गए हैं। देखो, कोई आचार्य गुरु जी कह जाते हैं, क्या रक्त का पान न करो, उनके मानने वाले रक्त को अपने में भक्षण कर जाते हैं, उससे अपने शरीरों को बना रहे हैं। शरीरों का निर्माण केवल इसलिए कि उनकी विलासता बनी रहे। अरे, यही तेरा कर्त्तव्य नहीं है। हे मानव! तुझे तो संसार को महान् बनाना है क्योंकि यह प्रभु की सृष्टि है और प्रभु की सृष्टि को महान् बनाना यह हमारा कर्त्तव्य है। आज का विचार क्या? हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मेरा हृदय गद् गद् होता है जब यज्ञमान के देखो, यह अद्भुत याग का आयोजन होता है। हिंसा से रहित होता है और द्रव्य का सुदपयोग किया जाता है। जब प्रत्येक गृह में याग के द्वारा द्रव्य का सदुपयोग होता है, वहाँ आपत्तियों का ह्रास हो जाता है। तो यह आज का वाक् अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा चाहूँगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! ऋषिवर! मेरे प्यारे! महानन्द जी ने बहुत से अपने वाक्

प्रगट किए। वाक्यों में बड़ी सार्थकता मुझे प्रतिपादित हो रही है, परन्तु यह इनकी जो वेदना है, इनकी जो विडम्बना है वह बड़ी बिडम्बित मेरे हृदय में समाहित है। इसीलिए यह होगा जब प्रभु की अनुपमता होगी, तो प्रायः ऐसे राजा भी होंगे, प्रजा भी होगी। ऐसा कोई वाक् नहीं है, परन्तु संसार में अपने को शुभ क्रियाओं में अपने को रत्त रहना चाहिए। अपने विचारों को महानता देना जिससे वायु मण्डल में वह विचार भ्रमण करते रहें। किसी न किसी काल में वह महान् विचार मानव के अन्तःकरण को छू करके पवित्र बना सकते हैं। यह आज का विचार अब समाप्त होने जा रहा है। अब वेदों का पठन पाठन होगा। ग्राम : काशीपुर समय : प्रातः 10.00 बजे।

१३ 21 11 1985 पुष्प 50 कर्त्तव्यवाद

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान् विज्ञान में रत्त रहने वाले हैं। जितना भी यह जगत् मानवीयतव में दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा में वे परमपिता परमात्मा निहित हो रहे हैं, उसी में रत्त जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अपने में अनुसन्धान करता रहा है और विचार विनिमय करता रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा के समीप जाना चाहते हैं। प्रत्येक मानव इसी विडम्बना में नाना प्रकार की आभाओं में रमण करता रहता है और कहीं न कहीं मानव अपनी आभा में नियुक्त होता रहता है कि मैं उस परमपिता परमात्मा की जो महती है उसमें मैं अपने को ले जाऊँ जैसे मेघ मण्डलों में विद्युत उसमें ओझल हो जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक मानव उस प्रकृति के आवावेश में और प्रकृति के गर्भ में यह ओझल हो जाता है और परमपिता परमात्मा की आभा में जाना चाहता है। परन्तु जब वह संसार के नाना प्रकार के रूपों में रत्त होता है तो वे परमपिता परमात्मा के समीप न

जा करके वह प्रकृति के गर्भ में ही रमरा करने लगता है।
तो बेटा! हमारा वेदमन्त्र यह कहता है हे मानव! यदि तू परमपिता परमात्मा को जानना चाहता है और उसके समीप जाना चाहता है, तो तुझे नाना प्रकार के इस प्रकृति के आवेशों को त्यागना होगा और प्रकृति को वह मानव त्यागता है जो इसको जान लेता है, जो इसकी जड़वत प्रवृत्ति है उस जड़वत प्रवृत्ति को जो नहीं जान पाता है वह प्रकृति को नहीं त्याग सकता वह प्रकृति के आवावेशों को नहीं त्याग सकता। इसीलिए हमारे ऋषि मुनि परम्परागतों से ही, बेटा! इसके ऊपर विचार विनिमय करते रहे हैं और विचारते रहे हैं कि हम प्रकृति के उन आवेशों को त्यागना चाहते हैं जिन आवेशों में मानव अपने को जड़वत बना लेता है ज्ञान और चेतना के स्थान में वह जड़वत बन जाता है, जड़वत को त्यागना है और चेतना को अपने में लाना है, जो चेतना को लाने का प्रयास करता है और जड़वत को त्याग देता है वही तो मानव संसार में महान् बनता है।
इसीलिए हमारे आचार्यों ने, अनुसन्धान वेत्ताओं ने, राष्ट्रवेत्ताओं ने भी अपने राष्ट्रों को त्याग करके भयंकर वनों में अपनी चेतना में सदैव रत्त रहे हैं। मुझे आज पुनः से कुछ वाक् स्मरण आ रहे हैं जिन वाक्यों को मैंने पुरातन काल में तुम्हें प्रगट किया है। एक समय बेटा! महर्षि शाकल्य मुनि महाराज परमपिता परमात्मा के हृदयमग्न हो रहे थे। अपने में अन्वेषण करते हुए महर्षि शाकल्य मुनि के समीप एक वाक्य आया कि मैं तपस्वी कैसे बनूंगा। वह भयंकर वनों में यह विचार रहे थे और मन को कह रहे थे कि हे मन! तू तपस्वी कैसे बनेगा। वह नाना प्रकार की प्रवृत्ति वाला वह जो मन है उसको अपने में धारण करने के लिए महर्षि शाकल्य मुनि महाराज की एक निष्ठा बनी और तपस्या करने लगे। हमारे यहाँ तप के नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द माने गए हैं परन्तु वेद का मन्त्र कुछ और कहता है, वेद का मन्त्र कहता है तपान तपश्चम् ब्रह्मवाचो मेरे प्यारे! देखो,! तप किसे कहते हैं? प्रत्येक मानव तप की विवेचना में जाना चाहता है। बेटा! तपश्च्याम् ब्रह्मा वह तप कहलाता है जिस तप के द्वारा मानव की इन्द्रियों का शुद्धिकरण होता हो। सबसे प्रथम मन के शुद्धिकरण के लिए अनुष्ठान करना होता है।

प्रत्येक मानव परम्परागतों से नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहा है। अनुष्ठानों में केवल कोई कोई तो वायु का सेवन करने लगता है। कोई नाना प्रकार की वनस्पतियों को पान करता है, और अपान बना रहता है। तो नाना प्रकार के रूपों में एक ही मन्त्र में मन को पवित्र बनाना है, क्योंकि मन को पवित्र बनाने के लिए मानव कहीं, वायु का सेवन करता है, कहीं सत्यवादी बना रहता है और मुनिवरों! कहीं, वह मन के शोधन के लिए अलग वारी बन जाता है। कहीं नौदा में भक्त बन जाता है। कहीं पितरभक्ति करने लगता है। कहीं आचार्य अनुष्ठान में लग जाता है, कोई नाना प्रकार के भाव में वह रत्त हो जाता है परन्तु मन्तव्य सबका एक ही है कि मेरा मन पवित्र हो जाए।

तो मेरे पुत्रों! देखो, मन को पवित्र बनाने के लिए ऋषिमुनियों ने एक मार्ग बड़ा सा एकत्रित किया है, उन्होंने अपने वाक्यों में वेद के कुछ मन्त्रों को लाने का प्रयास किया, तो नाना वेद मन्त्रों में बेटा! इस प्रकार के वाक्य आए हैं, अन्न् ब्रह्मा वाचप्रहे व्यक्तव लोकाः वेद का वाक्य कहता है कि अन्न जो है यह ब्रह्म को ब्रह्म के समीप ले जाता है। वेद का मन्त्र यह कहता है कि अन्न ब्रह्म के समीप ले जाता है, तो बेटा! यह केसा वेद का शब्द है इसके ऊपर जब अन्वेषण करते हैं ऋषी मुनि, तो बेटा! विचार आता है कि मनाः वाचो व्रतम् ब्रह्म वाचाः वेद का वाक्य कहता है कि अन्न के पवित्र होने पर मन में पवित्रता आती है, इसीलिए अन्न ब्रह्मा वह मुनिवरों! देखो, पत्र और पुष्पों को लेकर उनका रस बना करके वह सेवन करते रहे हैं, उनको तपा तपा करके उनका सेवन करना और अन्नादं ब्रह्मः मन को पवित्र बनाना और मन को बेटा! अपने आप में रमण करना ही यह पवित्रता कहलाती है। यह परमात्मा के समीप जाने की एक पगडण्डी है, तो पगडण्डी क्या है कि अन्न को पवित्र बनाना है मन की उत्पत्ति उसी के द्वार, से होती है। तो शाकल्य मुनि महाराज ने बारह बारह वर्ष के पांच अनुष्ठान किए, और अनुष्ठान करने से उन्होंने याग, याग में प्रतिक्रियाओं में लगे रहने से अग्नि के मुख में कुछ न कुछ आहुति देना है, वह अग्निम् ब्रह्माः मुनिवरों! देखो, अपनी दो प्रकार की हमारे यहाँ अग्नियों की उपलब्धि हो जाती है एक अग्नि वह कहलाती है जो बाह्य जगत् में प्रदीप्त हो रही है उसका शोधन करना भी अनिवार्य है। एक अग्नि हमारे अन्तःहृदय में

जो प्रदीप्त हो रही है उसे भी आहुति देना है, उसको आहुति वह पत्र और पुष्पों को पान कराना है, जिससे मानव का हृदय पवित्रता की वेदी पर मानो रत्त हो जाए।
महर्षि शाकल्य मुनि महाराज प्रातःकालीन वह खेचरीमुद्रा से प्राणायाम करते थे उससे उनकी अन्न की पूर्णाति हो जाती, मध्यकालीन आता तो वह नाना वृक्षों के पुष्पों को ले करके उनको अग्नि में तपा करके, रस बना करके पान करते थे। सायंकाल को सूर्य प्राणायाम, सूर्य प्राणायाम् में संकल्प प्राणायाम की पुट लगा करके बेटा! उसमें शीतली प्राणायाम करके उस रस को सेवन करते थे जो वायु में परमाणुओं के रूप में बह रहा है। इस प्रकार का उन्होंने बारह वर्षों का अनुष्ठान किया, इससे उनका मन पवित्र बन गया, उनका मन महान् बन गया इससे उन्होंने मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त कर ली, मोक्ष के निकट चले गए। क्या मानव के अन्तःकरण में क्या चित्त के मण्डल में जो बाह्य संस्कारों की उद्बुद्धा हो रही है, महानता हो रही है। वह एक बार एकान्त स्थली में विद्यमान थे, कहीं से विहिन्त नामक एक दैत्य मांस आहार करने के लिए एक हिरणी के पीछे गति करने लगा वह पूर्णरूपेण गर्भवती थी, तो जैसे उसने अस्त्रों का प्रहार किया तो शाकल्य मुनि के आश्रम में हिरणी मानो वह गर्भाशय से विहीन हो गई। शावक को जन्म देकर हिरणी आगे चली गई वह जलाइहि (शावक) शाकल्य मुनि के आश्रम में रह गया हिरणी तो आगे चली गई दैत्यं ब्रह्मा भी आगे गति करता रहा, तो ऐसा मुझे स्मरण है, शाकल्य मुनि महाराज ने उस हिरणी के शावक को दृष्टिपात किया। अरे, इसमें तो कोई गति हो रही है और सांस की प्राण की गतियाँ हो रही हैं, तो शाकल्य मुनि ने अपने कमण्डलों में से जल, उसके मुखारबिन्दु में परणित किया उसके सांसों की गति कुछ मध्यम बनी अपनी स्थलियों पर आ गई। शावक ने जल का और उपभोग किया तो वह जीवित हो गया। शाकल्य मुनि ने उसे कंठ से आलंगिन कर लिया, तो बेटा! देखो, वह उसकी पालना में लग गए। जब उसकी पालना में लग गए, मेरे प्यारे! नाना प्रकार की भोज्य जो उसे प्राप्त कराते रहते। समय पर जल प्रदान करते, समय पर उसे दुग्धाः प्रदान कराते।
वह वेचुक नामक राज्य के समीप पहुंचे और वेतकेतू राजा के द्वार पर जा करके उन्होंने

कहा सम्भवः लोकाम्। शाकल्य मुनि को जब राजा ने दृष्टिपात किया तो वाचकुकेतु राजा ने उनसे कहा, यहाँ शाकल्य मुनि का आगमन केसा मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ यह तो बड़ा मेरा अहोभाग्य है। उन्होंने राजस्थली को त्याग दिया और यह कहा आइए भगवन्! पधारिए। वह राजस्थली पर विद्यमान हो गए और विद्यमान हो करके राजा के चरणों को स्पर्श करके कहा, कहिए भगवन्! कैसे आगमन हुआ। उन्होंने कहाउ राजन् मुझे गो की इच्छा है मुझे दुग्ध देने वाली गो प्रदान कीजिए उन्होंने कहा प्रभु! यह तो आप मुझे सूचना दे देते मैं गो आपके आश्रम में पहुंचा देता। यह प्रभु आपने कष्ट क्यों किया है। उन्होंने कहा कि भ्रमण करता हुआ मैं ही आ गया कोई बात नहीं है, तो राजा ने ऋषि का तो स्वागत किया और अपने सेवकों से कहा जाओ देखो, ऋषि आश्रम में एक गो को ले जाओ दुग्ध देने वाली गो होनी चाहिए, मेरे प्यारे! गो आश्रम में पहुंच गई और ऋषि ने वहाँ से गमन किया, राजा ने कहा प्रभु! और कुछ देख लीजिए, शाकल्य मुनि ने कहा राजन्! तुम्हारे राष्ट्र में महानता तो होनी ही चाहिए क्योंकि देखो, तुम्हारे राष्ट्र चरित्र मों ओतप्रोत होना चाहिए, तुम्हारे राष्ट्र में विद्या का माध्यम पवित्र होना चाहिए, तुम्हारे राष्ट्र विज्ञानवेत्ता होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, राजा को यह उपदेश दे करके और वहाँ से आज्ञा पा करके उन्होंने गमन किया और वह भ्रमण करते हुए वह अपने आश्रम में पहुंचे तो उन्हें एक गो प्राप्त हो गई उसके दुग्ध को उस हिरणी के बालक को आहार कराते, दुग्ध का पान कराते रहते थे, ऋषि ममता और मोह ऐसी विचित्र होती है, बेटा! क्या मानो जिन्होंने अपने शरीर का मोह नहीं किया परन्तु देखो, हिरणी के बाल्य से कितना मोह हुआ उसको कंठ से आलिंगन, उसका चुम्बन करते रहते, उसको पुत्र की भांति उसका पालन करते रहते। मेरे प्यारे! देखो, वह हिरणी के बालक को भिन्न भिन्न प्रकार की शिक्षा देते रहते।

शाकल्य मुनि महाराज मेरे पुत्रों! देखो, श्वेतकेतु मुनि महाराज के पुत्र कहलाते थे और श्वेतकेतु मुनि महाराज का आयु बड़ा दीर्घ था। देखो, उनकी जो माता थी, सौमवृत्ति वाचन्नमहे उनकी जो माता थी वह शकुवरुणा वाचम् ब्रह्मा श्वेधा उनका नामोकरण था। श्वेधा अपनी लोरियों का पान करा करके और उसे यही शिक्षा देती है कि हे बाल्य! तू

निसंकोच हो, और निर्वस्त्रीय बन जाए परन्तु तू किसी से इच्छा प्रगट मत कर। माता की तो यह शिक्षा रही, श्वेतकेतु यही कहते रहते कि हे ब्रह्मचारी! तू राजा के राष्ट्र में अपने विचार के पन को इच्छा प्रगट करो अपने स्वार्थ के लिए मानो स्वार्थपरता में नहीं आना चाहिए पिता की भी यही शिक्षा आचार्यों की भी यही शिक्षा रही, परन्तु देखो, अपने जीवनकाल में शाकल्य मुनि महाराज ने पांच अनुष्ठान किए बारह बारह वर्षों के, परन्तु दो अनुष्ठान उन्होंने याशिक होने के लिए किए। मेरे पुत्रों! देखो, उनकी लगभग चार सौ वर्ष की आयु में उन्होंने किसी से कोई इच्छा प्रगट अपने लिए नहीं की। कितना त्याग और तपस्या में उनका जीवन रहा है।

एक समय महर्षि शाकल्य मुनि महाराज मुनिवरों! देखो, कात्यायन के गृह में जा पहुंचे भ्रमण करते हुए कात्यांग गृह में पहुंचे तो कात्यांग के यहाँ एक उनकी कन्या थी, उस कन्या ने कहा प्रभु! मुझे कुछ उपदेश दीजिए उन्ळोंने कहा कि उन्हें क्या उपदेश दूं कन्या ने कहा, नहीं भगवन्! आप तो बड़े महान् तपस्वी हैं, वेदज्ञ हैं दर्शनों के गर्भ को जानते हैं। उन्होंने कहा कि देखो,! मैंने तो यह पाया है अब तक मुझे जो शिक्षा प्राप्त हुई है वह यह हुई है कि किसी से हीनता के वाक्यों को मत उच्चारण करो। तुम कन्या हो, कात्यांग के गृह में तुम्हारा जन्म हुआ है जब तुम मानो अपने कुल का तुम्हारा परिवर्तन हो तो तुम अपने हृदय में यह इच्छा प्रगट मत करो कि मेरी जो माता है या पितर है मेरे पालन पोषण के लिए कुछ प्रदान करें क्योंकि यह इच्छा करना तुम्हारे लिए मानो तुम्हारी हीनता है। यह मेरे पूज्यपाद पिताजी ने माता का उपदेश और आचार्यों का मुझे यह उपदेश रहा है। यदि कन्या की यह इच्छा रहती है कोई परिवर्तन होने पर पति को, पति को न प्रवेश होने पर क्या मैं मानो मेरे लिए कोई इच्छा माता प्रहे वाचो हो जाए तो यह मेरी हीनता मेरा आत्मा उससे मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा। ऐसा ऋषि साकल्य ने देखो, कात्यांग की कन्या को यह उपदेश दिया। कात्यांग की कन्या ने और स्वांति ने यह कहा कि हे भगवन्! बहुत प्रियतम है मानो आपका उपदेश मुझे शिरोमणि है क्योंकि वाक्यों में यह इच्छा प्रगट ही नहीं करनी चाहिए क्योंकि मानव को अपने क्रिया कलापों में, तपस्या में मानवीयतव में मानो शरीर रत्त रहना चाहिए।

जब ऋषि ने यह वाक् प्रगट किया तो कात्यायन की कन्या ने कहा कि धन्य है प्रभु उन्होंने कहा प्रभु! मुझे कोई और उपदेश दीजिए, उन्होंने कहा कि हे देवी! मेरा उपदेश तो केवल यही है कि मानव को वेद का अध्ययन करना चाहिए, वेद प्रकाश में रत्त रहना चाहिए, वेदाः अमृताम् ब्रह्म लोकाम्, यह जो वेद है यह अमृत है यह परमपिता परमात्मा के मानो हमारे यहाँ एक वेद है परमपिता परमात्मा जो सृष्टि का, सृष्टि को उत्पन्न करने वाला है निर्माणवेत्ता है। मानो सृष्टि के प्रारम्भ में मानव के ज्ञान और विज्ञान को और मानो अपने संस्कारों को उपलब्ध करने के लिए ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रत्त होने के लिए मानो उन्होंने वेद का पवित्र हमें ज्ञान दिया है। इस वैदिक ज्ञान को, वैदिक प्रकाश को अपना करके हम अपने मानवीयतव को देखो, ऊर्ध्वा में ले जाएँ और मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करें।

मेरे प्यारे! देखो, कात्यांग की पत्नी ने कहा प्रभु! आप उपदेश दे रहे हैं, मेरी कन्या को यह तो बड़ा प्रिय है परन्तु देखो, मोह के सम्बन्ध में आपका क्या विचार है कि मोह होना चाहिए या नहीं होना चाहिए। कात्यांग की पत्नी से ऋषि ने कहा कि मोह नहीं होना चाहिए परन्तु कर्त्तव्य का पालन होना चाहिए, क्योंकि कर्त्तव्य में मानव की प्रवृत्तियाँ निहित रहती हैं। एक माता के गर्भस्थल में बालक पनप रहा है परन्तु माता यह जानती है कि निर्माण करने वाला प्रभु है, यह परमपिता परमात्मा की सम्पदा है यह मेरी सम्पदा नहीं है इदम् नन्यः यह मेरी सम्पदा नहीं है यह सम्पदा प्रभु की है। मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक मानो प्रभु की आज्ञा का, देखो, उसके नियमों का पालन करने वाला हो तो मेरा यह जीवन सार्थक बन जाएगा मानो जब माता के हृदय में ये विचार रहते हैं तो माता मानो अपने बालक को जन्म दे करके मानो अपने में प्रसन्न है कि मेरा बाल्य पूर्णायु होगा। क्योंकि माता यह जानती है जो मेरे विचारों में एक निष्ठा रहेगी तो मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक भी पूर्णायु को प्राप्त होगा और जब पूर्ण आयु में होगा तो माता पिता को देखो, उसका शोक भी नहीं होगा। शोक उस काल में प्राणी होता है जब प्राणी का मिलन हो करके विच्छेद हो जाता है, हमारे यहाँ उस काल में मुनिवरों! देखो, माता पिता से पूर्व बालक का (पुत्र का) विच्छेद नहीं होता है क्योंकि

माता अपने कर्त्तव्य का पालन करती है और मृत्यु के रूप को जान लेती है अपने बाल्य को माता कहती है, हे बालक! यह जो संसार है, जिस संसार में हम और तुम विद्यमान हैं यह संसार निस्सार है इसमें कोई सार नहीं है यह तो केवल विडम्बना का एक क्षेत्र बना हुआ है तो मुनिवरों! देखो, माता कहती है, हे बालक! इस संसार से उपराम होना। इस संसार को अपने उपांगों से जानना ही हमारा कर्त्तव्य है। हे बालक! तुम मुझे जानो मैं तुझे जानूं संसार में देखो, मृत्यु का अभाव हो जाता है माता जब यह अपने बाल्य को यह शिक्षा बाल्यकाल में संस्कारों को उपलब्ध करा देती है, तो मुनिवरों! देखो, मातं ब्रह्मा वह कहती है बालक तेरा अज्ञान होना ही मृत्यु है, शोकागुल होना ही मृत्यु है, हे बालक! संसार में निराशा ही तेरी मृत्यु है। मेरे प्यारे! जब माता बालक को यह देखो, गौरव के वाक्य प्रगट करती है तो माता कर्त्तव्य का पालन कर रही है और जो कर्त्तव्य का जो उपदेश है माता का वह महान् और पवित्र बन जाता है। आभा में नियुक्त हो जाता है।

तो मुनिवरों! देखो, कात्यांग के गृह में जब शाकल्य मुनि महाराज ने यह उपदेश दिया तो मुनिवरों! कात्यांग की पत्नी चरणों को स्पर्श करके बोली धन्य है प्रभु! परन्तु मेरा एक प्रसंग और है भगवन्! क्या जब बाल्य महान् बन जाए और वह गृहस्वामीवादी बन जाए तो माता पिता को क्या करना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, उस समय ऋषि ने कहा कि माता पिता को मानो प्रभु की गोद में चला जाना चाहिए, वे ब्रह्मयाग में रत्त हो जाएँ और ब्रह्मयागी बन जाएँ, ब्रह्मयागी वह प्राणी होते हैं जो ब्रह्म का चिन्तन करते रहते हैं, और ब्रह्मज्ञान जो प्रकृति के गर्भ में जो ब्रह्म की आभा निहित हो रही है, उस आभा में माता पिता जब रत्त हो जाते हैं, वह जो उसके गृह में बाल्यबालिका हैं माता पिताओं के उस ब्रह्मज्ञान के, ब्रह्मज्ञान का देवतव जानने का वह बाल्य इसका अनुसरण करते हैं तो गृह में मानो स्वर्ग की स्थापना हो जाती है, स्वर्ग आ जाता है वायुमण्डल दूषित नहीं होता। वायुमण्डल जब दूषित होता है जब गृहस्वामी और गृहस्वामिनी गृह में निहित रहते हैं देखो, पुत्र गृहस्वामी हो जाता है, गृहस्वामिनी का वह प्रोः हो जाता है उस समय देखो, वह माता पिता उसकी आभा में उसके क्रिया कलाप में जब बाधक

बनते हैं तो उस समय गृहं ब्रह्मा वह सतवादी विचार न रनह करके कलह में गृह हो जाते है और वह गृहनार्किक बन करके, वही नार्किक विचार वायु मण्डल में प्रवेश होते हैं तो वायु मण्डल भी दूषित हो जाता है।
मेरे प्यारे! देखो, बाह्य और आन्तरिक दोनों दूषित हो गए तो उस समय मुनिवरों! देखो, उसके शोधन के लिए कोई क्रिया कलाप नहीं रहता और वह परमाणु उसी को प्राप्त हो करके और भी कलह का क्षेत्र बन करके वह नाना प्रकार के और अप्रिय भक्ष पदार्थों में रत्त हो करके मेरे प्यारे! देखो, अपने को नष्ट करने वाले बन जाते हैं तो विचार विनिमय क्या मैं विशेष चर्चा नहीं देने आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ महर्षि शाकल्य मुनि महाराज कात्यांग के गृह में बेटा! देखो, वह यह वाक् उच्चारण करने लगे, मुनिवरों! देखो, कात्यांग की पत्नी ने कहा प्रभु! मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है, आपके शरीर से, आपके हृदय से मुझे ऐसी सुगन्ध आ रही है जैसे अब्रहो ममता में परणित हो जाएँगे। वह शाकल्य मुनि ने कहा देवी! तुम्हारा वाक्य मिथ्या तो होता नहीं, मैंने कई काल कई ऋषियों से यह वाक् मैंने श्रवण किया है क्या तुम्हारा वाक् यथार्थ है तुम जीवन में सत्य उच्चारण करने वाली हो मिथ्या नहीं उच्चारण करती हो। जब इस प्रकार की आभा जब तुम्हारे में है तो मैं भी मोह में परणित हो सकता हूँ कोई ऐसा आश्चर्य नहीं है मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा तो प्रभु! आप अपने को ममता से दूर कीजिए, आप अपने को मोह से भी दूर कीजिए, उन्ळोंने कहा देवी! मैं प्रयास तो करूंगा। परन्तु देखो, यह केसा होगा और उसको प्रभु ही जानता है मैं नहीं जान पाता आपने भविष्य की मुझे चर्चाएँ घोषणा की हैं। मेरे प्यारे! हो सकता है मेरे यह शरीर में, चित्त के मण्डल में ऐसे अंकुर विद्यमान हों।
शाकल्य मुनि महाराज ने बेटा! एक रात्री वहाँ विश्राम किया और वहाँ से उन्होंने गमन किया, गमन करते हुए जब वह आश्रम में आए तो हिरणी बालक व्याकुल हो रहा था, वह जल का भी पान नहीं कर रहा था, उनसे उसको मोह हो गया देखो, हिरणी के बालक को अपने ऋषि को पिता तुल्य स्वीकार करके उससे मोह हो गया अब ऋषि ने आ करके उसे अपने कंठ से उसे आलिंगन किया, रात्री का समय हुआ तो उस वाक्

को विचारने लगा क्या मुझे कात्यांग की पत्नी ने जो वाक् कहा है वह वाक् तो उन्होंने बड़ा विचित्र कहा है, हो सकता है मुझे तो आज हिरणी के वाल्य को दृष्टिपात करके मेरा अन्तःहृदय यह कहता है कि तुझे मोह हो गया है मानो तुझे ममता हो गई है तेरे बिना यह नहीं रह पाता और मेरा अन्तःहृदय ही मानो उसकी निन्दनीय दशा को दृष्टिपात करके मैं भी व्याकुल हो गया हूँ। इस प्रकार वे चिन्तन में लग गए और चिन्तन करते रहे। मेरे प्यारे! देखो, चिन्तन में लगे रहे मुनिवरों! देखो, प्रातःकालीन हिरणी के बाल्य को पुनः से हृदय से आलिंगन किया और उसको गो के घृत और दुग्ध के द्वारा उसका पालन करने लगे। तो मुढझे कुछ ऐसा स्मरण है क्या मुनिवरों! देखो, पूर्णरूपेण जब वह पालन करने लगे तो एक समय भ्रमण करते हुए कहीं से उनके पिता श्वेतकेतू आ गए और माता भी आ गईं। पित्रो सम्भवा लोकाम् मेरे प्यारे! श्वेतकेतू को दृष्टिपात करके महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने मानो उनके चरणों को स्पर्श किया और उन्हें आसन दिया, उस पर वह विराजमान हो गए माता भी विद्यमान हो गईं। तो वह हिरणी के बाल्य से उनको दुग्ध का पान कराने लगे। उनका स्वागत तो इतना ही किया, तो वह विराजमान हो गए और वह हिरणी के बाल्य को दुग्ध आहार कराने लगे। माता पितरों को मानो दुग्ध आहार नहीं कराया अन्न जल पान नहीं कराया मानो कन्दमूल नहीं दिया। हिरणी के बाल्य की ममता में उसके रत्त रहने पर मेरे प्यारे! देखो, वह श्वेतकेतू ऋषि के अश्रुपात होने लगे और अपनी पत्नी से बोले क्या, हे देवी! हम वृद्ध, यहाँ से हमारा प्रस्थान होना चाहिए, उन्होंने कहा प्रभु! आपं ब्रह्मः कुत्रो सवमं ब्रह्मा उन्होंने कहा ऋषि साकल्य के मानो पुत्र स्वीकार न करोगे इन्हें ऋषि की दृष्टि से दृष्टिपात करोगे, उन्होंने कहा देवी! मैं तो दृष्टि ऋषि की आभा से ही प्राप्त कर रहा हूँ परन्तु देखो, मेरा अन्तःआत्मा दुःखित हो रहा है उन्होंने कहा क्यों? उन्होंने कहा देवी! हमने तुमने इसके बाल्यकाल में इसके बनाने में जो हमने सहयोग दिया है वह सहयोग आज हमें व्यर्थ प्रतीत हो रहा है। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा भगवन्! ऐसा क्यों? उन्होंने कहा इससे मोह हो गया है मोह होने के कारण हम आए हैं, हमरा सम्भवो, हमारा अन्तःहृदय यह कह रहा है क्या यह ममता मोह में परिणित हो गया है। साकल्यम् ब्रह्मा साकल्य ने कहा हे

भगवन्! ऋषि वर आपके अश्रुपात क्यों हो रहे हैं क्यों, व्याकुल हो रहे हो, उन्होंने कहा कि हे पुत्रों! भयाब्रहे क्या मैं तुम्हें मोह में दृष्टिपात कर रहा हूँ। शाकल्य मुनि ने कहा प्रभु! आप मुझे तो मोह में ही दृष्टिपात कर रहे हैं, मैं मोह में आपको भी दृष्टिपात कर रहा हूँ अब मुनिवरों! देखो, वह पिता मौन हो गए। माता ने कहा कहो भगवन्! ऋषिवर, शाकल्य मुनि क्या कह रहे हैं? मेरे प्यारे! उन्होंने कहा यथार्थ कह रहे हैं। मैं ममता में ही तो शाकल्य मुनि कहते हैं, क्या मोह की सन्तान तो मोह में ही नष्ट हो जाती है भगवन्! तो मेरे प्यारे! देखो, स्वाद को दृष्टिपात करते हुए उन्होंने कहा यथार्थ है तो इसीलिए वेद का ऋषि कहता है मन्त्र कहता वक्तव्य वृहे व्राणम् वृहे वाचन्नम! माता पिता को कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए, मोह से न पालन करना चाहिए और न मोह में उनकी सम्पदा को एकत्रित करना चाहिए। वेद का ऋषि कहता है यह मोह ममता में संसार नष्ट हो जाता है। देखो, ऋषि ने यही कहा अपने पिता से क्या साकल्य ने कहा, हे पितर तुम मोह में आते हो और शोकातुर हो, तुम्हें मेरा मोह है कि मैंने इनका सहयोग दिया है। माता नहीं कह रही है माता मोक्ष की पगडण्डी के लिए अपने में रक्त हो रही है और आप शोकातुर हो करके नार्किक अपने जीवन को बना रहे हैं। संस्कारों की उपलब्धियों को जन्म दे रहे हैं, मेरे पुत्रों! देखो, शाकल्य मुनि ने जब यह कहा, उन्होंने कहा मुझे मोह है और होना है क्योंकि मोह से मेरा जन्म हुआ है और मोह में ही मेरा शरीर पूर्ण हो जाएगा। शाकल्य मुनि ने यह कहा तो मुनिवरों! देखो, वह श्वेतकेतु, उनकी माता मानो श्वेतकेतु की पत्नी साकल्य की माता ने कहा, पुत्रों! भवा सम्भवाम् वाचन्नमम् ब्रह्मः शोकम् ब्रह्मा वाचो देवाः यह कह करके कि तुम्हारा जीवन महान् बने, यह आशीर्वाद दे करके बेटा! माता और पिताओं ने वहाँ से गमन किया।

मेरे प्यारे! देखो, वह अपने में चिन्तन करने लगे, रात्री जब काल आया तो शाकल्य मुनि विचारने लगे कि मेरी प्यारी माता कितनी मेरी प्रिय है, माता अब भी कितनी उदार है कितनी महान् है मानो यह जानती हुई भी मुझे कहती है पुत्रों! भविता ब्रह्मा अद्वित्य तुम अपने में आयुष्मान बन करके जीवन को व्यतीत करो। शाकल्य मुनि इसी चिन्तन में लगे रहे ब्रह्मज्ञान में, ब्रह्म की आभा में भी और मुनिवरों! देखो, साकल्य सम्भवा

ब्रह्म हिरणाक्षर वृहे वह हिरणी के बालू से मोह ममता में मानो परणित रहे। तो बेटा! देखो, मोह की आभा में मानव को विशेष नहीं जाना चाहिए। वेद के वाक्य और वेद के ऋषि मुनियों ने यह कहा क्या मानव को ममता ब्रह्म वार्चो देवाः मानव को अपने कर्त्तव्यवाद का पालन करना चाहिए माता पालन करती है अपने में कर्त्तव्यवाद में रत्त हो जाए। बेटा! कर्त्तव्यवाद ही मानव को ऊँचा बनाता है, कर्त्तव्यवाद ही राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, कर्त्तव्यवाद ही मेरे प्यारे! देखो, विशेषकर संसार में सूर्य प्रातःकाल में उदय हो रहा है वह किसी से स्वार्थ नहीं चाहता प्रकाश देता रहता है, नाना प्रकार की किरणों देता रहता है वह प्रत्येक प्राणी को प्रकाश देता है। उनका भोज्य प्रदान करता रहता है, चन्द्रमा मानो रात्रि के काल में अमृत को बहाता रहता है, चन्द्रमा मानो रात्रि के काल में अमृत को बहाता रहता है। कोई भी प्राणी उसी से वह सौम, मौमकेतू को प्रदान करता रहता है वह कर्त्तव्यवाद है रात्रीकाल में बेटा! प्राणेश्वर अपने में ध्वनित होता रहता है। विश्रामाम् ब्रह्मः प्रत्येक प्राणी उसमें विश्रामित हो जाता है, विश्राम करने लगता है, तो मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव को प्रभु का ध्यान करना चाहिए। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। स्थान सहडभर

१४ 09 03 1986 पुष्प 51 शिव संकल्प व्याख्या

जीते रहो! देखों मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा कल्याणकारी है वह हमारा देवों का देव है। इसीलिए उसे हमारे यहाँ देवों का देव कहा जाता है।

परमात्मा का शिव स्वरूप

तो हमारे यहाँ, उस महामना मेघ्रा स्वस्ति ब्रहा मानो वृष्टि करने वाला है। हम उस परमपिता परमात्मा, जो कल्याणकारी शिव कहलाता है, हम उस परमपिता परमात्मा

की महिमा, अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहते हैं, और हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महानत्ता का वर्णन करता रहता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं। क्योंकि जब वह कल्याणकारी हैं तो वह स्रोत्र कहलाते है। तो इसीलिए आज हम उस महामना, अपने प्यारे देव की महिमा का गुणगान गाते चले जा रहे थे, और हमारा वेदमन्त्र ये कहता है कि हमें शिव की उपासना करनी चाहिए।

व्रती

प्रत्येक मानव को व्रती रहना चाहिए। क्योंकि जो व्रती मानव है वही तो महामना, उस देव की उपासना कर सकता है और जिसके द्वारा मानो व्रत नहीं होता, जो व्रतों का स्वामी है, वह उसको विश्वास नहीं कर सकता। तो इसीलिए हमारा वेदमन्त्र यह कहता है हे मानव! तू अपने को व्रती बना। क्योंकि व्रत करने वाला मानव संसार में महान् कहलाता है। मानव जब व्रती बनता है, तो अपनी अन्तरात्मा की जो ध्वनियाँ उत्पन्न होती रहती है, उन ध्वनियों के साथ में मानो देखो, अपनी प्रवृत्तियों का समन्वय करता रहता है, और जब उन ध्वनियों का मिलान होता है तो मानव व्रती बना करता है।

संकल्पवादी शिव

मुझे स्मरण आता रहता है ऋषि मुनियों का जीवन। बेटा! एक एक वेदमन्त्र को लेकर वे यह व्रत को धारण करते रहे है। और वह अपने में व्रती बना करते हैं। जैसे हमारे यहाँ याज्ञिक, याग करने वाला, यज्ञमान अपने में व्रती बना रहता है और जब वह व्रती बन जाता है तो उसकी अन्तरात्मा की जो पवित्र ध्वनि है, वे परमपिता परमात्मा को अग्रणीय बनाते हुए, अपने में महान बना करती है। संसार का कोई भी प्राणी हो, सबसे प्रथम वह व्रती बनता है, संसार में जब माता पिता अपने में व्रती बनते हैं, तो उसके पश्चात् वह महानता की प्रतिभा को जन्म देते है। उस महानता का जब जन्म हो जाता है, तो उसका नामोकरण पवित्र बन जाता है। तो इसीलिए वेद का मन्त्र कहता है, हे मानव! तू शिव, उस परमपिता परमात्मा की उपासना कर। मानो जिससे, अनादिकाल

से जिसकी ऋषि मुनि उपासना करते रहे हैं और शिव संकल्वादी बने है। क्योंकि शिव कहते हैं, जो संकल्पवादी हैं, उसका नामोकरण शिव कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ जो रात्रि को अन्धकार से प्रकाश में लाने वाला है, मानो वही तो शिव कहलाता है। तो हमारे आचार्यों ने बेटा! जब शिव की उपासना करनी प्रारम्भ की, मानो शिव नाम हमारे वैदिक साहित्य में, भिन्न भिन्न प्रकार के रूपों में बेटा! उसका रूपण किया गया है। क्योंकि शिव नाम परमपिता परमात्मा का है और जहाँ शिव परमात्मा को कहते हैं वहाँ शिव नाम बेटा! सूर्य को कहा जाता है। वह सूर्य मानो अन्धकार से प्रकाश को उत्पन्न करने वाला है, प्रकाश को लाने वाला है। वह स्वतः अपने में प्रकाशित रहता है। तो मानो देखो, शिव नाम बेटा! हमारे यहाँ सूर्य को कहा जाता है।

मैंने बहुत पुरातन काल में कुछ चर्चाएं की हैं और विचार दिया है कि हमारे यहाँ बेटा! जब देखो, ये सूर्य अपने में प्रकाश देता है तो रात्रि के मानो देखो, अन्धकार को अपने में धारण करने लगता है। इसी प्रकार जैसे अन्धकार को धारण किया जाता है, इसी प्रकार ब्रह्मे वर्णा प्रीहि वृतम् देवाः मेरे प्यारे! यह जो सूर्य प्रातःकाल में उदय होता है, यह अन्धकार को अपने गर्भ में धारण कर लेता है। मानो देखो, यह पृथ्वी जो विष उगलने लगती है, ये ऊष्णा बन जाती है, तो यह सूर्य ही अपनी आभा में मानो देखो, अपने में विष को निगल जाता है, और वृष्टि का प्रादुर्भाव हो जाता है। वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है उसी वृष्टि के मूल में मेरे पुत्रो! अमृतमयी होता है। जिस अमृत को पान करने के पश्चात् मुनिवरों! देखो, वह मानवीय आभा में सदैव मानव रत्त रहने लगता है और पृथ्वी अपना विष उगलना शान्त कर देती है।

तो मुनिवरों! देखो, हमें विचारना यह है, कि हम मुनिवरों! देखो, हम विष को अपने में धारण न करें। अमृत को लाने का प्रयास करें। हम स्वतः अमृतमयी बनने का प्रयास करें। तो बेटा! देखो, हमारा यह वेदमन्त्र क्या कहता है? वेदमन्त्र यह कहता है कि हे शिव! तू कल्याणकारी है, तू कल्याणमयी आनन्द को प्रदान करने वाला है। इसीलिए बेटा! उस महा देव को हमारे यहाँ शिव कहा जाता है। इसीलिए मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे कई काल में वर्णन कराया कि शिवरात्रि आती है और शिवरात्रि क्यों कहा

जाता है? हमारे यहाँ, परम्परागतों में, अतीत के काल की नाना प्रकार की शिव की महानता की गाथाएं आती रहती है। परन्तु देखो, ये गाथाएं अपने में अद्वितीय मानी जाती है। मैंने पुरातन काल में इन गाथाओं को कई काल में प्रकट करते हुए कहा है क्या मुनिवरों! देखो, कि शिव नाम जो अन्धकार को नष्ट करने वाला है, प्रकाश में मानो देखो, जो समाज को लाने वाला है, उसका नाम शिव है हमारे यहां मुनिवरों! देखो, ब्रह्मे वर्णा प्रहे व्रत्ताम् लोकाः मेरे प्यारे! पुरातन काल में हमारे यहाँ शिव नाम के राजा हुए हैं और वह शिव, नाम के राजा मेरे प्यारे! देखो, अपने राष्ट्र का शुद्धिकरण करते रहते थे। अपने राष्ट्र में मानो वेदों की प्रतिभा को प्रतिभाषित करते रहते थे। शुद्धिकरण करते हुए उसको महानता की वेदी पर लाने का प्रयास करते रहते थे। तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरों! देखो, शिव नाम यहाँ राजा को कहा गया है। जो राजा, अपने राष्ट्र में अपने को शिव संकल्पवादी बनाता है। शिव नाम जो कल्याणकारी है, परमपिता परमात्मा का नामोकरण कहा जाता है। वही शिव मेरे प्यारे! देखो, हमें एक महानता की ज्योति को प्रदान करने वाला है।

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ। मैं केवल ये चर्चा तुम्हें प्रगट करने के लिए आया हूँ कि हमें मुनिवरों! देखो, अपने में महान् और विचित्र बन करके, परमपिता परमात्मा के मानो देखो, संकल्प को धारण करना है, जिस संकल्प के द्वारा, हमारी मानसिक प्रवृत्तियां ऊँची बन जाएं। और राजा के राष्ट्र का वर्णन इसीलिए प्रायः हमारे प्रायः वैदिक साहित्य में आता रहता है कि मानो देखो, राजा का नामोकरण भी शिव कहा जाता है। वह जो शिव हमारा कल्याणकारी है। मुनिवरों! देखो, उसी के आधारित मुनिवरों! देखो, शिव नाम मुनिवरों! देखो, एक पिण्ड को भी कहा जाता है। वह पिण्ड कौन सा है जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है तो मुनिवरों! वे परमपिता परमात्मा जो शिव कहलाते हैं, जो कल्याणकारी है मानो देखो, उसकी आभा में बेटा! उसका जन्म होता रहता है। विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! इस संसार का पिण्डाकार आकार बना करता है। और पिण्डाकार का मानो देखो, जब अपने में उसका जब महत्तत्व से उसका समन्वय होता है तो उसकी भिन्न भिन्न प्रकार की विभक्त क्रियाएं बन जाती है

और वह भिन्न भिन्न स्वरूपों में परणित हो जाता है तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरों! आज का हमारा वेदमन्त्र यह कहता है कि हमें अपने में बेटा! देखो, शिव संकल्पवादी बनना है। और परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड को हमे मानो देखो, पिण्डाकार में हमें दृष्टिपात करना है जैसे मानो देखो, पिण्डाकार वाला यह जो ब्रह्माण्ड है, यह अपनी आभा में बेटा! एक एक परमाणु बेटा! पिण्डाकार बना हुआ है। वह मानो अपने में पिण्डाकार बन करके अपनी आभा में निहित हो रहा है। आओ, मेरे प्यारे! आजका हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है क्या हम मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुए उस परमपिता परमात्मा को, अपना उपास्य देव स्वीकार करके हुए बेटा! इस संसार सागर से पार होने का हमें प्रयास करना है।

आओ मुनिवरों! आज का हमारा वेदमन्त्र हमें एक ऊँची प्रेरणा दे रहा है, ऊर्ध्वा में गति बना रहा है क्योंकि यह संसार अपने में अद्वितीय रूपों में रत्त होने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, यह आज का हमारा जो विचार है मानो देखो, यह उद्गीत गा रहा है कि हमें उस परमपिता परमात्मा के विशुद्ध रूप का अपने में वरण अपने में शिव संकल्पवादी बनना चाहिए। जिससे हमारा मन मानो पवित्रता की वेदी पर रत्त हो जाए। हे प्राण स्वरूप! हमारा जीवन, अपने में उद्गीत गाने वाला महानता की आभा में रत्त रहने वाला हो। आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा जो वैदिक साहित्य है, वह हमें अपने में पुकार रहा है।

सतोगुणी बनना है

वैदिक साहित्य यह कहता है क्या हे मानव! तू अपने में याज्ञिक प्रतिक्रियाओं में रत्त होता चल। यज्ञं ब्रह्मा लोकां विप्रं ब्रह्मे कृतं लोकाः वाचन्नमः दिव्यां गताः मेरे प्यारे! देखो, वह जो गतेषु बनना है उस परमपिता परमात्मा की उपासना करनी चाहिए। हमारे यहाँ रजोगुण, तमोगुण की आभा में भी प्रायः बेटा! ऐसा हुआ करता है। रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण ये तीन गुण कहलाते हैं। तो मानव को बेटा! अपने में सतोगुणी बनना है। हमें सत्य को धारण करना है। सत्य को धारण करते करते, मेरे पुत्रों! देखो, हमें

शिव संकल्पवादी बनना है और शिव संकल्पवादी बन करके अपने में अपनेपन की धारा को अपना करके मुनिवरों! देखो, इस सागर से पार हो सकते है। हममें विवेक की मात्राएँ उत्पन्न हो जाती है। जब विवेकी बन जाते हैं तो मुनिवरों! संसार का जितना क्रियाकलाप हो रहा है, वह कहीं रजोगुण में हो रहा है, कहीं सतोगुण में हो रहा है, कहीं मानो देखो, यह अपने में तमोगुणी बना हुआ है और मुनिवरों! देखो, अपनी आभा में नियुक्त हो करके वह मानव इस संसार सागर से पार हो जाता है।

तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं विवेक की चर्चा नहीं कर रहा हूँ। विचार केवल यह देना चाहता हूँ क्या परमपिता परमात्मा बेटा! विज्ञानमयी मानो देखो, शिव संकल्पवादी है। वह विज्ञान मानो देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता अपने में आध्यात्मिक धारा को प्रायः जन्म देते रहते हैं। बेटा! वही तो प्राण स्वरूप कहलाता है।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें ऋषि मुनियों के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, ऋषि मुनि अपने में विद्यमान हो करके उस शिव की उपासना करते रहे हैं। मानो देखो, जो शिव हमारा कल्याणकारी है। हमें मानो एक प्रेरणा देता है। हमें एक महानता का दर्शन कराता है। हम तुम्हें उसी ऋषि मुनियों के क्षेत्र में ले जाना चाहते हैं जहाँ मुनिवरों! देखो, अब हम ब्रह्मे ब्रहा मेरे पुत्रों! एक समय महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के द्वारा कुछ मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनि पहुंचे और और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से कहा कि महाराज! हम वेदों को ये अध्ययन करते रहते हैं कि यह शिव क्या है? यह शिव कल्याणकारी कहलाता है। परन्तु यह शिव क्या है? मेरे प्यारे! देखो, महाराजा वशिष्ठ मुनि महाराज ने ब्रह्मचारियों के मध्य में विद्यमान हो करके, कहा कि यह जो शिव है यह हमारा कल्याण करने वाला है। क्योंकि शिव उसे कहते हैं जो अन्धकार से प्रकाश में लाने वाला हो। इसीलिए अन्धकार को मानव को त्यागना चाहिए। तो बेटा! कुछ ब्रह्मचारियों ने यह कहा ब्रह्मे वर्णा व्रतं देवाः क्या महाराज! यह अन्धकार क्या है? और प्रकाश क्या है? मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज क्या बोले अन्धकार तो कहते हैं रात्रि को और दूसरे रूपों में अन्धकार कहते हैं अज्ञान को। इसीलिए मानव को अन्धकार को त्याग देना चाहिए और प्रकाश को लाना चाहिए। आज जब हम प्रकाश की विवेचना

करने लगते हैं। तो प्रकाश में ब्रह्माण्ड की प्रत्येक चर्चाएं आ जाती हैं। मुनिवरों! देखो, कहीं आध्यात्मिकवाद को हमारे यहाँ मानो देखो, प्रकाश कहा जाता है, कहीं मुनिवरों! देखो, प्रकाश एक मानो देखो, ऊर्ध्वा में जो ज्ञान है, उसको हमारे यहाँ प्रकाश कहा जाता है। परन्तु वेद का ऋषि यह कहता है कि प्रकाश उसे कहते हैं जहां मुनिवरों! मानव अपने ही प्रकाश में रत्त हो जाता है। अपनी अन्तरात्मा जो प्रकाश दे रही है, प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है उसमें मानो जो समाहित हो जाता है, वही प्रकाश कहा जाता है। हमें उस प्रकाश के लिए सदैव रत्त रहना चाहिए। वही प्रकाश मुनिवरों! देखो, हमारा एक मानवत्व जीवन कहा जाता है। तो मुनिवरों! वेद का विचारक कहता है, ऋषि मुनि कहते हैं कि वशिष्ठ मुनि महाराज ने अपने ब्रह्मचारियों के मध्य में साधको के मध्य में यह कहा कि वही प्रकाश है जो मानव की अन्तरात्मा में निहित रहने वाला है। हम उस प्रकाश के लिए प्रयास करें। उसके प्रयासता में लगे रहें, जिससे वह प्रकाश हमारे समीप आ जाए। वही शिव संकल्पवादी, एक प्रकाश कहा जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वर्णन करते हुए, एक आचार्य ने, एक ऋषि ने यह प्रश्न किया कि महाराज! शिव नाम तो राजा को कहते हैं। उन्होंने कहा कि उस राजा का नाम भी शिव है, जो राजा अपनी कुशलता से, अपने ज्ञान से और विज्ञान से इस प्रजा में शान्ति की स्थापना कर जाए। उसका नामोकरण भी शिव कहा जाता है। क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में, इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है, जैसे मानो देखो, हिमालय अपने में ऊर्ध्वा में रहता है इसी प्रकार प्रजा में जब इस प्रकार के विचार होते हैं, मानो देखो, ऊर्ध्वा में विचार होते हैं तो उस प्रजा को जो स्वामी है, नेतृत्व करने वाला उसका नाम शिव कहा जाता है। जैसे मुनिवरों! देखो, विद्यालय के ब्रह्मचारियों को आचार्य अध्ययन कराता है, और प्रकाश में लाने का प्रयास करता है तो मानो देखो, वह एक शिव संकल्पवादी अपने में धारयामी बना हुआ है। तो विचार क्या, वशिष्ठ मुनि महारजा ने भी इसका यह मन्तव्य दिया कि मानव को प्रकाश में जाना चाहिए। मेरे प्यारे! वह सूर्य अपने में प्रकाशक कहा जाता है। वह सूर्य अपने में शिव मानो कहा जाता है जो पृथ्वियों को, मानो दखो, उसके विष को अपने में निगलने वाला है। मानो देखो, जब

पृथ्वी की माला बनती है। उस माला को अपने में धारण करने वाला, यह शिव कहलाता है। यह कौन शिव? सूर्य को कहा जाता है। वशिष्ठ मुनि महाराज ने ब्रह्मचारियों के मध्य में यह कहा कि मानो देखो, शिव नाम सूर्य का है मानो देखो, इसके अन्तर्गत गति करने वाली, नाना पृथ्वियाँ हैं और वे पृथ्वियों की माला बना करके अपने में धारण कर रहा हैं यह पृथ्वी हमारा देवता है। यह नाना प्रकार के गुरूतव पदार्थों को हमें प्रदान करने वाला है। मानो देखो, वही गुरूतव परमाणु प्रत्येक लोक लोकान्तरों में प्रायः प्राप्त होते है। क्योंकि बिना गुरूतव के कोई भी लोक लोकान्तर का निर्माण नहीं होता। तो मानो देखो, वह जो शिव है अमृतं ब्रह्मा वह जो सूर्य है वह अपनी ऊर्ज्वा से नाना पृथ्वियों को अपने में धारण कर रहा है। उन पृथ्वियों की माला बना रहा है, और माला बना करके उनको अपने में धारण कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, वही पृथ्वियों को सांत्वना देने वाला है। जब मानो देखो, ग्रीष्म ऋतु का काल आता है और ग्रीष्म ऋतु में यह पृथ्वी तपायमान हो जाती है, और जब यह अपने में विशाल तपायमान हो जाती है तो यह अपने में विष उगलने लगती है, इस विष को कौन धारण करता है? देवताजन उपासना करते हैं, और यह कहते हैं हे शिव! आओ, तुम हमें अमृत की वृष्टि करो। यह पृथ्वी अपने में विष उगलने लगी है तो मानो देखो, तो वही शिव अब्रहा मानो देखो, शिव अपने में वृष्टं ब्रह्मा अपने में मेघों की उत्पत्ति करता हुआ, वह अपनी किरणों से, ऊर्ज्वा से, अपने में जल को मेरे प्यारे! वह धारण करके, धीमी धीमी वृष्टि कर देते हैं। उस वृष्टि का मूल कारण यह बनता है कि यह पृथ्वी विष उगलना शान्त कर देती है और वह जो विष उगला हुआ उसको सूर्य अपने में धारण करने लगता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, मैंने तुम्हें कुछ सूक्ष्म सी माला की चर्चाएं की है। विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! पिण्डाकार जो शिव है, उसकी हमें उपासना करनी है और उपासना करके हमें, अपने में व्रती बनना है जैसे सृष्टि के प्रारम्भ में यह सूर्य व्रती बना हुआ है, और सूर्य अपने व्रत को धारण करके इस संसार को तपाता रहता है। ये पृथ्वी व्रती बनी हुई है, ये नाना प्रकार की ऊर्ज्वा को प्रदान करने वाली है। नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों को, अपने में संकल्पवादी बन करके, मानव के जन जीवन, प्रत्येक

प्राणी के जन जीवन को ऊँचा बनाने वाली है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार क्या? हमें अपने में महान् बन करके उस मानो देखो, देव की उपासना करके बेटा! इस संसार सागर से पार होना है। मैं इन मालाओं की चर्चा तो, तुम्हें करता ही रहूँगा। कल बेटा! मैं यह चर्चा करूंगा, कि यह सूर्य मानो देखो, विष और अमृत को कैसे इस पृथ्वी पर भिन्न भिन्न करता है। यह चर्चाएं बेटा! मैं कल प्रगट करूंगा और राजा और प्रजा का कैसे विष को भिन्न भिन्न किया जाता है। यह चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज के विचार उच्चरण करने का अभिप्राय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा शिव संकल्पवादी बनें। आज मैं बेटा! अपने विचारों की भूमिका बनाने के लिए आया हूँ, एक भूमिका मैंने बनायी है। ये चर्चाएं कल बेटा! इसके आगे की प्रगट करेंगें।

आज का वाक् ये क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं, यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या, कि हम परमपिता परमात्मा की उपासना करते रहें और ऋषि मुनियों का जो निश्चिय किया हुआ, जो शिव संकल्प है। उसे अपने में धारण करते हुए ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ते रहें। परमपिता परमात्मा का जो यह जगत् है, यह बड़ा अनूठा है। अपने में महानता का प्रदर्शन करता रहता है। ये है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि प्रत्येक प्राणी अपने में व्रती बनें और अन्धकार को समाप्त करके प्रकाश में अपने को लाने का प्रयास करें। प्रकाश ही मानव का जीवन है। अन्धकार ही मानव की मृत्यु है। यह है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। ओ३म् देवाः यम रथप्राची रेवाः आभ्याम् मानाः वरुणा गतम् माह्म रेधियम् ऋता। ओ३म् जनिता रथम् माह्म रेवाः। ओ३म् श्वञ्जनाःह्म माम् ऋषि वरुणा गाताःह्म। दिनांक 09 03 1986।

१५ 10 03 1986 पुष्प 51 शिक्षा देने का किसको अधिकार है?

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों

का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि संसार का जितना भी यह मानवीय जगत् है, मानो इसमें जो मानवीय दर्शन हैं, वह अपने में महान् और पवित्र कहलाता है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, नाना प्रकार का अनुसन्धान होता रहा है। नाना प्रकार का अन्वेषण होता रहा है, और उसके ऊपर नाना प्रकार की विचारधाराएं, अपने अपने मन्तव्य के आधार पर उन्होंने प्रकट की है। परन्तु एक ही मानवीय दर्शन है और उसमें जो मानवीय दर्शन है वह अपने में महान कहलाता है।

मानवीय समाज का कर्म

बहुत पुरातन काल हुआ, जब ऋषि मुनियों की कोई एक सभा हुई, परन्तु उस अनुपम सभा में यह निर्णय होने लगा कि मानवीय समाज को कैसे ऊर्ध्वा में लाया जाए? परन्तु नाना ऋषि मुनियों ने, बेटा! एक मानवीय समाज का एक क्रम बनाया। यह जो मानवीय समाज का क्रम है उसमें नाना प्रकार की विचारधाराएं, प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आती रहती है और कुछ वेदमन्त्रों की प्रतिभा, प्रायः इस प्रकार की मानी जाती है, जिसमें मानवीय जीवन की प्रतिभा का प्रायः दर्शन होता है। मैंने बहुत पुरातन काल में, नाना ऋषि मुनियों की चर्चाएं की। आज भी मुझे स्मरण आ रहा है बेटा! बहुत पुरातन काल हुआ, नाना विद्यालयों में अपना एक क्रम बनाया, पठन पाठन का। उस पठन पाठन के कर्म में आचार्यों ने ब्रह्मचर्य जीवन को एक महान् दिशा में ले जाने के लिए उन्होंने बेटा! मानवीय दर्शन दिया और उस मानवीय दर्शन के आधार पर मानव के जीवन की प्रतिभा उसी आधार पर मानो एक आभा में परणित होने लगी। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, मैं जब वशिष्ठ मुनि महाराज चर्चाएं और नाना ऋषि मुनियों की चर्चाएं, जब स्मरण आने लगती है, मेरे प्यारे! देखो, ज्ञान और विज्ञान की चर्चाएं, और ज्ञान और विज्ञान में जो एक मानवीय दर्शन निहित रहता है। क्योंकि ज्ञान और

विज्ञान में ही तो मानवीय दर्शन रहता है, मैंने बहुत पुरातन काल में कहा है, वेद का एक एक वेदमन्त्र यह गाथा गा रहा है कि संसार में प्रत्येक जो परमाणु है मानो जो अणु रूप में गति कर रहा है, उसमें नाना प्रकार की विभक्त क्रियाएं रहती हैं। वह जो नाना क्रियाएं हैं वह अपने में विभक्त होती रहती है और उनके विभाजन के साथ ही तीन वस्तुएं हमें प्राप्त होती है। बेटा! उसमें सबसे प्रथम उसमें गुरूतव है, और द्वितीय द्वितीय उसमें आकुचंन है और तृतीय मुनिवरों! उसमें हमें तेजोमयी का भास होता है। तो मेरे प्यारे! यह तीन प्रकार की प्रतिभाएं मानो सर्वत्र इस ब्रह्माण्ड में, चाहे वह किसी भी लोक लोकान्तरों में चला जाए, उसमें वह हमें प्रतीत होती रहती है। परन्तु मानव के जीवन से इनका समन्वय रहता है और मानव जीवन जब इनसे कटिबद्ध होता है तो एक मुनिवरों! अनुपम विचार हमारे समीप आता है।

मैंने बहुत पुरातन काल में कहा कि संसार में यदि प्रत्येक मानव अपने कर्त्तव्य का पालन करने के लिए तत्पर हो जाता है जैसे मुनिवरों! हमारे यहाँ, प्रत्येक पदार्थ अपने में कर्त्तव्यवाद में लगा हुआ है जैसे मुनिवरों! देखो, जैसे इससे पूर्वकाल में हमने प्रकट कराया कि सूर्य समय से उदय होता है और उदय होते ही ऊर्जा देना प्रारम्भ कर देता है। वह पितरों की कोटि में माना गया है। वह हमारा पितर कहलाता है। क्योंकि वह हमें प्रकाश देता है, ऊर्जा देता है, मानव के जीवन की प्रतिभा का एक दर्शन करा रहा है। तो मेरे प्यारे! वह कहीं से एक अनुपम प्रकाश दे रहा है। जिस प्रकाश को ले करके मुनिवरों! देखो, मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाता है। तो इसीलिए हमे यह सिद्ध होता है, यह प्रतीत होता है कि प्रत्येक मानव एक दूसरे से कटिबद्ध है। मानवीयता किसी में पिरोई हुई है। इसीलिए हमे उस पिरोए हुए सूत्र को हमें विचार विनिमय करना है।

चार भागों में मानव समाज

तो आओ मेरे प्यारे! मैं उच्चारण कर रहा था मानव के जीवन के ऋषि मुनियों ने मेरे प्यारे! देखो, चिन्तन करने के लिए, चार विभाग में मानव के जीवन को परिवर्तित किया

है। मानव के जीवन को चार विभागों में मानो विभक्त किया है। सबसे प्रथम बेटा! ब्रह्मवर्चोसि, ब्रह्मचरिष्यामि मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम जब यह मानव ब्रह्मचरिष्यामि बनता है और ब्रह्मचर्य का पालन करने लगता है तो आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, मेरे प्यारे! देखो, आचार्य को अपने गुरु की कोटि में परणित करने लगता है और कहता है यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव हैं। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव को यह विचार विनिमय करना चाहिए क्या गुरुत्तम ब्रह्मे वाचो देखो, कि गुरु की मीमांसा यह है कि संसार में जो अन्धकार को प्रकाश में लाने का प्रयास करता है, वह मानो देखो, गुरूतव कहलाता है। वह गुरुजन कहलाते हैं तो मुनिवरों! देखो, जो मानव बाल्यकाल में जब आचार्यकुल में ब्रह्मचारी प्रवेश करता है तो मानो देखो, वह अज्ञानी है, शिशु है। तो मेरे प्यारे! देखो, आचार्य उसे अपने में धारण करके उसे प्रकाश में लाने का प्रयास करता है। वह प्रकाश में लाता है। और वह प्रकाश में ला करके मुनिवरों! देखो, उसके चरणों में विद्यमान हो करके, सबसे प्रथम तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ, यह माना गया है कि माता हमारे यहां विशिष्ठ मानी गई है। परन्तु माता के जीवन का जो एक समूह है वह बड़ा विचित्र रहा है परम्परागतों से।

मुझे स्मरण आता रहता है जब मैं मानो देखो, त्रेता के काल में क्या, द्वापर के काल में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो मुझे प्रतीत होता है मुझे नाना माताओं का जीवन स्मरण आने लगता है। जब मैं पूर्व काल में जाता हूँ, तो माता कौशल्या और उससे पूर्व काल में जाता हूँ। तो माता मल्दालसा का जीवन मुझे स्मरण आने लगता है। मानो देखो, इससे पूर्व काल में और भी नाना माताएं इस प्रकार की हुई हैं जिन्होंने अपने जीवन काल में तप किया है। क्योंकि बिना तप के, परमाणु मानो तपा नहीं करता है। मुनिवरों! देखो, यह वैज्ञानिकजन जब अपनी स्थलियों पर विद्यमान होते हैं। तो ये परमाणु गति करता रहता है। अन्तरिक्ष में वह भरण होता रहता है और उसी परमाणु को एक दूसरा परमाणु अपने में मानो देखो, गृसित होता रहता है और वही परमाणु तपों में परणित हो करके मेरे प्यारे! देखो, माता के गर्भस्थल में शिशु के रूप में प्रवेश करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में, तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा है, आज

भी मैं इस निर्णय को देने के लिए तत्पर हूँ। बेटा! जब मैं द्वापर के काल में जाता हूँ, द्वापर के काल का वह साहित्य मुझे स्मरण आने लगता है जहाँ मुनिवरों! देखो, माता कुन्ती का जीवन मुझे स्मरण आता है। माता कुन्ती मानो जब बाल्यकाल में, आचार्य कुल में अध्ययन करती रहती थी। तो अध्ययन की भूमिका हमारे यहाँ पूर्वकाल में ऋषि मुनियों ने एक मानव का कर्म बनाया। माताओं को वह कर्म मानो देखो, बाल्यकाल में, ब्रह्मचारियों को शिक्षा प्रदान की गयी, कि तुम इस प्रकार अपने जीवन को बनाने का प्रयास करो। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, माता कुन्ती ने जब बाल्यकाल में अध्ययन करती रहती थी तो अध्ययन करते करते मुनिवरों! देखो, उनका जीवन एक मानो देखो, शिरोमणी बना। और वह नाना प्रकार की तरंगों को अपने में धारण करती रहती थीं मेरे प्यारे! देखो, जिस भी बाल्य का जन्म मेरे प्यारे! माता के गर्भ में शिशु का जहाँ प्रवेश हुआ उसने उसी देवता की तपस्या प्रारम्भ कर दीं, जिस देवता के गुणों को वह अपनी सन्तान में जन्म देना चाहती थी। मेरे प्यारे! देखो, मुनिवरों! देखो, वह कहीं पवन की उपासना कर रही है। कहीं सूर्य की उपासना उन्होंने की, मानो कहीं इन्द्र की उपासना की। मुनिवरों! देखो, कहीं अश्विनी कुमारों की उपासना की। मुनिवरों! देखो, अश्विनी आभा में युक्त रहने वाले देवता हैं। मेरे प्यारे! देखो, अश्वाम् ब्रह्म वाचो देवाः ऐसा वेद की आख्यिका भी कहती रहती है। जब मैं उस काल में प्रवेश करता हूँ, तो मुझे ये स्मरण आता रहता है कि माता अपने में महान तपस्वी रही है और तपस्या करने के पश्चात् मेरे प्यारे! वह जब माता के गर्भस्थल में, जब शिशु का प्रवेश हुआ तो वह इन्द्र की उपासना करने लगी, और इन्द्र से वार्त्ता प्रकट करती रहती थीं मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र नाम के हमारे यहाँ नाना प्रकार पर्यायवाची शब्द माने जाते हैं। इन्द्र नाम मेरे प्यारे! देखो, वायु को कहा जाता है, इन्द्र नाम विद्युत् को भी कहा जाता है। तो मुनिवरों! देखो, इन्द्र नाम के राजा भी हुए हैं। परन्तु देखो, माता अपने में इन्द्र की तपस्या करने लगी और इन्द्र के तपों में परणित हो करके, वह यह कहा करती थी इन्द्रो भवा सम्भवा लोकां मानो देखो, मानो देखो, हे इन्द्र! तू आ, मेरे में प्रवेश कर। मानो देखो, इन्द्र नाम बेटा! परमात्मा को भी कहा जाता है। यहाँ इन्द्र नाम मेरे प्यारे!

देखो, यहाँ विद्युत् को माना गया है क्योंकि देवताजन मानो उसकी उपासना करते रहते है। माता कुन्ती ने अपने में तपस्या की और वह शिशु को इसी प्रकार का संस्कार देने लगी, मेरे प्यारे! देखो, अर्जुन जैसों का जन्म हुआ। मानो देखो, वह धर्मं ब्रह्मा, धर्म की उपासना करना, धर्म किसे कहा जाता है? मैंने धर्म के सम्बन्ध में मानो देखो, धर्म की भूमिका बनाना प्रारम्भ हो गया। माता कुन्ती ने बेटा! अपने में धर्म की उपासना की और वह धर्म की उपासना करते करते, इतनी मानो गम्भीरता में परिणित हो गयी, कि जो कहा जाए, वही सत्य हो जाए। मुनिवरों! देखो, इस प्रकार की उन्होंने अपनी धारा बनायी। तो इसी प्रकार पांचों पुत्रों में से तीन अपने पुत्र थे, और दो माद्री के पुत्र थे। पांचों सन्तानों को जन्म देना, मेरे प्यारे! देखो, जन्म देना ब्रह्मवाचो कहा जाता है। परन्तु देखो, माद्री ने भी अपने में तपस्या में परणित हो जाती है। मेरे पुत्रों! देखो, आचार्य कुल में, इसके पश्चात् बालक में प्रवेश करता है। आचार्य उनके जो संस्कार है वह जो परमाणु हैं, जो तरंगों में परणित हो रहे हैं उन परमाणुओं को वह जागरूक कर देते हैं। आचार्य विद्यमान हैं और विद्यमान हो करके वह तपस्या के फल दे रहा है और प्रश्नों का अध्ययन करा रहा है और वह कहता है, हे ब्रह्मचारी! तू अपनी इन्द्रियों को मुझे प्रदान कर। प्रत्येक इन्द्रियों को उन्होंने, उन्हें प्रदान कर दिया। इन्द्रियों का शोधन करना यह आचार्य का कर्त्तव्य कहलाता है। तो जब बाल्यकाल में आचार्यकुली में ब्रह्मचारियों को शिक्षा आचार्य प्रदान कर देते हैं तो वह महान् और पवित्र बन जाता है। विचार क्या? माता पवित्र हो और माता के पश्चात् माता पिता जब पवित्र होते हैं, आचार्यों के अनुसार बरतते रहते हैं, ब्रह्मचारी अपने में व्रता वृत्तियों में परितरण होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, आचार्य उन ब्रह्मचारियों को महान् बना देते हैं। उसके पश्चात् जब यह कर्त्तव्यवाद इस प्रकार का बन जाता है तो बेटा! एक समाज पवित्र बन जाता है। समाज में एक महानता का दर्शन होने लगता है।

आचार्य का कर्तव्य

तो मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार आज का विचार हमारा क्या कह रहा है? हम तुम्हें कहीं

और दर्शन में ले जाना चाहते थे। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र बेटा! यह कहता है हे माता! तू अपने में महान् बन करके ऊर्ध्वा की उड़ान उड़ने का प्रयास कर। हे आचार्य! तू ब्रह्मचारियों को उस आसन पर ले जा, जहाँ मानो देखो, यह अशुभ संस्कारों को अपने में न पनपा सके, विचित्र बना सके। मानो जब वह बाह्य जगत् में आता है प्रवेशिका में प्रवेश करता है, वह अपने गृह के आँगन में प्रवेश करता है, तो अपने में उद्धार और तपस्यावादी जीवन उसका बना रहे, तो यह मुनिवरों! देखो, वह मानवीय दर्शन कहलाता है। आज जब हम मानवीय दर्शन अपने में धारण करते है। मानव दर्शन किसे कहते हैं? आचार्य जब गृह में प्रवेश होता है, तो मुनिवरों! देखो, आचार्य जो गुरु है, जो मुनिवरों! देखो, संस्कार कराता है जो संस्कार में परणित करा देता है, जो संस्कार की भूमिका में लाता है, मेरे प्यारे! देखो, वह जो नियम अव्रतं ब्रह्मे वाचाः जो नियमावली बना देता है जो वस्तु धारण करना यह बेटा! उनका एक कर्त्तव्य माना जाता है।

तो विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! परम्परागतों से यह हमारे यहाँ एक मानवीय जीवन माना गया है। जब माता अपने में महान् बनती है। पितर अपने में महान बनता है और मुनिवरों! देखो, गृह में प्रवेश हो करके मानो ब्रह्मचारी को माता जन्म देती है। अभ्योदय कर देती है वही आचार्य भूमिका बेटा! उसी प्रकार बनी रहती है। तो विचार विनिमय क्या? आगे चल करके मुनिवरों! वही कौन? ब्रह्मे व्रतो ब्रह्मा जब प्रणाली जब भ्रष्ट हो जाती है तो प्रणालियों में, मेरे पुत्र ने एक समय मुझे यह वर्णन कराया कि आधुनिक काल में वो प्रणाली नहीं रही है। उस प्रणाली में परिवर्तित हो गया है। मानो देखो, पुरातन काल में जो ब्रह्मचारियों को अथवा ब्रह्मचारिणियों को जो शिक्षा प्रदान की जाती है, वह गृह से, ब्रह्मचर्य से तप करके गृह में प्रवेश हो करके, उसके पश्चात् गृह को पति पत्नी त्याग देते है। और त्याग करके उनका एक महान् तपस्वी जीवन बनता है। विद्यालयों में मुनिवरों! देखो, जितना भी वृद्ध और देखो, वह उपराम हुआ तपस्वी होगा, उतना ही ब्रह्मचारियों को ऊँचा बना सकता है। मुझे बहुत सा काल स्मरण आता रहता

है। मैं उस काल में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ।

विचार केवल यह उच्चारण करने के लिए कि वानप्रस्थ की जो प्रतिक्रियाएं हैं, दीक्षा ली जाती है वो दीक्षा ले करके मानो देखो, बुद्धिमानों से, वह स्वयं बुद्धिमान होते हैं और वह विद्यालयो में ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मचारिणी को शिक्षा प्रदान करते हैं। अपने अनुभव प्रगट करते है। अपनी विचारधारा देते हैं, दर्शनों का गुथा हुआ ज्ञान देते हैं, तो बेटा! देखो, वह महानता में परणित होता है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें एक वाक्य प्रकट किया था। ओर वह वाक् मुनिवरों! देखो, सर्वोपरि सिद्ध कहलाता है। वैज्ञानिक आभा में।

महाराजा अश्वपति का राज्य

मेरे पुत्रों! देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ ऋषि मुनियों का एक समाज एकत्रित हुआ और ऋषि मुनियों ने यह निर्णय किया कि ऊर्ध्वा में देखो, पठन पाठन का जो क्रम बनाया। एक मानो आचार्य पठन पाठन के आश्रम में प्रवेश हुआ जिनका नवीन मानो देखो, संस्कार हुआ, जब संस्कार हुआ, जब संस्कार हुआ तो उसको एक पठन पाठन का वृत था जो मानो देखो, वह तो दीक्षा ले करके जो वानप्रस्थी थे जिनका संसार के नाना वासनाओं से मानो हृदय तृप्त हो गया था, उनका मानसिक जो चलन था, वह बड़ा विचित्र रहा। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है जब ऋषि मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ। इन ऋषिओं में महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, महर्षि रेणावृत्तिका ये सब उसमें विद्यमान थे और भी नाना ऋषि थे। तो मुनिवरों! देखो, रेणावृत्तिका एक वैज्ञानिक उनके यहाँ थे। उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस यन्त्र में ये विशेषता थी कि मानव शब्दों का उच्चारण कर रहा है और वह शब्दों का चित्र बन करके चित्रावली में दृष्टिपात आ रहा है। उसका जो चयन है जो शब्द है, जो क्रियाएं हैं जो ब्रह्मचारियों को उद्गीत गाया जा रहा था मानो देखो, वह चित्र बन बन करके उन यन्त्रों में दृष्टिपात हो रहे थे। मेरे प्यारे! देखो, जब वह यन्त्रों में दृष्टिपात कराया, तो मुनिवरों! देखो, महाराजा अश्वपति से कहा ऋषि मुनियों ने कि महाराज!

जिनका संस्कार युवापन में हुआ हो, तो वह आचार्य विद्यालय में नहीं होने चाहिए। उन्होंने इसका जब विरोध किया, तो महाराजा अश्वपति ने कहा, क्या इसका प्रमाण क्या? इसका प्रमाण यह है क्या आचार्यकुल में जब आचार्य युवक होगा अथवा मानो देखो, नवीन संस्कारवादी होगा, नवीन पत्निवादी होगा, तो मानो उसकी तरंगें ब्रह्मचारियों को स्पर्श किए बिना रह नहीं सकती। ये वाक्य उन्होंने प्रकट किया। जब यह वाक् उन्होंने प्रगट किया तो मुनिवरों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आता रहा है, मुझे भी सौभाग्य प्राप्त होता रहा है, अध्यापन का। तो मानो देखो, महाराजा अश्वपति ने जब मानो इस विरोध को स्वीकार किया और इस विरोध को जाना, तो जानने के पश्चात उन्होंने ऋषि मुनियों का एक समाज एकत्रित किया। और उन्होंने यन्त्रों में, उनकी वाणी को मुनिवरों! देखो, भरण कराया, तो यन्त्रों में देखो, शब्दों का विभाजन कर रहा था। जब शब्दों का विभाजन कर रहा था तो मुनिवरों! देखो, नवीन संस्कारवादी आचार्यों का चित्र जब उसमें दृष्टिपात आने लगा तो वह उसकी तरंगें ब्रह्मचारियों को स्पर्श कर रही थी, ब्रह्मचारियों का अन्तर्हृदय था उस आचरण में प्रवेश नहीं कर सका, जो वास्तव में होना चाहिए था। मानो देखो, यही कारणादि ब्रह्मा देखो, जब इस प्रकार के आचार्य विद्यालयों में प्रवेशं ब्रह्मा, शिक्षा देते हैं तो ब्रह्मचारी जब विद्यालय से अवकाश पाता है तो वह ब्रह्मचारी जिस भूमिका में वह पनपा है, जिस भूमिका में रहा है, वह भूमिका विद्यालय से बाह्य जा करके वह भूमिका भ्रष्ट हो जाती है। जब वह भ्रष्ट हो जाती है तो वह बाल्यकाल में देखो, आचार्य के यहाँ भय से और देखो, अणुवृत्तियों से वह मानो देखो, उसी वस्त्रों में रहना, वहीं मानो देखो, चरण वन्दना करना, वह केवल चरण वन्दना स्थायी नहीं रहती। वह स्थायी उस काल में रहती है जबकि मानो देखो, निष्पक्ष होने वाले, वानप्रस्थी, पति पत्नी जब दीक्षा ले करके वह शिक्षा प्रदान करते हैं मानो देखो, वह ब्रह्मचारियों के हृदय को पवित्र बना देते है। उनकी जो भूमिका है, अथवा वेश है, भूषा है, वह स्थायी बन जाती है। चरण वन्दना उनकी स्थायी हो जाती है। तो मानो देखो, उस समय विद्यालय सफलता को प्राप्त होते हैं।

मैंने बहुत पुरातन काल में मानो निर्णय देते हुए कहा था, मेरे प्यारे! महानन्द जी ने

मुझे वर्णन कराते हुए कहा था कि आधुनिक काल में, राष्ट्र में इस प्रकार की धारा है, जब राजा के मन में ये विचार आ जाता है कि मुझे तो मानो देखो, ब्रह्मचारियों को, विद्यालय में शिक्षा अपने राष्ट्र कोष से आर्थिक स्थिति, अपठित प्राणियों को देनी है तो उस राजा का राष्ट्र राष्ट्र नहीं रहता। मानो देखो, राजा का राष्ट्र जब रहता है जब मुनिवरों! देखो, दीक्षा दिए हुए वानप्रस्थी देखो, विद्यालयों में ब्रह्मचारियों को देखो, वानप्रस्थी शिक्षा देने वाले होते हैं। और ब्रह्मचारिणीयों को, जो मेरी प्यारी माता है, जो ब्रह्मचर्य से व्रत ले करके शिक्षा में परणित हुई है, जब शिक्षा देना प्रारम्भ करती है तो उनका जो कर्म है, उनकी जो धाराएं है वह स्थायी रहती है, जो वह देते हैं वह स्थायी बनी रहती है, आज मानो देखो, मुझे एक समय मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे प्रगट कराया, कि विद्यालयों से ब्रह्मचारियों को जब अवकाश प्राप्त होता है और वह बाह्य जगत् में आते हैं तो बाह्य जगत् में आ करके वह ऐसे बन जाते हैं जैसे उद्दण्ड प्राणी होते है, तो इस प्रकार का विचार बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में प्रकट किया। महाराजा अश्वपति की चर्चा चल रही थी। महाराजा अश्वपति ने मानो देखो, उन विचारों को लिया, जिनका नवीन संस्कार हुआ है। वह केवल विलासिता के क्षेत्र में प्रवेश कर गया है, और वह ब्रह्मचारियों को शिक्षा दे रहा है। तो उसकी जो मन की प्रवृत्ति है, वह तरंगित हो करके, ब्रह्मचारियों को स्पर्श कर रही है परन्तु देखो, वह इसी प्रकार ब्रह्मे वाचा ब्रह्मा लोकां वृत्ति देवां अोर वृत्ति ब्रह्मो और ब्रह्मचारिणीयों को भी इसी प्रकार की प्रवृत्तियां बन जाती है। परन्तु देखो, वह शिक्षा लिया हुआ, वानप्रस्थी, जब शिक्षा देने लगा, तो उनके चित्र जब यन्त्रों में आए, तो मानो देखो, मग्न हो रहे है। मग्न हो करके, वो तरंगें मग्न हो रही हैं और वह हृदय में स्थायी हो करके, पुरातन जो संस्कार मानव के हृदयों में मानो देखो, परमाणुवाद में परणित हो रहे हैं। वह जागरूक हो रहे है। जब वह जागरूक होते दृष्टिपात आने लगे, तो महाराजा अश्वपति ने इस वाक् को स्वीकार किया इस वाक् को स्वीकार कर लिया कि वास्तव में हमारे यहाँ एक यह कर्मबद्ध होना चाहिए। तो मानो देखो, महाराजा अश्वपति ने सर्वत्र राष्ट्र में यह घोषणा कर दी, क्या युवकों को कोई और क्रियाकलाप दिया जाएं, क्या शिक्षा का जो विभाग है, शिक्षा की

जो प्रणाली है वह वानप्रस्थियों को प्रदान कर देनी चाहिए। मानो देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ जब यह घोषणा हुई, तो मानो देखो, राष्ट्र में वह नियमावली बन गयी। इसी प्रकार भगवान राम के राष्ट्र में भी इसी प्रकार की नियमावली बनी।

आज मैं राष्ट्रीय चर्चा में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचारधारा केवल यह प्रकट करना चाहता हूँ, कि प्रत्येक मानव को, राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना है। तो यह ऊँचा उस काल में बनता है जब राष्ट्रीय प्रणाली पवित्र बन जाए और विज्ञान अपने में अनूठा बन करके रहता है। प्रत्येक मानव विज्ञान की आभा में प्रवेश करना चाहता है। वैज्ञानिक मानवीय जीवन, का जो एक मानवीय दर्शन है, वह केवल देखो, विज्ञान की आभा में निहित हो रहा है। तो इसीलिए मेरे प्यारे! आज का हमारा यह वाक् क्या कहता है? आज का हमारा यह विचार यह कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, मानवीय दर्शन को, मानो देखो, समाज में लाना चाहते हैं और मानवीय दर्शन क्या है? मेरे प्यारे! देखो, उसका जिसका आचरण है, उसकी एक भूमिका है। उसके आन्तरिक विचारों को बाह्य जगत् में आना है। वह अवश्य आयेंगे। परन्तु वह जिसे भी स्पर्श कर जाते हैं, वह महान् बन जाता है और अशुद्ध परमाणु जिसे स्पर्श कर जाते हैं, उसका अन्तर्हृदय, अन्तरात्मा मृतक बन जाता है। तो इसी प्रकार हमें विचारधाराओं को, अपने में महान् बनाने के लिए मानो देखो, एक अपना एक कर्म बनाना चाहिए।

बुद्धिजीवी प्राणियों से राष्ट्र

हे मानव! तू राष्ट्रीयता को ऊँचा बना। हे राजन्! तू मानो देखो, अपने में महाराजा अश्वपति की भांति जो स्वयं कला कौशल करते हुए, द्रव्य को अपने में पान किया जाता है वही तो महान् बनेंगे। परन्तु देखो, जहाँ इस प्रकार की आभा में नियुक्त रह करके, वह बाह्य जगत् में पहुंचेगा, तो वह अपने मानवीय जीवन को बिखरा हुआ स्वीकार करता है। तो यह नहीं होना चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में मानो निर्णय दिया, आज भी मैं यह निर्णय दे रहा हूँ कि ऋषि मुनियों का समाज एकत्रित होता है,

और राजा को यह बाध्य करता है कि इस प्रकार के नियमों को लाने का प्रयास कर। जिससे मानो तेरा राष्ट्र पवित्र बन करके और प्रत्येक मानव कर्त्तव्य की वेदी पर आ जाए। क्योंकि देखो, यहाँ प्रत्येक परमाणु अपने में मानो देखो, भास रहा है। और इन्हीं परमाणुओं को ले करके वायुमण्डल बनता है। इन्ही परमाणुओं को ले करके गुणों का निर्माण होता है इन्हीं परमाणुओं को ले करके, राष्ट्रवाद की भूमिका का निर्माण होता है। मानो उसी से विचारधारा को ले करके ऋषि मुनि अपने में महान् बना करते है। तो विचार विनिमय क्या? आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को अपने में महान् बनने के लिए, मानव समाज को ऊँचा बनाने के लिए मानो देखो, प्रत्येक मानव को अपने में महान् बनना होगा और राष्ट्र को पुकारना होगा हे राजन्! तू इस प्रकार अपने राष्ट्र की भूमिका को बना, मानो देखो, जिससे तेरे राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी हों और बुद्धिजीवी प्राणी हो करके ही मानो तेरा राष्ट्र ऊँचा बन सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय दिया कि महाराजा अश्वपति महाराज ने अपने में यह स्वीकार किया और अपने में आश्चर्यचकित हो करके कहा। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है हमारे यहाँ भगवान् मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया था। तो मानो देखो, यह उन्होंने भूमिका बनायी कि वानप्रस्थ का जितना समाज है, गृहस्थ से जो तृप्त होने वाला है उसे त्याग देना चाहिए, क्योंकि जब राजा वानप्रस्थ ले लेता है, तो उसकी विचारधारा राष्ट्र के प्रति जाती है, तो राजा महान् बन जाता है। मुझे इस संसार को दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहता है। मैं प्रायः गौरव से यह कहा करता हूँ, हे मानव! तू अपने को महान् बनाना चाहता है तो मानो तू अपने जीवन के जो चार भाग हैं, मानो ब्रह्मचर्यवत् में तू अपने को महानता की वेदी पर ले जा। और उन्हीं विचारों से मानो तू गृह में प्रवेश होगा, गृह को ऊँचा बनाता चल और उन्ही से तू त्याग प्रवृत्ति में परणित हो करके, जब तू मानो अपने जीवन को विद्यालयों में ले जाएगा, विद्यालय पवित्र बन करके मानो देखो, ब्रह्मचर्य की आभा में यह समाज परणित हो जाएगा। उसके पश्चात् वही मानव अपने में मानो देखो, संन्यस्थ को प्राप्त हो जाता

है।

मेरे प्यारे! यह चर्चाएं तो मैं तुम्हें कल ही प्रकट करूंगा, एक एक भूमिका का वर्णन करता रहूँगा। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मानो हमें अपनी जो परम्पराएं हैं, ऋषि मुनियों का जो एक विचार है, वह आज हमने तुम्हें प्रकट किया है। मानो देखो, यह चर्चाए, मैं मानो देखो, ब्रह्मचर्य और इन चर्चाओं को तो मैं प्रायः करता रहता हूँ। कल कुछ संन्यास की चर्चाएं और विज्ञान के वाङ्मय में प्रवेश हो सकेंगे। आज का विचार विनिमय क्या? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, आज मैं बेटा! माता का कर्त्तव्य प्रायः निहित करता रहता हूँ और आचार्यों के कर्त्तव्यवाद में जब परणित होता हूँ, तो अपने में महानता की वेदी पर अपने को ले जाता हूँ तो मुझे वह अतीत के काल मुझे स्मरण आते रहते हैं।

तो बेटा! आज का विचार विनिमय क्या है? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। हम परमपिता परमात्मा को महान् विज्ञानवेत्ता जो विज्ञानमयी स्वरूप कहा जाता है, उस देव की हम प्रार्थना करके बेटा! इस संसार सागर से हम पार हो जाएं। यह है आज का वाक्। कल मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें, आज का वाक् समाप्त होने जा रहा है, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए हे माता! तू अपने में तपस्वी बन करके तू अपने ब्रह्मचारी को ऊँचा बना। तेरा कर्त्तव्य पूर्ण हो जाए। गृह में वास करने वाले, गृह स्वामी स्वामिनी! तू अपने को महान् बना। हे वानप्रस्थ में जाने वाले! दीक्षा ले करके अपने विचारों को अपने अनुभव को विचारणीय बनाता है तो यह समाज पवित्र बन जाता है। यह ऋषि मुनियों की निश्चित की हुई शिक्षा पद्धति है। मैं शिक्षा पद्धति की चर्चाएं कल ही प्रकट करूंगा।

आज का वाक् मुनिवरों! समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का

गुणगान गाते हुए हम इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक्। अब शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। दिनांक 10 03 1986।

१६ 11 03 1986 पुष्प 51 राष्ट्र का निर्माण विद्यालयों में होता है

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनुपम है। जितना भी ये जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। आज हम, जब हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा को, मानवीय दर्शन में दृष्टिपात करते हैं, तो प्रायः हमारा हृदय ये पुकारने लगता है कि ये परमपिता परमात्मा की एक अनुपमता है। मानो उसकी एक आभा है। उसका एक मानवीय अत्रो वर्णित कहलाया जाता है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, नाना प्रकार को उड़ानें उड़ता रहा है। जिस भी काल में, ऋषि मुनि विद्यमान हो करके और अपने में विचार विनिमय करना उन्होंने करना प्रारम्भ किया तो उनका विचार एक अनूठा बन करके रहा है। उन विचारों को मानो देखो, राष्ट्रीयवाद में और वैज्ञानिकों ने, उन्हीं विचारों को ले करके अपने जीवन की प्रतिभा अथवा अपने मानवीय जीवन का एक कर्म बनाया, जो मैंने बहुत पुरातन काल में, निर्णय देते हुए तुम्हें कहा था।

राष्ट्रवाद का निर्माण

आज भी मुझे वह वाक्य स्मरण आते रहते हैं, इससे पूर्वकाल में बेटा! हम यह उच्चारण कर रहे थे, कि हमारे ऋषि मुनियों ने, विद्यमान हो करके, एक मानवीय चिन्तन किया, और उन चिन्तन वेत्ताओं ने मानो कहीं वेदों में, वेद के मन्त्रों में मानो कुछ ज्ञान और विज्ञान और वही मानव के विचारों में उद्बुद्ध हो करके आता रहता है। परन्तु इसी प्रकार

वही विचार, ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में, एक आत्मीय आभा में नियुक्त होता रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में पुत्र! तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, कि हमारा जो जीवन है, हमारे मानव जीवन की जो रचना है, मानो उसमें सबसे ऊर्ध्वा में जो स्रोत्र है वह प्यारा प्रभु कहा जाता है। परन्तु यदि हम यह विचारते हैं कि राष्ट्रीयवाद ही इसका दायित्व माना गया है मानो ये विचार मेरे में समाहित नहीं हो रहा है। क्योंकि राष्ट्रवाद की रचना तो उस काल में होती है, जबकि मानव समाज में उद्दण्डता का प्रति स्रोत हो जाता है अथवा उद्दण्डता उत्पन्न हो जाती है उस समय राष्ट्रवाद की उत्पत्ति हुआ करती है। भगवान् मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया तो उन्होंने मुनिवरों! देखो, नाना ऋषिवरों का एक समूह और गोष्ठियां होती रहती थीं। उन गोष्ठियों में यह प्रश्न किया गया कि हम अपने राष्ट्र की भूमिका और मानो देखो, निर्माण व्रतं ब्रह्मा हम अपने राष्ट्र में एक क्रियाकलाप बनाना चाहते हैं वह हमारा कैसा होना चाहिए?

ऋषियों की राष्ट्र की चर्चाएं

तो उन्होंने मुनिवरों! देखो, मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि ऋषि मुनि जब विधान को निर्माणित करने लगे, धारयामी बनाने लगे और यह विचार आने लगा कि राष्ट्रवाद का निर्माण करना है और राष्ट्र किसे कहते हैं? ये भगवान् मनु से यह प्रश्न किया गया, महर्षि सोमवृत्तिका मुनि ने ये प्रश्न किया कि महाराज! तुम राष्ट्रवाद कहते हो, राष्ट्रवाद कहते किसे हैं? मेरे प्यारे! उन्होंने वेद की पोथी और वह वेद के मन्त्रों को उद्बुद्ध करने लगे और वेद में राष्ट्रवाद की चर्चा आयी। तो भगवान् मनु से प्रश्न किया गया क्या यह राष्ट्रवाद की ही तुम्हारे हृदय में प्रेरणा क्यों उत्पन्न हुई?

तो भगवान् मनु ने यह कहा कि प्रजा को मैं एक सुचारू रूप से जीवन देना चाहता हूँ। मेरे हृदय में एक विचार आ रहा है, मैंने वेदों का अध्ययन किया है। दर्शन शास्त्र को अपने में मैंने विचार विनिमय किया है। परन्तु मेरे हृदय में यह वाक्य आता रहता है कि मैं एक समाज के विचारों को ऊँचे क्रिया कलापों को विभक्त करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, उस समय सोमवृत्तिका ने कहा कि हे भगवन्! आप ऐसा क्यों चाहते हैं?

मेरे विचारों में यह नहीं आ रहा है कि आपके विचारों में यह भाव क्यों उत्पन्न हो रहा है कि मैं समाज को विभक्त करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा सोमवृत्तिका ने यह कहा हे मनु! आज इस भूमिका को तुम रचाने जा रहे हो। मानो यह अन्तिम चरण में, इस प्रकार की भूमिका बन जाएगी कि मानव, मानव के रक्त का पिपासी बन जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, ये वाक् महात्मा सोमवृत्तिका ने भगवान मनु से कहा। तो भगवान मनु ने कहा नही भगवन! मेरा विचार कहता है तो उन्होंने अपनी लेखनियां बद्ध की। उन्होंने कहा प्रभु! मेरा विचार यह है कि यह जो बुद्धिमान समाज है इसको ब्राह्मणत्व में परणित किया जाए, और मानो देखो, सबसे प्रथम माता को स्थान दिया जाए। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा क्या कोई स्थली अब तक ऐसी प्राप्त नहीं हुई है, जहाँ माता का अस्तित्व न हो। क्योंकि जिस स्थलियों में निर्माण हुआ करता है उनका तो अस्तित्व सदैव ऊँचा बना ही रहता है। परन्तु रहा यह वाक् कि उसमें ज्ञान और अज्ञान की सूक्ष्मता होती रहती है।

तो मुनिवरों! देखो, जब भगवान मनु से यह वाक्य कहा गया तो भगवान् मनु ने मंगलम ब्रह्मे वाचो सम्भवा वेद की आख्यिका को प्रगट करते हुए कहा भगवन्! माता ही मानो देखो, जननी कहलाती है। मेरे राष्ट्र में मैंने वेदों में कुछ सूक्तों की रचना की है और उनको निकासा है। मेरा हृदय यह कहता कि माता जैसे परम्परागतों से अध्ययनशील रही है, उनका अध्ययन बड़ा विचित्र होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि व्रासकेतु मुनि महाराज ने भी मानो देखो, गृह सूत्रों का निर्माण किया था। गृह सूत्रों का निर्माण मानो करोड़ों वर्षों पूर्व इनकी रचनाएं हुई और यह कहा गया कि विद्यालयों में, ब्रह्मचारी का अध्ययन होना चाहिए। मानो देखो, माताए, कन्याएं अपनी स्थलियों पर जब अध्ययन करना प्रारम्भ करती हैं, गृह सूत्रों का, तो गृह सूत्रों में उन्हें ब्रह्माण्ड और पिण्ड की रचना का ज्ञान कराया जाता है। पिण्ड क्या है? और ब्रह्माण्ड क्या है?

माताओं की शिक्षा

मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम माताओं को मेरी पुत्रियों को यह निर्णय कराया जाए। आज

देखो, मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे कई काल में राष्ट्रवाद की चर्चाएं की हैं परन्तु मैं उस राष्ट्रवाद की चर्चाओं में न जाता हुआ यह कहता रहता हूँ कि सबसे प्रथम यह राष्ट्रवाद नहीं होना चाहिए। सबसे प्रथम मेरी पुत्रियों को, मेरी कन्याओं को विद्यालय में, गृह सूत्रों का ज्ञान कराया जाना चाहिए। मानो देखो, उन्हें पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान कराया जाए। आचार्यों का यह कर्त्तव्य है मानो देखो, मेरी आचारणं ब्रह्मे व्रतां देवाः जो वेद के मर्म को जानने वाले होते हैं उन्हें यह ज्ञान होता है, मेरी पुत्रियों को इस प्रकार का ज्ञान और विज्ञान और ब्रह्मचारियों को भी विद्यालय में इस प्रकार का ज्ञान होना चाहिए। मानो देखो, उसमें आयुर्वेद भी आता है और उसमें ज्ञान और विज्ञान भी है। उसमें मानो देखो, वेदों के अभ्योदय होने वाला जीवन है। जब मैं ये विचारता रहता हूँ, क्योंकि मुझे स्मरण है, मैंने इसी मनु के विचारों को, महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में मानो इनका बड़ा अध्ययन किया और अध्ययन कराने से मानो जब आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, ब्रह्मचारिणी अपना अध्ययन कर रही है और अध्ययन करती हुई उन्हें मानो देखो, आचार्य पिण्ड और ब्रह्माण्ड की चर्चा कर रहा है कि पिण्ड क्या है और ब्रह्माण्ड क्या है?

मेरे प्यारे! देखो, इसी वाक् को लेकर के हमारे यहाँ पूर्व काल में जो उपनिषद, वेद का पठन पाठन करने वाले हैं, उनमें यह वार्त्ता आती रहती है। हमारे यहाँ एक एक वेदमन्त्र को ले करके इसकी विवेचना होती रही और यह वर्णन कराया। क्या कन्याओं को देखो, पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना हमारे यहाँ देखो, जब कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष की रचना हुई। मानो देखो, रचना क्या है? उसमें देखो, कि इसी शुक्ल पक्ष में और कृष्ण पक्ष में मानव का, समाज का जीवन व्यतीत होता रहा है।

शुक्ल और कृष्ण पक्ष का स्वरूप

मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में वर्णन कराया कि शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष क्या है, यह वाक् मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय दिया कृष्ण पक्ष कहते हैं अन्धकार को और मुनिवरों! देखो, शुक्ल पक्ष कहते हैं प्रकाश को। तो इसीलिए बाह्य जगत् मानो

देखो, चन्द्रमा से और सूर्य से इसका समन्वय होता है। परन्तु जब हम आध्यात्मिकवाद में या अपने मानवीय दर्शन में जाते हैं तो मानव दर्शन में कृष्णा पक्ष नाम अन्धकार को माना है, अज्ञान को माना है। अज्ञानी मानव ही मानो कृष्णा पक्ष में परणित होता है। कृष्णा पक्ष किसे कहते हैं? एक समय बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है, हमारे यहाँ देखो, एक श्वेणकेतु कान्ता नामक विदुषी थी महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में। वह मानो इस प्रकार की विवेचना करती रहती थी। कान्ता से कहा गया हे कान्ता! हम यह जानना चाहते है क्या मानव के जीवन का कृष्णा पक्ष और शुक्ल पक्ष से क्या समन्वय है? तो मुनिवरों! देखो, कान्ता ने कहा विद्यालय में ब्रह्मचारिणीयों के मध्य में विद्यमान हो करके कहा कि कृष्णा पक्ष कहते हैं मानव में जहां प्रमाद होता है, जहाँ मानव में आलस्य होता है, जहाँ मानव में तमोगुण छाया रहता है उस काल को या उस अवस्था का नाम हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, कृष्णा पक्ष कहा जाता है। वही कृष्णा पक्ष है जिसमें मानव सदैव रत्त रहता है। परन्तु यही वाक् लेकर के जब उनसे कहा कि शुक्ल पक्ष क्या है? उन्होंने कहा कि शुक्ल पक्ष में आलस्य रहित जो प्राणी होता है, ज्ञान की उड़ान उड़ने वाला होता है, प्रत्येक वस्तु में ज्ञान का दर्शन करता है, मानवीय दर्शन करता है तो मानो देखो, वह उसके लिए शुक्ल पक्ष कहलाता है। जब कान्ता ने इस प्रकार का उपदेश दिया, तो उन्होंने एक वाक् और कहा कि मानो देखो, प्रत्येक पक्ष में पन्द्रह दिवस के जो पक्ष हैं इन पक्षों में अपना अपना महत्व माना गया है। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, बेटा! हमने भी यह अध्ययन किया कि हमारे यहां जब मेरी पुत्रियां जब मानो देखो, रजो अप्रो से परणित होती हैं। तो मानो देखो, तीन रात्रियां हमारे यहाँ मानो देखो, कृष्णा पक्षों की कही जाती हैं। मानो इस विद्या का अध्ययन कराने वाले जब आचार्यजन होते हैं तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारियों को भी ब्रह्मचारिणीयों को भी बेटा! देखो, गृह आश्रम में आने से स्वर्ग की स्थापना हो जाती है। तो मानो देखो, जब कन्याओं को यह उपदेश दिया जाता है, क्या तुम्हें सन्तान को आगे जन्म देना है। मानो जन्म देने वाला तो महा प्रभु कहा जाता है और परन्तु माता केवल जब अपने में गृह सूत्रों का पठन पाठन करती है तो मानो उनके विचार बड़े भव्य और पवित्र बने रहते हैं

इन्हीं पवित्र विचारों से मानो देखो, सन्तानों को जन्म देती रहती है। ऐसा मुझे स्मरण है एक वेदमन्त्र यह कहता है ममं ब्रह्मा आत्मा रथं ब्रह्मे आत्मां प्रसवं ब्रह्मे माता प्रव्हे लोकां मेरे प्यारे! देखो, वह माता का शुक्ल पक्ष कहलाता है जब माता अपने गर्भ के, आत्मा से चर्चा वार्त्ता प्रकट करती है। मेरे प्यारे! देखो, कान्ता ने यह उपदेश दिया। क्या मानो उस समय देखो, जब मौन हो करके, शान्त हो करके, जब अपने गर्भ में होने वाला बाल्य होता है उससे अन्तर्मुखी हो करके, वह मानो देखो, अपने में चर्चा करती है और वह कहती है हे आत्मा! मानो देखो, तू जो इस शरीर में आया है, तेरी जो प्रवृत्तियां हैं, वह बिखरने वाली हैं, कुछ प्रवृत्ति मुनिवरों! देखो, नेत्रों से बिखरी रहती है, कुछ प्रवृत्ति मानव की वाणी से बिखरती रहती है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, श्रोत्रों से प्रवृत्ति, त्वचा से प्रवृत्तियों का मानो देखो, छिन्न हो जाती हैं वह जब छिन्न हो जाती है हे आत्मा! तू इस पिण्ड वाले शरीर में आने का उद्देश्य क्या है? मेरे प्यारे! देखो, वह आत्मा, जो माता के गर्भस्थल में विद्यमान है, वह आत्मा माता की आत्मा से, माता के उन विचारों से, मानो अपने विचार, उद्गम् प्रगट करती रहती है।

गर्भस्थ शिशु से वार्ता

मेरे प्यारे! देखो, मैं आज बड़े आश्चर्य की वार्त्ता तुम्हें प्रकट करा रहा हूँ। परन्तु मेरे प्यारे! देखो, माता अध्ययन करती है और वह अध्ययन करती हुई दर्शनों का मानो दर्शनों का अभ्यस्त हो करके ओर वह कहती है हे आत्मा! तू मुझे कोई उत्तर नहीं दे रही है। मैं तुझे उत्तर देना चाहती हूँ। तूने मेरे गर्भ से जन्म लेना है। मेरे गर्भाशय को तुझे दूषित नहीं करना होगा। जब तू बाह्य जगत् में आएगा, तो मानो तेरा ज्ञान विज्ञान इतना विशाल होना चाहिए जिससे मेरा नामोकरण ऊर्ध्वा में परणित होता रहे। तो यह गृह सूत्रों की मानो एक विचित्र ज्ञान की धारा है जो मुनिवरों! देखो, कान्ता महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में अपना उपदेश देती रहती थी, विद्यालयों में अपने विचार देती रहती थी और उन्हीं विचारों को लेकर के बेटा! उनका राष्ट्र, उनका महान वह समाज पवित्र

बनने लगा।

तो विचार क्या मुनिवरों! यह कर्म उन्होंने किया। उसके पश्चात् लोरियों का पान कराना है। लोरियों का पान कराती माता का शुद्ध हृदय होना चाहिए। आहार पवित्र होना चाहिए। वेद के ऋषियों ने तो बेटा! यह कहा है एक समय त्रेता के काल में महाराजा पिप्लाद वाचकेतु मुनि की पत्नी ने वैद्यराज सुधन्वा से एक समय यह कहा कि महाराज! मैं कौन सा आहार प्राप्त कर सकती हूँ। उन्होंने बेटा! औषधियों का वर्णय किया और कहा कि अमुक समय में यह औषधियों का पान करना चाहिए। मानो देखो, अमुक समय में इस प्रकार के विचारों से मानो अमुक दिवस, मानो इस प्रकार की औषध को पृथ्वी से लिया जाए उसको पान किया जाए तो मानो देखो, ये विचार तुम्हारे हृदय में परणित हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, यह आयुर्वेदा आचार्यों का कथन है। आज मैं आचार्य कुल में नहीं जाना चाहता हूँ। विचार केवल देना चाहता हूँ कि मेरे प्यारे! देखो, माता शुद्ध और पवित्र हृदय से पांच वर्ष तक बालक को ब्रह्मवेत्ता बनाने की शिक्षा दे देती है। राष्ट्रवाद की शिक्षा दे देती है। इसी प्रकार वह पितरों के युग में प्रवेश करता है।

आचार्य की परमात्मा से वार्ता

मेरे प्यारे! देखो, जब पितर अपने जीवन की प्रतिभा का वर्णन कराता है तो वह आचार्यकुल में प्रवेश कर दिया जाता है। आचार्य कैसा हो? वेद का ऋषि कहता है कि आचार्य कैसा हो? वेद का मन्त्र कहता है आचार्य वर्णं प्रव्हा वाचन्नमं ब्रह्मे जो मानो देखो, जो ब्रह्मचारी हो, आचार्य ब्रह्मवेत्ता हो। जो ब्रह्म की मानो देखो, प्रतिभा को जानने वाला हो, और आचार्य मानो देखो, मुनिवरों! देखो, तीसरा गुण जो आचार्य परमात्मा से वार्त्ता प्रकट करता हो। मानो देखो, यह बड़ा विचित्र वाक्य है कि आचार्य देखो, परमात्मा से कैसे वार्त्ता प्रकट करता है? आचार्य वह पवित्र होता है जो परमात्मा से वार्त्ता प्रकट करता है जो सांयकाल को, प्रातःकालीन (पुस्तक से) कहता है हे प्रभु! मैं आपकी शरण में आया हूँ। आपने मुझे यह कर्त्तव्य दिया है बाल्य, मेरे आश्रम में विद्या का अध्ययन

कर रहे हैं और अध्यापन का कार्य मेरा क्रियाकलाप बन गया है। आचार्य जब इस प्रकार प्रभु से अपनी वार्त्ता प्रकट करता है। वेदमन्त्र के कथन में अपनी विवेचना करने लगते हैं तो वह (शब्द ध्वनि से) आचार्य तीन प्रकार की विद्या को प्रदान करता है। सबसे प्रथम जो विद्या है उसका नाम है ब्रह्मज्ञान। ब्रह्म कैसा है? और हमारी इन्द्रियों में कैसे समाहित रहता है। द्वितीय वह ज्ञान कराता है कि तुम्हारा व्यवहार पवित्र होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, व्यवहार को कुशलता में लाता है और तीसरा उसें वेद का विज्ञान होना चाहिए। बेटा! वेद का जो विज्ञान है, वह एक महान है, वेद का जो विज्ञान है, वह मानव को एक महानता का दर्शन कराता है।

वेद का भाष्य

मेरे पुत्रों! देखो, वेद का भाष्यकार भी वही होता है, जो व्यवहार को जानता है, जो यौगिकवाद को जानता है और विज्ञान को जानता है बेटा! वही वेद का भाष्य कर सकता है। अन्यथा देखो, वेद की जो चहुमुखी जो विद्या है इसका जो अध्ययन करने वाला हो, वही बेटा! देखो, वेद की प्रतिभा को ऊँचा बनाता रहता है।

पूज्य स्थली वेद

मैंने वेद के सम्बन्ध में, बहुत सी चर्चाएं की है। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे कई काल में यह वर्णन कराया कि महाभारत काल का जो समय व्यतीत हो गया, उसके पश्चात् का, जो काल है वह मानो देखो, रूढ़िवाद में परिणत हो गया। हिंसक प्राणियों ने वेद की प्रतिभा को नष्ट कर दिया। परन्तु यह मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे एक समय यह प्रकट कराया था, मैं आज उनके प्रश्नों का उत्तर यह देना चाहता हूँ क्या मानो इनका जो वाक्य था, वह बड़ा प्रिय रहा है, मैं इसका उत्तर इन रूपों में दे सकता हूँ, क्या मानो देखो, यौगिक नही रहे, यौगिक व्यवहार और विज्ञान जब नहीं रहता है, जब विज्ञान को वेद में से मानो दूरी कर देते हैं, केवल अपने उदर की पूर्ति का एक साधन बना लेते हैं, तो वेद की प्रतिभा को अपने से दूरी कर देते हैं। ये वेद हमारा पूज्य स्थली है और पूज्य में क्या क्या वार्त्ता आती हैं मानो देखो, व्यवहार, जिसका

पवित्र होता है वह पूज्य होता है और जिसके द्वारा विज्ञान होता है, वह पूज्य होता है और जिसके द्वारा यौगिकवाद होता है वह मानो देखो, प्राण और मन को जब एकाग्र करके मानो देखो, वह अपनी हृदय स्थली में, वेद के मन्त्र को चिन्तन में लाता है, श्वास की, तरंगों में, उसे गणित करने लगता है। वेद का वह योगी अर्थ करने में वह सफलता को प्राप्त होता है। मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता रहा हूँ, बेटा! वह काल मुझे स्मरण है और लाखों करोड़ों वर्ष व्यतीत हो गए मुनिवरों! जब ऋषि मुनि यौगिकवाद में प्रवेश करते थे। और यौगिकवाद किसे कहते हैं? जहाँ मानव का दर्शन होता है, जहाँ आत्मा का विज्ञान मानव के समीप उभर करके आता है वही मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद कहलाता है। भौतिक विज्ञान की सीमा समाप्त हो जाती है।

आत्मा का गृह

तो विचार विनिमय क्या, कि यौगिकवाद जिसके समीप होता है मानो देखो, एक वाक्य आया है कि जब सदनम् ब्रह्मे वर्णो स्वस्ता मानो देखो, सबने वर्णाव स्थिति की विवेचना हमारे समीप आती है तो विचार आता है कि सदन तो गृह को कहते हैं। अब मेरे प्यारे! देखो, गृह के सम्बन्ध में, भिन्न भिन्न प्रकार की विचारधाराएं हैं। व्यवहार में बाह्य जगत में मानो सदन कहते हैं जो गृह है, उस गृह का नाम सदन है। इस वाक्य को ले करके जब उसमें विज्ञान आता है तो उस विज्ञान में एक परमाणुवादी सदन आता है। क्योंकि जिस गृह में हम वास कर रहे हैं उस गृह में परमाणुवाद गति कर रहा है। उस गृह में अणुवाद गति कर रहा है। वह श्वास के साथ में मानो शरीरों में प्रवाह गति कर रहा है। उन्हीं परमाणुओं को ले करके मुनिवरों! देखो, वैज्ञानिक अपने गृह में चित्रों का दर्शन कर रहा है। तो वह विज्ञान बन गया और विज्ञान की आभा बन करके रहती है। मेरे प्यारे! देखो, उसी में यौगिकवाद बनेगा क्या, उसमें आत्मा से जो तरंगे उत्पन्न हो रही हैं प्रत्येक मानव के जो गृह हैं ब्रह्मा सदनम् मेरे प्यारे! देखो, वह व्यवहार में गृह बन गया, बाह्य जगत् में। विज्ञान में वह परमाणुओं की स्थली बन गई और मुनिवरों!

देखो, आध्यात्मिकवाद में यह बाह्य जो गृह है मानो ये न होने के तुल्य बन करके आत्मा का जो गृह है यह हमारा मानव शरीर माना गया है। यह आत्मा का गृह बन गया और इस गृह में आत्मा कैसे वास कर रहा है?

यौगिकवाद

मेरे प्यारे! देखो, हृदय में नाना प्रकार की तरंगों की, तन्तुओं की धारा प्रारम्भ हुआ करती हैं। नाना प्रकार के जो तन्तु है, वह हृदय से उत्पन्न होते हैं। मानो देखो, आत्मा सूर्य का प्रतीक कहलाता है। वह मानो परमाणुओं के चित्रों का विभाजन करता रहता ये जो सदन है हमारा जो मानव शरीर है, यह प्रकृति के, पञ्च महाभूतों का समूह माना गया है। और हम इस पञ्च महाभूत समूह में, मेरे प्यारे! देखो, आत्मा विद्यमान है वह सदन बनाए हुए है। वह पञ्च महाभूत तो आत्मा का सदन कहलाता है। वही तो आत्मा का गृह माना गया है। मेरे प्यारे! उन्हीं के आधार पर जब प्रभु ने मानव शरीर की रचना की तो पांच ज्ञानेन्द्रियों की रचना की है और इनके साथ में पांच प्राणों की रचना की है और वह जो पांचों प्राणों से इन्द्रियों का समन्वय है, मेरे पुत्रों! देखो, वह सदन में से पञ्च द्वार हैं। और उस सदन से और पांचों द्वारो से तरंगों का प्रादुर्भाव होता है। बेटा! यौगिकवाद कहते है कि उन तरंगों को विशुद्ध रूप देना। उन तरंगों को दूषितपना ना देना, मानो उनको नियन्त्रण में लाने का नाम यौगिकवाद कहलाता है।

वेद की आभा

मेरे पुत्रों! देखो, वही यौगिकवाद वेद की आभा को परणित करता है। यह मानव की विवेचना मुझे कोई प्रिय नहीं लग रही है कि आज मैं यह उच्चारण करने लगूं मानो देखो, वेद भिन्न भिन्न रूपों में, भिन्न भिन्न आश्रमों का एक एक वेद हैं वेद तो ज्ञान कह रहा है। वेद व्यवहार कह रहा है, वेद मेरे पुत्रों! देखो, यौगिकवाद की व्याख्या कर रहा है। ये वेद की प्रतिभा कहलाती है जितना भी ज्ञान और विज्ञान है वह वेद के मानो

देखो, माध्यम से प्रारम्भ होता है।

वेद की तीन तरङ्गे

मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने पुरातन काल में यह वर्णन कराया था कि मध्यकाल इस प्रकार का हुआ, उसमें वेद केवल पूजा की स्थली माने गए, और देखो, उसमें ब्राह्मण समाज ने, बुद्धिमानों ने पूजा की स्थलियों को उच्चारण किया कि ऐसा नहीं, मैं इसका खण्डन नहीं कर रहा हूँ। मैं इसका मण्डन करता हूँ कि वेद प्रकाश है और प्रकाश पूजा का स्रोत्र है परन्तु उस प्रकाश में तीन प्रकार की तरंगों का प्रादुर्भाव होता है और वह तीन प्रकार की तरंगें क्या हैं, व्यवहार है, विज्ञान है और यौगिकवाद कहलाता है। ये तीन प्रकार की तरंगें मानो वेद रूपी प्रकाश से उत्पन्न होती हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब मेरी प्यारी माता वेद का अध्ययन करती है और गृह सूत्रों का पठन पाठन करती हैं, तो वह सन्तान को ऊँचा बनाती हैं। व्यवहार में ऊँचा बना देती हैं। ब्रह्मवेत्ता बना देती हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मैंने इस काल को बहुत, जब मैं माता की लोरियों का पान करता था बेटा! वह काल भी मुझे स्मरण है, माता का नामोकरण उच्चारण करते ही शृङ्गेरी माता, मुझे भयंकर वनों में यह कहा करती थी हे बाल्य! यह मानो देखो, प्रकृति है। इस प्रकृति में दर्शनों का तुम्हें अध्ययन करना है। मानो इसमें मानव दर्शन का अध्ययन करते हुए इसमें विचित्रतता को लाना है। तो मुनिवरों! विचार यह कि वेद का यदि प्रकाश लाना है, वेद के ज्ञान को लाना है और रूढ़िवादी को समाप्त करना है तो मानो देखो, माताओं को गम्भीर अध्ययन कराना होगा और वह अध्ययन मुनिवरों! देखो, वानप्रस्थी जन जैसा मैंने पूर्वकाल में वर्णन किया है, वानप्रस्थ जब गृह आश्रम, से माता पिता उपराम हो जाते हैं और ज्ञान को अपने अनुभवों को ले करके विद्यालयों में पठन पाठन कराते हैं। मानो देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ इस प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण हुआ, वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण करते थे उन्होंने मानो इस प्रकार की धाराओं का वर्णन किया। मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान इस प्रकार का भी नही, पुरातन काल

में राष्ट्रीय विज्ञानवेत्ताओं ने और भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने अपना अपना वर्णन किया है। जब मानो देखो, इस प्रकार आभा में नियुक्त होने वाला प्राणी मात्र अपने में प्राणी अप्रतं मानो दर्शन करता है तो बेटा! देखो, यह मानवीय दर्शन अपने में महान् और प्रकाशमयी बन करके रहता है। आज मैं इस विचारों को इसलिए दे रहा हूँ कि महाराजा! अश्वपति के यहाँ विज्ञान अपने में अनूठा माना गया है। विज्ञान की अपनी अपनी धाराएं हैं।

तरङ्गों का प्रभाव

एक समय बेटा! देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ गाड़ीवान रेवक मुनि आए और गाड़ीवान रेवक ने कहा कि प्रभु! मैं आपके यहाँ विद्यालयों में भ्रमण करना चाहता हूँ, तो वह विद्यालयों में जब भ्रमण करने के लिए पहुंचे तो वहाँ उनकी धाराएं बड़े विशुद्ध रूपों से वर्णन हो रही थी। तो मानो देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज, एक सौ पांच वर्ष तक गाड़ी के नीचे वे तपस्या करते रहे। गायत्री का जपन करते रहे। अनुष्ठान करते रहे। प्राणायाम करते रहे। तो मानो देखो, उस समय जब वह महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में आए तो देखो, एक कन्या विद्यालय में प्रवेश किया, जहाँ कन्याएं अध्ययन कर रही थीं। मेरे प्यारे! देखो, वानप्रस्थ शिक्षा लेने वाली देवियां उन्हें अध्ययन करा रही थीं, तो अपने में जब एक अध्यापन का आचार्य क्रियाकलाप कर रही थीं। उनके समीप आए तो गाड़ीवान रेवक मुनि ने कुछ चर्चाएं की। जब चर्चा की तो मानो देखो, चर्चा करते वह ब्रह्मवाचो ब्रह्मा व्रताः मुनिवरों! देखो, गाड़ीवान ने जब चर्चाएं कीं तो मानो देखो, उसकी जो विचारधारा थी, जो अध्यापन का कार्य कर रही थी, आचार्यजन थी मानो उसके हृदय की तरंगें गाड़ीवान रेवक मुनि के हृदय में प्रवेश कर गयीं। जब हृदय में प्रवेश कर गईं, तो प्रवेश होते हुए मानो देखो, वे तपस्वी थे, एक क्षण समय, एक वेद की आभा को ले करके मौन हो गए और जब मौन हो गएं तो वह तरंगे कौन सी थी? मानो देखो, उसके हृदय में यह विचार आया कि यदि मुझे ऐसे ऋषि गृह आश्रम में प्रवेश हो जाते, तो मैं एक मानो देखो, तपस्वी बालक को जन्म दे देती। ये तरंगें

उसके हृदय में समाहित हुई।

मुनिवरों! महाराजा अश्वपति ने, जब विद्यालय का अध्ययन कराया, तो गाड़ीवान रेवक मुनि से कहा, कहो भगवन्! आपको यह मेरा विद्यालय कैसा प्रतीत हुआ? उन्होंने कहा तुम्हारा विद्यालय बहुत ही पवित्र है, परन्तु यह जो अध्यापन का कार्य करा रहा है आचार्य, जो देवी है, उसका नाम शकुन्तकानी था यह शकुन्तकानी जो देवी है, यह इस योग्य नहीं है इन ब्रह्मचारिणीयों को यह सफलता को प्राप्त करा सके। मेरे प्यारे! आश्चर्य में बोले, क्या महाराज! मैं तो मनु सिद्धान्त का अध्ययन करता रहता हूँ। उन्होंने कहा इसके हृदय में यह विचार आया। जब यह वार्त्ता प्रकट कर रही थी, मैंने अपने हृदय में तपस्या के बल से वह दृष्टिपात किया। तो मानो देखो, उसका आकार बन करके, मेरे हृदय में समाहित हो गए। और यह इनके विचारों में जो इस प्रकार की तरंगों का प्रादुर्भाव होता है, तो जिन कन्याओं को यह विद्या अध्ययन कराएगी, यह परमाणु उनके हृदयों में समाहित हो जाएंगे। मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक्य महाराजा अश्वपति ने श्रवण किया तो उस विदुषी को निमन्त्रण दे करके कहा तुम्हारे हृदय में यह विचार आए। उन्होंने कहा प्रभु! ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो गई और ऋषि से कहा, प्रभु! मेरा प्रायश्चित क्या होगा? उन्होंने कहा सामवेद का अध्ययन करो। सामगान का अध्ययन करो। और अध्ययन करके तुम देखो, लगभग छह माह तक अनुष्ठान करो। जब इन तरंगों का मानो तुम्हारा प्रायश्चित हो सकता हैं मेरे प्यारे! देखो, उसने इसी प्रकार अनुष्ठान किया।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार विनिमय क्या है? यह शिक्षा की जो तरंगें हैं यह बड़ा सूक्ष्मतम रहस्य माना है। विचार है जो बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में इस अध्ययन की प्रणाली को बहुत अध्ययन किया है। मैं इसको वर्णन करता रहूँ, तो वर्षो समाप्त हो जाएंगे। मैं इस ज्ञान में जाना नही चाहता हूँ यह बड़ा सूक्ष्म ज्ञान है मेरे पुत्र महानन्द जी यह कहते रहते हैं कि आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, शिक्षा का माध्यम है, वह बहुत दूरी जा रही है। मैं यह कहा करता हूँ कि कन्याओं को गृह सूत्र दें और आयुर्वेद का अध्ययन करायें इसके साथ में, तो राजा का राष्ट्र पवित्र बन सकता है। समाज की

प्रणालियां पवित्र बन सकती है। संसार में राष्ट्र की आवश्यकता नहीं है। मानव को कर्त्तव्यवादी बनने की आवश्यकता है और यदि देखो, कर्त्तव्यवादी मानव बन जाता है, एक दूसरे का सहायक बन जाता है तो यह जो राष्ट्रवाद है, एक दूसरे के विचारों को नष्ट कर रहा है, जो अपनी स्वार्थवाद की परता में समाज को मूर्ख बना रहा है, देखो, अपठित बना रहा है। ऐसे राष्ट्र की आवश्यकता नहीं रहती।

तो विचार क्या, कि राष्ट्रवाद तो अनुशासन है। अनुशासन में रहना अपनी प्रवृत्तियों में जब मानव जब अपनी इन्द्रियों को अनुशासन कर लेता है अनुक्रमणिका बना लेता है अपने आहार को पवित्र बना लेता है, तो वह उसका राष्ट्र मानो देखो, महान सजातीय बन जाता है। मैंने मानो देखो, यह वर्णन करते हुए बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करता रहा हूँ। उस अध्ययन की जो प्रणाली है वे बड़ी विचित्र रही है, जब एक प्राणी अपने में शुद्ध आहार करता है, शुद्ध व्यवहार में लगा हुआ है, उसका जीवन एक महान् बना रहता है। मैं आधुनिक काल की चर्चा नहीं करता, मेरे प्यारे! महानन्द जी वर्णन करते रहते हैं। समय मिलेगा तो उनकी यह चर्चाएं होंगी।

आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है? क्या मुनिवरों! देखो, भगवान् मनु से श्वेतकेतु मुनि की यह चर्चाएं हुई क्या हे प्रभु! आपके मन में यह विचार कैसे आया? तो भगवान् मनु ने कहा कि मैं समाज को मानो देखो, एक ब्रह्मचर्य काल में, एक गृह काल में, एक वानप्रस्थ काल में परणित कराना चाहता हूँ। तो मानो देखो, इस प्रकार बेटा! उन्होंने माता के जीवन को एक मानवीय स्रोत बनाना चाहा। तो विचार क्या? संसार में मेरी प्यारी माताओं का आदर्श ऊँचा होना चाहिए। माता अपने में तपस्वी बन करके, अपनी गर्भ की आत्मा से वार्त्ता प्रकट करने लगे, जैसे आचार्य ब्रह्मचारी के अन्तर्हृदय को जान करके उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश कर देता है। जैसे मानो देखो, प्रति वाचो जब इस प्रकार के विचार मानव के बन जाते हैं तो उसका जीवन बिखरता नहीं। उनका विचार सुगठित हो जाता है।

मानो देखो, बहुत पुरातन काल की वार्त्ता है माता मल्दालसा अपने ब्रह्मचारियों को ब्रह्मवेत्ता बना रही है, तो मानो देखो, माता ब्रह्मवेत्ता ही दृष्टिपात करती रहती। वह

ब्रह्मवेत्ता बन गए। जीवन बिखरता नहीं है। प्राण को, मन को सुचारू रूप से अपने में परणित कर लेते हैं।
तो बेटा! आज का वाक् यह अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या है हमारा अभिप्रायः यह है कि हम समाज को मानो परम्परागतों के, जो अतीत का काल था, उस समाज को मानो देखो, दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है, जिन्होंने मानो अपने जीवन को महान् बनाने का प्रयास किया। देखो, इससे पूर्व काल में, मैं गृह की चर्चा करते हुए आज मैंने कुछ गृह की चर्चाएं की हैं। मुनिवरों! देखो, आचार्य जब ब्रह्मचारी को देखो, इस प्रकार की शिक्षा देता है, वह गृह में जा करके अपने जीवन को खिन्न नहीं कर रहा है। वह प्राणायाम कर रहा है, साधना में भी है, क्रियाकलापों में भी लगा हुआ हैं, संसार के भी क्रियाकलाप कर रहा है, तो मानो देखो, वह पृथ्वी की भूमि में बीज की स्थापना भी कर रहा है और उससे अन्नाद को ले करके अपने उदर की पूर्ति और समाज को भी ऊँचा बनाने का प्रयास करता है। इसी प्रकार हमें अपने जीवन को बनाना है और बना करके मुनिवरों! देखो, गृह आश्रम में माता अपने पुत्रों! को कैसे शिक्षा दे, यह चर्चा मैं कल प्रकट करूंगा।
मानो देखो, आज का विचार, अब यह समाप्त होने जा रहा है आज मैंने अपने विचारों में कुछ गम्भीर वाक्य, कुछ मानो देखो, वृत्तियों के वाक्य प्रकट किए हैं। कल समय मिलेगा तो कल बेटा! भगवान मनु के राष्ट्र में कैसे समाज में, अश्वपति के राष्ट्र में माता अपने पुत्रों को बाल्यों को पंक्ति लगा करके कैसे उपदेश देती थी यह चर्चाएं मैं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा।

१७ 12 03 1986 पुष्प 51 माताओं की अपने ब्रह्मचारियों को शिक्षा

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का, गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का, प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा ज्ञान

और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा का गुणगान गाने वाले, परम्परागतों से ही, बेटा! उस महान् देव की उड़ाने उड़ते रहते हैं। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर, वर्तमान के काल तक, एक ही विषय पर मानव अन्वेषण करता रहा है और नाना प्रकार की लेखनियां बद्ध करता रहा है और वे परमपिता परमात्मा के स्वरूप को जानने के लिए तत्पर रहे है।

मौलिक ज्ञान

दूसरा जो विचार है, मानव के जीवन का जो क्रियाकलाप है, मानव के जीवन की जो चर्या है, उसके ऊपर भी नाना आचार्यों ने, नाना अनुसन्धान वेत्ताओं ने, अपने भिन्न भिन्न प्रकार के विचार दिए हैं। आज मैं उन विचारों को ले करके, हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है, क्योंकि वेदमन्त्रों में भिन्न भिन्न प्रकार की, प्रायः चर्चाएं आती रहती हैं। वास्तव में मौलिक ज्ञान तो तीन ही वाक्यों में निहित रहता है, ज्ञान, कर्म और उपासना के रूप में परणित रहता है। प्रत्येक मानव की यह उड़ानें रही हैं कि हम ज्ञान और विज्ञान के उस स्वरूप में जाना चाहते हैं, जिस ज्ञान और विज्ञानवेत्ता ने मानो इस ब्रह्माण्ड की रचना की है और जो ज्ञान और विज्ञानवेत्ताओं ने ब्रह्माण्डवेत्ता को जानने के लिए तत्पर रहे हैं। तो दोनों प्रकार के विचारों में मानव परम्परागतों से बेटा! रत्त रहा है। आज मैं कोई विशेष चर्चाएं देना नहीं चाहता हूँ। क्योंकि मैं विज्ञान की उड़ाने भी नहीं उड़ना चाहता हूँ कि अणु परमाणु कैसे मानव के हृदयों में तरंगित होता रहा है। मानवीय मस्तिष्कों में नाना प्रकार की जो जागरूकता होती रही है, उसके ऊपर बेटा! हम प्रायः विचार विनिमय करते रहते हैं।

हमारे यहाँ राष्ट्र वेत्ताओं ने, अपने राष्ट्र को त्याग करके और भयंकर वनों में जा करके, ब्रह्म ज्ञान की दीक्षाएं प्रायः ऋषि मुनियां से लेना प्रारम्भ किया और इन दीक्षाओं को ले करके उन्होंने जो मार्ग दर्शाया, उसी मार्ग के आधार पर, मानव ने अपने जीवन को बनाने का प्रयास किया। तो आओ मेरे प्यारे! मैं बहुत, गम्भीर चर्चा तो तुम्हें नहीं देना चाहता हूँ। आज मैं तुम्हें बेटा! उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ माताएं अपने पुत्रों

को जन्म दे करके अथवा पुत्रियों को जन्म दे करके और उनको महान् बनाने के लिए प्रयास करती रहती थीं।
मुझे नाना ऋषि मुनियों का जीवन स्मरण आता रहता है, मैं कागभुषुण्ड जी की जब चर्चा करता हूँ, तो मानो उनकी माता की चर्चा करता हूँ तो मेरा हृदय गद्गद् हो जाता है और यह कहा करता हूँ कि माता निर्माणवेत्ता तो मेरा प्यारा प्रभु है परन्तु जिन तन्तुओं से निर्माण होता है, उन तन्तुओं में मानो जो एक विचार की धारा है, तरंगों की धारा है, उन तरंगों का उसमें प्रादुर्भाव होता है और वह मानो देखो, उन्हीं तरंगों से तरंगित होने वाली जो जीवन सत्ता है वे उसे प्राप्त हो जाती है। तो आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेषता में नहीं केवल विचार विनिमय क्या मेरी प्यारी माता अपने ब्रह्मचारियों को पालना करने के पश्चात, वह पांच वर्ष के पूर्व नाना प्रकार की प्रतियोगिताएं और उनके प्रति जो सदभावना उन्होंने दी, उसको पुनः से संचित्त करते हुए एक पंक्ति में विद्यमान हो करके, उनसे नाना प्रकार के प्रश्न कर रही है माता। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है तो मैं हृदय अगम्य बन जाता हूँ माता सीता के द्वारा दो ही पुत्र थे। मानो उस देवी ने अपने दोनों बाल्यों को प्रातःकाल में ऋषि के आश्रम में, भिन्न भिन्न प्रकार की शिक्षा देती रहती।

प्रातःकालीन प्रभु का दर्शन

केवल सीता का जीवन ही ऐसा नहीं था, मुनिवरों! देखो, माता स्नेहलता का जीवन भी प्रायः ऐसा था मुनिवरों! कोण्डली ब्रह्मचारी और मुनिवरों! देखो, कागभुषुण्ड जी और रेणकेतु ये तीन बाल्य थे, माता के पुत्र। परन्तु माता प्रातःकालीन पंक्तियां लगा करके ब्रह्मचारियों को शिक्षा दे रही है और यह कहती है हे बाल्यो! तुमने मेरी, लोरियों का पान किया है, तुम्हें महान् और पवित्र बनना है। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् माता उच्चारण कर रही है कि तुम्हें अपने विचारों को कैसा बनाना है? मेरे प्यारे! देखो, माता उच्चारण कर रही है, प्रातःकालीन तुम मानो अपनी स्थलियों से पृथक हो करके, अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो जाओ, और निवृत्त हो करके तुम मानो देखो, एक पंक्ति में माता विद्यमान

करा करके, और भिन्न भिन्न प्रकार की शिक्षा दे रही है, मानो देखो, हमारे यहां वेदमन्त्र का उद्घोष करती माता कहती है, हे बाल्य! ये मानो पञ्च यागों का चयन तुम्हें करना है। सबसे प्रथम मानो देखो, प्रातःकालीन ब्रह्म की सृष्टि का, ब्रह्म की रचना का विचार विनिमय तुम्हें करना है और उस रचना में, उस प्रभु का दर्शन करना है और उस रचना में तुम्हें अपना भी दर्शन करना है।

ओ३म् रूपी सूत्र में प्राण

प्रभु का दर्शन कैसे होता है? मेरे प्यारे! देखो, प्रातःकाल का जब सूर्य उदय होता है तो उदय होते ही प्रकाश आता है और उस प्रकाश में जो जो विभक्त क्रिया मानो पृथ्वी से समन्वय हो करके, हो रही हैं उन विभक्त क्रियाओं पर मुनिवरों! देखो, माता कहती है पुत्रो! तुम्हें विचार विनिमय करना है और वह तुम मेरे से श्रवण करो। मेरे से तुम मानो उन वाक्यों को अपने हृदय में धारण करो। तो माता कहती है हे बाल्य! यह जो प्रभु का ब्रह्माण्ड है, प्रभु का जो एक माला के सदृश्य जगत् मुझे प्रायः दृष्टिपात आ रहा है। यहाँ एक एक मानव की माला बनी हुई है। विचारों की विचारों से माला बनी हुई है। उस माला को तुम्हें विचारना है। और वह जो मनके हैं, और धागा है, उनका दोनों का तुमने समन्वय करना है। जैसे मुनिवरों! देखो, मानव का श्वास गति कर रहा है। हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारा श्वास गति कर रहा है और प्रत्येक श्वास में तुम मनके में पिरोना चाहते हो, ओ३म् रूपी सूत्र में, ओ३म् रूपी धागे में तुम इसे पिरोना चाहते हो। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी शान्त मुद्रा से इसे ग्रहण कर रहे हैं। माता जब लोरियों का पान करा देती है उसमें ओज और तेज का भरण कर देती है तो मानो देखो, ब्रह्मचारी अपने में महान् बन जाता है। मुनिवरों! देखो, इसीलिए हमारे यहाँ ब्रह्मयाग का वर्णन आता रहता है। ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? ब्रह्म का चिन्तन करना हैं ओर माता यह कहती है, हे ब्रह्मचारी! तू उस प्रभु को प्रत्येक स्थली में दृष्टिपात कर। माता यहाँ नाना मन्त्रों का अध्ययन करा देती है और मन्त्रों का अध्ययन करा करके, ब्रह्मचारी उसके पश्चात्

आचार्यकुल में प्रवेश हो जाते हैं।

आचार्यकुल में ब्रह्मचारी

जब आचार्यकुल में प्रवेश होते हैं तो आचार्य मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी को मानो देखो, अपना करके कहता है आओ, ब्रह्मचारी! मानो तुम अपनी इन्द्रियों के विषयों को मुझे प्रदान कर दो। मेरे प्यारे! माता तो ब्रह्मज्ञान की चर्चा कर रही है। एक पंक्ति में विद्यमान करा करके कहती है, हे बालक! तुमने आचार्य कुल में क्या अध्ययन किया है? मानो देखो, कुछ ब्रह्मचारी इस प्रकार का ही आचार्य कुल में विद्या का पठन पाठन कर रहे हैं मानो वह गृह में प्रवेश करना नहीं चाहते। परन्तु माता का दायित्व उसके पश्चात् भी बना रहता है। तो मुनिवरों! मानो देखो, मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, माता कहती है, हे ब्रह्मचारी! तुम देव पूजा करो। देव पूजा का अभिप्राय क्या है? तुम्हें देवताओं का पूजन करना है। आचार्य कुल में जब तुम प्रवेश करोगे, तो आचार्य तुम्हारा देवता है। वह चैतन्य देवता है। अपने उद्गारों से तुम्हें वह पवित्र बनाता है, अपने उद्गारों से तुम्हें महान् बनाता है। तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार माता जब शिक्षा देती है तो बाल्य देखो, आचार्य कुल में प्रवेश हो करके आचार्य प्रत्येक इन्द्रिय को अपने में धारण कर रहा है। प्रत्येक इन्द्रिय को अपने में मानो देखो, सहवासी बना रहा है मेरे प्यारे! देखो, आचार्य कहता है, हे ब्रह्मचारी! तुम्हें ब्रह्म मानो देखो, ब्रह्मचारी बनना है। तुम्हें ब्रह्म का चिन्तन करना है। देवपूजा में तुम्हें जाना है।

पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा अध्ययन

देवपूजा का अभिप्राय मुनिवरों! देखो, क्या है? मुझे एक समय मेरे पुत्र महानन्द जी ने यह प्रकट कराया, कि यह जो आधुनिक काल व्यतीत हो रहा है, इसमें मानव समाज ने देवपूजा का अभिप्राय यह स्वीकार कर लिया है कि हमें देवताओं का पूजन करना है और यहीं तक वेद की विद्या का मानो सद्गम्य हो जाता है। मैं यह कहता हूँ नहीं ऐसा नहीं है। मुझे महाराजा अश्वपति के यहाँ प्रायः बहुत समय तक वेदों के पठन पाठन कराने का प्रायः सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय

देते हुए कहा है अपना विचार देते हुए कहा है आचार्य कहता है तुम देवपूजा करो, देवपूजा किसे कहते हैं? देवपूजा के सम्बन्ध में हमने बेटा! बहुत सा अपना विचार दिया। परन्तु आज की देवपूजा है उसे कहते हैं जहाँ चैतन्य और जड़ दोनों की पूजा का हमारे समीप एक वाक्य आता है। बेटा! देखो, वह चैतन्य देवता तो आचार्यजन हैं, पितरजन हैं। मानो देखो, पितरों की व्याख्या तो बड़ी विचित्र है। बेटा! हमारे यहाँ पितर उसे कहा जाता है, जो हमें देता है, जो हमे स्नेह करता है। तो मेरे प्यारे! देखो, केवल पितर वही नहीं है। हमारे यहाँ चैतन्य भी पितर कहलाते हैं, और जड़वत भी पितर कहलाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, यह पृथ्वी हमारी माता और पितर कहलाती है। मानो देखो, यह आपो हमारा पितर और देवता कहलाता है। अग्नि हमारी माता और पितर कहलाती है। मेरे प्यारे! ये हमारे देवता हैं। ये हमारे देवत्त्व में रत्त रहने वाले हैं। जब बेटा! देखो, हम आपो पर विचार करते हैं, या हम पृथ्वी पर विचार विनिमय करते हैं, तो यह पृथ्वी हमारी माता है। और यह में जीवन प्रदान करने वाली है। मानो देखो, इसके गर्भस्थल में वैज्ञानिक प्रवेश करता है तो विज्ञानवेत्ता बन जाता है। मानो देखो, जब उसके गर्भ में, मैं प्रवेश होता हूँ, तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि माता के गर्भस्थल में क्या क्या वस्तु विद्यमान हैं? मुझे स्मरण आता रहता है द्वापर के काल का वाक्य भी आता है, त्रेता का काल भी मुझे स्मरण आता है जब माता कौशल्या जी मानो देखो, तप करती थी, तो मुनिवरों! देखो, वह तप करती हुई, यह पृथ्वी से कहती थी कि हे पृथां ब्रह्मे हे पृथ्वी! तू ब्रह्मा के तुल्य है। हे पृथ्वी! तेरे गर्भस्थल में नाना प्रकार का परमाणुवाद गति कर रहा है और वही परमाणुवाद मानो हमारे प्राण के द्वारा हमारे में प्रवेश करके हमें वह जन जीवन दे रहा है। हमें वह महानता प्रदान कर रहा है। मानो देखो, जैसे पृथ्वी के, एक एक कण में जीवन सत्ता विद्यमान होती है और वहीं जीवन सत्ता के मूल में नाना प्रकार का अन्नाद विद्यमान होता है। नाना प्रकार का खनिज विद्यमान होता है। जब विज्ञानवेत्ता इस पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करते हुए, माता के ऊपर चयन करते हैं अथवा अनुसन्धान करते हैं और उसमें देवतव को जानने में लग जाते हैं तो बेटा! ऐसा प्रतीत होता है, कि यह जो पृथ्वी है, यह मानो देखो, हमारी जननी है। हमारे में नाना

प्रकार के पदार्थों का पान कराने वाली हैं ये जो पृथ्वी है इसी के गर्भ में बेटा! याग होता है। मुनिवरों! देखो, यह बालक की नाभि बनी हुई हैं, यह विचारों की नाभि बनी हुई है। मुनिवरों! देखो, नाभ्यां ब्रह्मवाचो पृथाः मेरे प्यारे! यह पृथ्वी मानव के विचारों की नाभि है। विज्ञान के विचारों की नाभि है और यह नाभि में विद्यमान हो करके जब चक्र गति करता है, बेटा! देखो, नाना प्रकार के विज्ञान में मानव रत्त हो जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, जब पृथ्वी के गर्भस्थल में, विद्यमान हो करके मानव मुनिवरों! देखो, देवपूजा करता है और पृथ्वी की पूजा करता है, पूजा का अभिप्राय क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, इसका सदुपयोग करना हैं इसको सत्य में लाना है, विचारों में लाना है। मानो देखो, ये पृथ्वी एक माला है। एक माला बनी हुई है।

मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण है, मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने यह वर्णन कराया है, एक समय आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है, वर्तमान का जो विज्ञानवेत्ता है, वह तेरह लाख पृथ्वियां जान सका है। परन्तु जब यह विचार आता है कि यह पृथ्वी तो इससे भी विशाल, विस्तृत मानी गई है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने, वैज्ञानिकों ने समाधिष्ट हो करके मानो परम्परा के काल से लेकर के, आधुनिक काल तक, मेरे प्यारे! देखो, उस काल के वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया और समाधिष्ट हो गए, वसुन्धरा के गर्भ में प्रवेश हो गए। तो विचारने से यह प्रतीत हुआ, कि लगभग तीस लाख पृथ्वियां जानने का प्रयास किया। तीस लाख पृथ्वियां अब तक जानी हैं। और उन तीस लाख पृथ्वियों का ऐसे समन्वय रहता है, सूर्य से जैसे बेटा! देखो, सूर्य की नाना प्रकार की रश्मियां उत्पन्न हो रही हैं और ये रश्मियां अपना अपना नृत्य कर रही हैं। इसी प्रकार नाना चहुमुखी मुनिवरों! देखो, यह जो सूर्य है और सूर्य की जो किरणों हैं, उन्हीं किरणों के आधार पर बेटा! यह पृथ्वियां अपने में प्रतिष्ठित हो रही हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऐसा एक चक्र बना हुआ है जैसे भगवान कृष्ण ने मुनिवरों! देखो, द्वापर के काल में, अपने सुदर्शन चक्र का निर्माण किया था। और सुदर्शन चक्र की भांति यह सूर्य चक्र है और पृथ्वी उसके आरे लगे हुए हैं, इसी प्रकार इस ब्रह्माण्ड का चक्र प्रारम्भ

हो रहा है।

तो विचार आता है क्या तीस लाख पृथ्वियों के आरे बने हुए हैं, क्या यह एक माला बनी हुई है, जैसे शब्द से शब्दों का निर्माण होता है और वह एक माला बन जाती है। उसी प्रकार मुनिवरों! देखो, यह भी एक माला कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, माता कहती है, आचार्य कहते हैं अपने बाल्य ब्रह्मचारियों से, हे ब्रह्मचारियो! तुम वैज्ञानिक बनो और तुम कैसे विज्ञानवेत्ता बनो? मानो तुम्हारे हृदय में एक दूसरे के प्रति सहयोग होना चाहिए। क्रोधाभास है, नहीं होना चाहिए। यह जो क्रोधाभास मानव के जीवन को अपंग बना देता है मानो यह जो तुम्हारा विज्ञान है, अनुसन्धान है, ये तुम्हारे जीवन को प्रकाश में ला देता है। हे बाल्य! ब्रह्मचारियों! तुम्हें प्रकाश में आना है और प्रकाश के लिए तुम्हें सदैव रत्त रहना है।

मेरे प्यारे! देखो, जब आचार्य कुल में जब इस प्रकार से शिक्षा या माता एक पंक्ति में विद्यमान करा करके इस प्रकार की शिक्षा को उच्चारण करने लगती है, वह सबसे प्रथम मानव को मानव दर्शन देती है। मानव दर्शन भी इसी से प्राप्त होता है। हमारे जीवन का सम्बन्ध मेरे पुत्रों! देखो, एक एक परमाणु से रहता है, अथवा अणु से रहता है। अणु और परमाणुओं का समूह ही तो मानो सत्य माना गया है। मानवत्व माना गया है। तो इसी प्रकार, हमें विचार विनिमय करना है। हमें अपने में अन्वेषण करना हैं। हम मुनिवरों! परम्परागतों से विचारते रहे हैं, आचार्यों ने विचारा है। मेरे पुत्रो! देखो, ऐसे ऐसे लोक लोकान्तर हैं परमात्मा के राष्ट्र में, इस ब्रह्माण्ड में, परमात्मा के राष्ट्र में, जिनको एक एक सहस्र सूर्य उसे प्रकाश देते हैं मेरे पुत्रों! देखो, कैसा अनुपम यह ब्रह्माण्ड है प्रभु का? आज मैं ब्रह्माण्ड की कल्पना नही करने जा रहा हूँ।

विचार क्या, वेद का ऋषि कहता है, माता कहती है, हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें देवपूजा करनी है और पूजा का अभिप्राय यह उसमें जड़ और चैतन्य दोनों जो देवता हैं, उन देवताओं की तुम्हें पूजा करनी है, क्योंकि वह हमें जीवन सत्ता प्रदान करते हैं। वह जीवन देते हैं। हमारे मानवतत्व को ऊँचा बनाते हैं। मेरे प्यारे! मानो देखो, माता पिता कहते हैं, आचार्यजन कहते हैं कि तुम सुदृष्टि को पान करने लगो, मानो देखो, संसार के विज्ञान

में तुम प्रवेश करोगे, या देव पूजा में प्रवेश कर जाओगे तो मानो तुम्हें ये संसार तुम्हें देवतव में दृष्टिपात आएगा।

प्रातःकालीन याग

मेरे प्यारे! यह उपदेश मेरी प्यारी माता दे रही है। आचार्य विद्यालय में दे रहा है और कहता है तुम प्रातःकालीन याग करो। मेरे प्यारे! देखो, याग से क्या प्राप्त होता है? मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा है। नाना प्रकार की रूपकमयी चर्चा हुआ करती है, और ओर मुनिवरों! देखो, रूपकमयी चर्चा में यह होता है कि यह जो हमारा मानवत्व है, मानो देखो, इसमें ब्रह्माण्ड की नाना प्रकार की तरंगों को पिरोया, हमें अपने में प्राप्त होता रहता है। उस अपने को प्राप्त करना है। हमें अपने जीवन को एक महानता की वेदी पर ले जाना है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, माता अपने में यह उपदेश दे रही है ब्रह्मचारी को महान् बनाने के लिए। तो मुनिवरों! देखो, वह देवपूजा का अभिप्राय क्या है? देवताओं में ये पृथ्वी है, जो नाना प्रकार का खनिज देती है। देखो, यह आपो है, जो मानव को प्राणसत्ता प्रदान करता है। मुनिवरों! देखो, केवल प्राणी मात्र को यह प्राणसत्ता देता है। कृषक की कृषि मानो सुखद् हो रही है और जब यह आपो आ जाता है तो यह जीवन दे देता है और वह जीवन पा करके मुनिवरों! देखो, महान बन जाती है, अन्नाद के रूप में परणित हो जाते हैं। इसी प्रकार हमें विचारना है कि क्या हम मुनिवरों! देखो, देवताओं की पूजा करें। पूजा का अभिप्राय यह है कि उसका सदुपयोग करें। मेरे प्यारे! देखो, यही तो आपो अन्तरिक्ष में रहता है। यही तो आपो मानो समुद्रों में प्रवेश करता है। यही आपो जब इसमें नाना प्रकार के धातु पिपाद का या औषधियों का सब मिश्रण हो जाता है, यही मुनिवरों! देखो, आपो बन करके इसीमें शिशु प्रवेश हो करके माता के गर्भ में बिन्दु प्रवेश करके वहीं तो मुनिवरों! पुत्र के रूप में उत्पन्न हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, प्रभु का कैसा अमूल्य यह जगत् है। ब्रह्माण्ड की कल्पना करते ऋषि मुनियों ने कहा है, उसी एक मानो जीवाणु में संसार का मानो देखो, यह ब्रह्माण्ड निहित

रहता है। परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड की कल्पना जब मैं करता हूँ, देव पूजा की चर्चाएं होती रहती हैं। हे आपो! तू तो मेरा जीवन है। हे आपो! जब यज्ञमान जब अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता है, तो आपो को ले करके वह आचमन करता रहता है। क्यों करता रहता है? कि तू शीतल है, अमृत है, महान् है, विज्ञान है श्रोत्रीय है और तू ही आपो बन करके बिन्दु रूप कहलाता है तू ही बिन्दू रूप कहलाता है जिसको जान कर, मानव एक महानता की वेदी पर लाता है।

तो मेरे प्यारे! यह पितरजन, आचार्यजन, मातृजन इस प्रकार की ब्रह्मचारियों को शिक्षा देती रहती है, और यह कहती रहती है कि तुम्हें मोक्ष को जाना है तुम्हें मानो देखो, ब्रह्म की उपासना करनी हैं तुम्हें ब्रह्मचर्वोसि में प्रवेश होना है। मानो तुम्हें अपने को ब्रह्म में ही स्वीकार करना है। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार का जब विचार मानव के समीप आता है तो ज्ञान और विज्ञान दोनों मानव के समीप आ जाते हैं। तो आओ मेरे प्यारे! विचार क्या, मैं यह दे रहा हूँ, आचार्यजनों की भाषा में और मुनिवरों! देखो, माताओं की पवित्र भाषा में यह उपदेश दे रहा हूँ कि यदि माता यह चाहती है मेरे पुत्र में दुर्भावना न आए। कोई भी शब्द ऐसा नहीं है जो दूरिता भावना वाला बन जाए। क्योंकि जब उसको विचार पर विचार प्राप्त होते रहते हैं, विज्ञान में विज्ञान प्राप्त होता रहता है, तो अपने में मानो देखो, वह महानता की वेदी पर तत्पर हो करके महान बनता रहता है।

देवताओं का मुख

तो आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विचार देने नही आया हूँ विचार केवल यह है क्या हमें विज्ञान के युग में देवताओं की पूजा करनी है। देव याग करना है। मुनिवरों! देखो, अग्नि को देवताओं का मुख बनाना है। जब देवताओं का मुख बनाते हैं तो मेरे प्यारे! यज्ञमान नाना प्रकार के साकल्यों की आहुति दे रहा है, और वह यज्ञमान कहता है हे पत्नि! आओ, हम मानो देखो, याग करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह याग कर रहे हैं, अग्नि को मुख बना करके अग्नि को देवताओं का मुख बना करके, उसमें साकल्य प्रदान

कर रहे हैं और साकल्य दे करके कहते हैं, हे अग्नि तू महान् है, हे अग्नि! तू प्रकाश है हे अग्नि! तू विज्ञान का पुञ्ज है। हे अग्नेय! तू ही तो मेरे शब्द को देवता तक ले जाता है। तू ही तो देवपुरी बना देता है, मेरे शब्द को महान् बनाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब इस प्रकार यज्ञमान पत्नि से कहता है हे देवी! तुम अग्नि का ध्यान करो, हे देवी! तुम अग्नि का चयन करो। क्योंकि यही तो अग्नि तेरा जीवन है। यही अग्नि मानो देखो, देवताओं का मुख है, जो देवता, तेरे गर्भस्थल में शिशु की रक्षा करते हैं, शिशु की आभा में निहित रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह अपनी वाणी को पवित्र बनाते हुए, और वह अग्नाध्यान करते हुए और वह देवपुरी को प्राप्त होते हुए, उनका शब्द द्यौ तक चला जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, इसी विचार को ले करके मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ उद्दालक गोत्रीय ऋषियों ने और भी नाना ऋषियों ने बेटा! अपने पूर्वजों का दर्शन किया है। अपने पूर्वजों की महानता पर पहुंच गए हैं। मानो यही शब्द गति करता है। यही शब्द देवताओं की पुरी में प्रवेश कर जाता है। मेरे प्यारे! देखो, यही तो आभा में नियुक्त करने वाला, एक नृत कहलाता है, जिसको ऋषि मुनि परम्परागतों से बेटा! करते रहे हैं। आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विचार न देता हुआ, मेरी प्यारी माता जब प्रातःकालीन देवपूजा करती है, और ब्रह्मचारियों को, बाल्यों को, एक पंक्ति में नृत कराती है और कहती है हे बाल्यो! आओ, तुम अग्नि का चयन करो। अग्नि देवताओं का मुख बन करके आ गया है। तुम्हारे इस शरीर में, अग्नि देवताओं का मुख है, और जो अग्नि के मुख में प्रदान करोगे उसे नाना देवता हवि के रूप में पान करेंगे। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की चर्चाएं जब मेरी प्यारी माता लोरियों का पान कराती हुई, एक पंक्ति में विद्यमान करके उसे भरण कर देती है, तो वह बाल्य अज्ञान में क्यों आने लगा? उसे अज्ञान नहीं आएगा। वह वृद्धपन तक ज्ञान में रत्त रहेगा। उसे अज्ञान नहीं आ सकता।

मेरे प्यारे! देखो, मैं राष्ट्रवाद की चर्चा कर रहा था हे राजन्! तू आ। मैं महाराजा अश्वपति की चर्चाएं कर रहा था। बहुत समय हुआ, मैंने बहुत पुरातन काल में भी यह वाक्य प्रगट किए हैं, कि महाराजा अश्वपति के यहाँ इस प्रकार की एक राष्ट्रीय घोषणा

हुई थी, कि प्रत्येक गृह में देवपूजा होनी चाहिए। मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, विद्यालयों में क्या, गृहों में क्या, प्रत्येक गृह में बेटा! देखो, वेद मन्त्रों की ध्वनि आ रही है। जब राष्ट्र ध्वनित हो रहा है राजा अश्वपति मग्न हो रहा है। राजा भी याग कर रहा है और उनकी राज लक्ष्मी भी याग कर रही है। उनके पुत्र भी याग कर रहे हैं, पुत्रियां भी याग कर रही हैं। गृह में क्या, बेटा! राष्ट्र में सुगन्धि आ रही है। अपशब्द नही हैं। मेरे पुत्रो! हमारी प्रतिभाषा में दो शब्द बड़े अशुद्ध, पामर और धूर्त एक दूसरे पर आक्रमण करने के दो ही शब्द कहलाए गए हैं। एक धूर्त और ओक पामर हमारी संस्कृति का एक महान् प्रतीक माना गया है। आचार्य जब दण्डित करता है तो ब्रह्मचारी को धूर्त कहता है। और अपशब्दों में आता है, तो उसे पामर कहता है। मेरे प्यारे! देखो, कोई शब्द संस्कृति में या वेद की प्रतिभा में, वेद की भाषा में कोई शब्द अपशब्दों की गणना में आता ही नहीं, जैसा मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने वर्णन किया है। और कल मेरे प्यारे! महानन्द जी दो शब्द उच्चारण भी करेंगे। परन्तु आज का विचार हमारा यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए बेटा! विचार क्या? हमारे यहाँ आचार्य और मातृ महान् बनाने का प्रयास कर रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अपनी प्रतिभा में मानव, अपने में मानवीयता का दर्शन कर रहा है। जिन दर्शनों को करने के पश्चात् मानव का जीवन एक महान् बन जाता है, पवित्र बन जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं क्या उद्घोष गा रहा था? वेद का आचार्य मेरे प्यारे! देखो, वेद का यज्ञमान, जब यज्ञ करता है तो अग्नि की धाराओं पर अपने पूर्वजों का दर्शन करता है। अपने पूर्वजों का महान दर्शन कर रहा है यहाँ मुनिवरों! वेद का मन्त्र एक विज्ञान के युग में भ्रमण कर रहा है, एक विज्ञान की धाराओं में रमण कर रहा है। मैंने बहुत पुरातनकाल में निर्णय देते हुए कहा कि वही वानप्रस्थ ले करके वही तो विद्यालय को पवित्र बनाते हैं। वही आचार देते हैं, और वही विचार दे करके ब्रह्मवर्चोसि का पालन

करते हैं।

प्राणायाम के प्रकार

बेटा! ब्रह्मचर्य की रक्षा कैसे होती है? यह बड़ा एक विशिष्ठ एक विचार हमारे समीप आता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचर्य की रक्षा करने वाला श्वास पर गति कर रहा है। श्वास पर, मन का और प्राण दोनों का समन्वय कर रहा है। जब तक प्राण और मन, दोनों का विभाजन रहेगा तब तक मानव ब्रह्मवर्चोसि नहीं बन सकता। मेरे प्यारे! जब मन और प्राण दोनों का परस्पर समन्वय हो जाता है, मुनिवरों! देखो, वह एकता के सूत्र में प्रवेश हो करके, मुनिवरों! वह ब्रह्मवर्चोसि बनते हैं। तो पितरजन, आचार्यजन मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार ब्रह्मचारी को ब्रह्मचारी बनाने के लिए, प्राणायाम की शिक्षा देते हैं। हमारे यहां प्राणायाम भिन्न भिन्न प्रकार से होता है। एक प्राणायाम हमारे यहां खेचरी मुद्रा वाला है। एक प्राणायाम हमारे यहाँ सूर्य की किरणों के साथ गति करने वाला है। एक प्राणायाम हमारे यहाँ चन्द्रमा के रूपों में गति करने वाला है। एक प्राणायाम पृथ्वी के ऊपर गति करने से प्राप्त होता है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है त्रेता के काल में भगवान राम को इन प्राणों के ऊपर बड़ा अधिपथ्य था। जब वशिष्ठ और माता अरूणधती के चरणों में विद्यमान हो करके, राम मुनिवरों! देखो, जब अध्ययन करते थे, तो प्राणों का अध्ययन किया जाता था। वह प्राणों में पार्थिक आभा वाला जो प्राणायाम है उसे वह किया करते थे। इसीलिए पृथ्वी के परमाणुओं का उन्हें बोध था और जहाँ पृथ्वी मानो उष्ण है, अन्नाद उत्पन्न कराने वाली है, उस पृथ्वी में वह अन्नाद की उत्पत्ति के लिए प्रयास करते रहते थे। जब ये विचार हमारे समीप आता है मेरे प्यारे! देखो, वह पार्थिक आभावृत्तियाम प्राणायाम कहलाता है। एक प्राणायाम वह है, मुनिवरों! योगी बनता है और योगेश्वर बनने के लिए, हम प्राणायाम कर रहे हैं। शीतली प्राणायाम करके उसमें सूर्य प्राणायाम की पुट लगाते हैं। तो बेटा! देखो, योगी, अपने में योगाभ्यास कर रहा है, भयंकर वनों में और वह खेचरी मुद्रा से, प्राण से उन परमाणुओं को ले रहा है जिन परमाणुओं में मेरे प्यारे!

क्षुधा को शान्त करने की प्रवृत्तियां होती है मेरे प्यारे! देखो, जिन परमाणुओं को, अपने उदर में प्रवेश करता है तो वह प्राणायाम कर रहा है और अपने में उन पोषक तत्त्वों को अपने में ग्रहण कर रहा है, उस अन्नाद को पान कर रहा है जिनको प्राणों की आवश्यकता है। मेरे प्यारे! देखो, आचार्यों ने यह कहा है हे ब्रह्मचारियों! यह प्राण ही तो निगलने वाला है। यह प्राण ही तो भोगता है। इसलिए प्राण को एकाग्र करके, मन को एकाग्र करके, क्योंकि मन में इस पृथ्वी का विज्ञान है, ज्ञान है और देखो, यह प्राण, उस परमाणु को गति दे रहा है। जब मन का और प्राण का दोनों का समन्वय होता है तो ऋतम्भरावी क्षेत्र में जा करके ये मौन हो जाता है। संसार को जान करके ये खेचरी मुद्रा में लग जाता हैं और पोषक तत्त्वों को शीतली प्राणायाम के द्वारा बेटा! अपने में ग्रहण कर लेता है। उसे क्षुधा नहीं लग पाती। वह मानो अपनी आभा में रत्त हो जाता है। तो मुनिवरों! विचार यह है कि बिना प्राणायाम के प्राण और मन दोनों का समझौता बिना किए अथवा दोनों का समन्वय किए बिना ब्रह्मवर्चोसि का पालन नहीं किया जा सकता।

मेरे प्यारे! आचार्यजनों ने पुरातन काल में ब्रह्मचारियों को सबसे प्रथम प्राण क्रिया को मानो लाने के लिए ब्रह्मचारियों को एक ऊर्ध्वा में उपदेश दिया, और ये कहा आओ विराजो। मेरे प्यारे! एक पंक्ति लगी हुई है, आचार्यजन जो वानप्रस्थी जीवन को व्यतीत करने वाले हैं, वह मेरे प्यारे! विद्यालयों में शिक्षा दे रहे हैं। शारीरिक प्राणायाम और आत्मिक प्राणायाम बेटा! दोनों प्राणायाम करना है। अब इनमें बड़ा भेदन बन गया है। मेरे प्यारे! देखो, शारीरिक प्राणायाम वह कहलाता है मानो देखो, जिससे योग आचरणों में मानो शरीर का हम शुद्धीकरण करते हैं, वह शारीरिक प्राणायाम है और आत्मिक प्राणायाम वह कहलाता है, एकान्त स्थलों में विद्यमान हो करके, खेचरी मुद्रा से प्राणायाम कर रहा है। और वह प्राणायाम करके वह अन्तरिक्ष से पोषक तत्त्वों को अपने में ग्रहण कर रहा है और प्राण को प्रणव बना करके उसमें मेरे पुत्रों! देखो, उसमें लय हो रहा है। उसमें ब्रह्माण्ड का दर्शन कर रहा है। ये मेरे पुत्रों! प्राण की बड़ी विचित्र विवेचना रही है। मैं बेटा! आज उस क्षेत्र में जाने के लिए नहीं आया हूँ। बेटा! कोई काल था,

कोई समय था जब विद्यालयों में प्राणायाम के आचार्य बनने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। आधुनिक वर्तमान विचाराम् ब्रह्मे मैं इस सम्बन्ध में कोई विचार देना नहीं चाहता हूँ।

केवल विचार इसीलिए कि संकेत करना है। क्या आचार्यजन और राजा के यहाँ से घोषणा होती है, राजा कहता है विद्यालयों में मानो देखो, वह अन्नाद होना चाहिए, वह द्रव्य होना चाहिए जो द्रव्य दूषित न हो। मेरे प्यारे! ब्राह्मण को वह द्रव्य देना चाहिए, जो शिक्षा दिला रहा है, जिससे निष्पक्ष, किसी का भाग न हो। अन्नाद भी पवित्र होना चाहिए। ब्रह्मचरिष्यामि बन करके मेरे पुत्रों! देखो, अपनी आभा में नियुक्त हो जाते हैं। आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं आज इस प्राण की महत्वता क्या है? ब्रह्मचारियों को आचार्य शिक्षा देता है, क्या यह जो तुम्हारे भुज हैं, इन भुजों में पञ्चीकरण हो रहा है। एक एक भुज में पञ्चीकरण हो रहा है। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी कहते हैं प्रभु! ऐसा क्यों आपने कहा? क्या मानो देखो, हमारे एक भुज में पञ्चीकरण है। मेरे प्यारे! प्रवृत्तियों में पञ्चीकरण है। उसी पञ्चीकरण को ले करके, हमारे जीवन की प्रतिभा को जन्म दिया जाता है और पवित्रता की वेदी पर लाया जाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, यहाँ प्राणायाम कितने प्रकार के होते हैं। एक सूर्य प्राणायाम, एक चन्द्र प्राणायाम, एक संकल्प प्राणायाम, एक शीतली प्राणायाम, एक वृत्तिका प्राणायाम, एक मुनिवरों! देखो, ऊर्ध्वकेतु प्राणायाम कहा जाता है। शीतली और ऊर्ध्वकेतु प्राणायाम भी अपने में एक महत्वदायक होता है। मेरे प्यारे! इन प्राणायाम को करने वाला मानो बेटा! अपने में महान बन जाता है और देवपूजा में वह रत्त हो जाता है। आओ, मेरे प्यारे! देखो, यह वायु कैसा हमारा पितर है बेटा! जब प्राण को हम वायुमण्डल में से, वायु में से, पोषक तत्त्वों को लेते हैं, हे वायु! तू हमारा देवता है। हे वायु! तू देवता बन करके हमारी रक्षा कर रहा है। तू प्राणसत्ता दे रहा है। उसी प्राणसत्ता को पाकर के हमारा जीवन, एक महान् बन रहा है। पवित्रतम बन रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, इस प्रकार जो अभ्यास कराता है, अभ्यस्थ कराता है तो मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचारी अपने में

प्राणसत्ता को ग्रहण कर लेता है।

आओ मेरे प्यारे! मैं एक विचार दे रहा हूँ, एक धारणा दे रहा हूँ। अपने किए हुए क्रियाकलापों की कुछ चर्चा कर रहा हूँ। महाराजा अश्वपति के यहाँ बेटा! देवपूजा का उद्घोष हो रहा है। यही उद्घोष भगवान राम के राष्ट्र में भी हुआ कि प्रत्येक गृह में याग होना चाहिए। प्रत्येक गृह से वेद की ध्वनि आनी चाहिए। यही वेद की ध्वनि आ करके हमारी राष्ट्रीयता और मानवीयता पवित्र बनती है। आज मैं विचार देना विशेष नहीं चाहता हूँ। विचार तुम्हें यह दे रहा हूँ कि प्रत्येक मानव को महान बन करके, अपने विचारों को आचार्यों के चरणों में विद्यमान हो करके अपनी महानता का दर्शन करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, पंक्तियों में विद्यमान हो करके माता अपने में देवपूजा, ब्रह्मयागों की चर्चा करती रहे और मुनिवरों! देखो, अपने में, महान् बनाने के लिए पितर भी चर्चा करते रहें। आचार्यकुल में, वानप्रस्थ होने चाहिए जिससे उनके विचारों की तृप्त हुई जो तरंगें होती हैं वह ब्रह्मचारियों के हृदयों में प्रवेश कर जाएं। वह ज्ञान प्रवेश कर जाएं। मानो देखो, राजा को चाहिए कि शिक्षा पर ब्राह्मण और विद्यालयों में ब्रह्मचारियों को इस प्रकार के अन्नाद का प्रयत्न करना चाहिए जिससे मानो देखो, उसमें दूषित अन्न और द्रव्य न चला जाए। देखो, इस प्रकार का विचार, जब राजा के राष्ट्र में होता है, तो राजा का राष्ट्र पवित्र बनता है। समाज में एकता का सूत्र आता है। और मानो देखो, आचार्यजन महान् बन करके राष्ट्र और समाज को कर्त्तव्यवाद की वेदी पर लाने का प्रयास करते हैं। परन्तु देखो, यौगिकवाद भी उसी में निहित होता है।

आज का हमारा यह विचार क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और वेद के वाक्यों को ले करके हम अपने जीवन को महान् बनाएं, पवित्र बनाएं। ओजस्वी बना करके और मुनिवरों! देखो, अपने में महान् बन जाएं। हमारे यहाँ पुरातन काल अतीत का जो काल है मानो वह पवित्रतम रहा है। उनमें एक विचारधारा मुनिवरों! देखो, राजा अश्वपति के यहाँ वैज्ञानिकजन अनुसंधानवेत्ता अपने में अनुसन्धान करते करते, विज्ञान इतना ऊर्ध्वा में रहना चाहिए क्या मुनिवरों! देखो, कि अन्तरिक्ष में भ्रमण करना चाहिए और नाना लोक लोकान्तरों की यात्रा होनी चाहिए जिससे यह

समाज में ज्ञान और विज्ञान अपने में अनूठा बना रहे। ज्ञान और विज्ञान अनूठा बन करके जैसे माता अपने विचारों का विभाजन करके, बालक का निर्माण करती है, इसी प्रकार सूर्य की नाना प्रकार की किरणें मेरे प्यारे! देखो, नाना विभाजन करके एक दूसरे परमाणु और तरंगों को विभक्त करती रहती हैं, इसी प्रकार मेरे प्यारे! आचार्य के कुलों में अभ्यो बना रहता है। तो विचार विनिमय क्या? आज का विचार यह कहता है क्या, हम मुनिवरों! देखो, हम पंक्ति लगा करके, एक पंक्ति में विद्यमान हो करके ही एक ही शिक्षा का विचार हो, एक सा ही क्रियाकलाप होना चाहिए तो राजा का राष्ट्र पवित्र बन जाता है, महान बन जाता हैं, समाज में एक दूसरे में समावेशता के मानो देखो, तन्तुओं का जन्म हो जाता है। आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार हमारा यह कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देवपूजा करते हुए, आज हमें अपने जीवन को विचारशील (पुस्तक से) बना करके इस संसार सागर से पार हो जाएं। कल मेरे प्यारे! महानन्द जी भी अपने कुछ विचार प्रकट करेंगे। वह अपनी विवेचना में बड़े उत्सुक हो रहे हैं। इनका बड़ा एक विचार बन रहा है कि मैं अपने विचार दूं। आज का विचार यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस सागर से पार हो जाएं। शेष विचार कल प्रकट करेंगे। कल मेरे प्यारे! महानन्द जी भी विचार देंगे।

१८ 13 03 1986 पुष्प 51 महानन्द जी द्वारा प्राचीन और आधुनिक संस्कृति की तुलना

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण किया जाता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि जो परमपिता परमात्मा इस जड़वत् में और चैतन्यवत् का जो स्रोत है, मानो वह सर्वत्रता में उस सूत्र की भांति रहता है, उस महामना देव की महिमा का, हम सदैव गुणगान गाते रहते हैं, और उसकी

महिमा के ऊपर विचार विनिमय करते रहते हैं और विचारते रहते हैं, वह कितना महिमावादी है। मानो उसका जो यह ब्रह्माण्ड है, वह अनुपम माना गया है क्योंकि वह वरुण है, वरणीय योग्य है, जो भी मानव उसको अपना वरणीय बना लेता है अथवा उसे अपनी प्रतिभा का स्रोत स्वीकार करता है वह मानव अपने में महान् है और वह विचित्र माना गया है। आज का हमारा वेदमन्त्र नाना प्रकार की हमें प्रेरणा देता रहता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा प्रेरणा का स्रोत है और वह प्रेरणा का एक महान् वृस्तित माना गया है जिसके ऊपर मानो परमपिता परमात्मा परम्परागतों से मानो ही प्रेरणा का स्रोत बन करके और प्रेरणा प्राप्त करता हुआ मानो वह संसार की ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ता रहता है। बहुत पुरातन काल हुआ, बेटा! हम नाना प्रकार की प्रेरणाओं को ले करके और अपने मानव जीवन को विचित्र बनाते रहे हैं, और भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ानें उड़ते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र, उस महान् प्रेरणा का स्रोत्र है। मेरे प्यारे! महानन्द जी को भी आज दो शब्दों का उद्गीत गाना है। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र, ये कह रहा है कि हम प्रेरणादायक बने और हमारा वाक् वही चल रहा है, जो विद्यालयों का प्रति स्रोत हैं। मानो जो विद्यालय में क्रियाकलाप होते रहते हैं और विज्ञानशाला में, नाना प्रकार के विज्ञानवेत्ता, अपने राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाने में लगे हुए हैं।

राष्ट्रवाद

मेरे प्यारे! देखो, अश्वपति की चर्चाएं चल रही हैं और महाराजा अश्वपति के यहाँ जब राष्ट्र का नियम बना, तो मनु जी के उस निर्माणंब्रहे उस राष्ट्रवाद की चर्चा को ले करके ही, उन्होंने उसी की अपने में क्रियाकलापों की चर्चाएं की हैं और यह कहा है कि मनु जी ने मानव समाज को विभक्त करने में, मानव समाज को सुगठित करने में दोनों प्रकार का प्रयास किया है। परन्तु देखो, वह कहाँ चला आया है, इतना तो मुझे ज्ञान नहीं, परन्तु द्वापर के काल में उस प्रणाली का ह्रास होना प्रारम्भ हुआ था और वहीं देखो, महाभारत भूमि एक राष्ट्रीय भूमि न बन करके और वह एक प्रेरणा का स्रोत न

बन करके, वह अपने में एक रक्तमयी धारा बन गई, परन्तु देखो, यह स्वार्थपरता है, जिस भी काल में समाज में या राष्ट्रवाद में रक्त की धाराएं प्रारम्भ हो जाती हैं तो इसमें स्वार्थपरता राष्ट्रीय हुआ करती है, क्योंकि समाज की नहीं होती। इसमें राष्ट्रवाद के ऊपर आरोपण किया जाता है। आरोपण ही नहीं किया जाता वह सत्यवाद कहा जाता है। परन्तु अब मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे। क्योंकि इनके हृदय में एक वेदना रहती है, और वह वेदनामयी विचारों को ले करके, वह राष्ट्रवाद की चर्चाएं किया करते हैं। अब मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने विचारों को व्यक्त करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् सर्वाङ्गतं ब्रह्माः वस्त्वश्चमाः ममत् प्रजां दिव्याः। मेरे पूज्यपद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, अपने कुछ विचारों को व्यक्त कर रहे थे और उनके विचारों में, एक मानवता का दर्शन होता रहता है और मैं तो अपने में, प्रायः मानवता का दर्शन करता रहता हूँ, परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ऐसी वार्त्ता प्रगट कर रहे हैं। कई समय हो गया है, जिन चर्चाओं को इस समय उच्चारण करने में मुझे कोई लाभप्रद नहीं हो रहा है। क्योंकि मेरी प्यारी माता की प्रशंसा कर रहे हैं। कई समय हो गया है, माताओं के महत्व का वर्णन कर रहे हैं। वाक् तो दर्शनों से गुथा हुआ है, वाक् तो ऐसा है, जिसको हम आर्ष पद्धति कह सकते हैं। यह जो आर्ष पद्धति है। यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उसका निरूपण करते रहते हैं और उसके ऊपर अपना विचार देते हुए, मानो आज मैं उनके विचारों को ले करके चलूं तो आश्चर्य होगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह कहते हैं इनके वाक्यों में आया कि माता को प्रातःकालीन याग करना चाहिए और बाल्यों की पंक्ति बना करके और अपना मानव दर्शन का उपदेश देना चाहिए। परन्तु देखो, पुरातन काल हुआ, हमारे यहाँ साहित्य में विकृतियां आई, साहित्य में विकृतियां किस काल में आती हैं, जबकि समाज में स्वार्थपरता और अज्ञान आता है। सबसे प्रथम मैं महाभारत के काल में नहीं, तुम्हें राम के काल में ले जाना चाहता

हूँ, जिस वाक् को मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट करते रहे हैं।

महर्षि कागभुषण्ड

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया, कि कागभुषुण्ड जी की माता ने एक पंक्ति में तीनों ब्रह्मचारियों को ब्रह्म का उपदेश दिया। परन्तु आधुनिक जगत्, वर्तमान का काल उन्हें क्या कहता है कि कागाभुषुण्डी जी तो एक पक्षी है और वह कागा थे, तो उनका कागाभुषुण्डी क्योंकि वह लोभश मुनि की शरण में आए और महर्षि लोमश मुनि से उनका परस्पर विचार विनिमय होता रहता। मैं भोले प्राणियों से यह जानना चाहता हूँ, मैं यह वाक् जानना चाहता हूँ कि जो कागा है और महर्षि लोमश जो महान तपस्वी हैं। परन्तु वह एक ऋषि का और काग का समन्वय हो सकता है। यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है क्योंकि वह एक युक्तियां तो आती हैं। जैसे पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं कि कागभुषुण्ड जी ऋषि थे, परन्तु आधुनिक जो वर्तमान का काल हैं उन्हें ऋषि नहीं कहता, उन्हें कागभुषुण्ड जी कहते हैं, और लोमश मुनि की शरण में कहते हैं। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव यह कहते हैं कि लोमश मुनि और कागभुषुण्ड जी ने दोनों ने रावण का अश्वमेध याग कराया था। जो अश्वमेध याग कराता हो, क्या वह कागा ही बना रहेगा? परन्तु यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है।

माता का कर्तव्य

रहा यह कि आज हम, इन विचारों को जैसे पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट कर रहे हैं, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह उच्चारण करते हैं कि गृह आश्रम में मानो देखो, माता को अपने गर्भ से बाल्य से वार्त्ता प्रगट करनी चाहिए। पूज्यपाद गुरुदेव की उड़ान बड़ी विचित्र है, परन्तु मैं यह कहता हूँ कि वार्त्ता कैसे प्रगट की जाती है, पूज्यपाद उसका निराकरण भी करते हैं, और यह कहते हैं कि मौन हो करके माता प्रातःकाल में, रात्रिकाल में, अपने अन्तरात्मा जो उसके गर्भ में विद्यमान है उससे वार्त्ता प्रगट की जाए, तो पूज्यपाद गुरुदेव इस प्रकार के हेतु देते रहते हैं। परन्तु वाक् बड़ा सजातीय दर्शनों का और वेदों की परम्परा एक चर्चा मानी जाती है। परन्तु जब मैं इस वाक् पर आता हूँ कि पूज्यपाद

गुरुदेव यह कहते हैं कि विद्यालयों में ब्रह्मचारिणीयों को उपदेश देने वाली वानप्रस्थी होनी चाहिए और विद्यालयों में वानप्रस्थी होने चाहिए, जो गृह से उपराम हो जाएं, और अपने पुत्रों को राज्य दे करके और उसे त्याग दें, राष्ट्र को और गृह को त्यागने वाले हों और वह विचारों जो उपदेश, वे जो उपदेश दें और अपने अनुभव को ब्रह्मचारिणियों को प्रगट कराएं।

तो इसमें कोई द्वितीय वाक् नहीं हो सकता कि वह महान् बन जाएं क्योंकि विद्यालयों में आचार्यों के जो विचार हैं आचार्यों की जो आचार संहिता है उसकी प्रतिभा आचार्य के विचारों की आचार्य के हृदयों की ब्रह्मचारियों के प्रति एक आभाहित हो जाती है। वह ब्रह्मचारियों का हृदय उसी से बनता है क्योंकि जब यह आता है आचार्य कहता है ब्रह्मचारी आ, हममें तीन रात्रि और तीन दिवस में तुम्हें अपने गर्भ में धारण करूं। कहीं नौ आता है कहीं तीन आता है परन्तु नौ रात्रि ले लिया जाए तो प्रत्येक इन्द्रियों के देखो, स्रोत का यह विषय बन जाता है इन्द्रियों को एक एक इन्द्रिय के ऊपर आचार्य व्याख्या करता है आचार्य अपनी इन्द्रिय को सजातीय बनाता है और ब्रह्मचारियों की इन्द्रियों को सजातीय बना करके वह इन्द्रियों के दोषों को अपने में धारण कर लेता है। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वाक् कई काल में प्रगट किया है परन्तु आज भी मैं उसको उच्चारण कर रहा हूँ और यह वाक् उच्चारण कर रहा हूँ कि वह ब्रह्मचारी एक महानता की आभा में अपनी उड़ाने उड़ता है और विचारणीय एक उपदेश अपने में धारण करता है। वह आचार्य आचार संहिता में परणित हो जाता है। आचार्य के मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वैज्ञानिक हेतु दिए, कि महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में, वैज्ञानिकों ने यन्त्रों का निर्माण किया, और महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि ने आचार्यों का बहिष्कार किया ऐसा भी इन्होंने मुझे वर्णन कराया।

शिक्षण में सुद्रव्य

कई समय से चर्चाएं चल रही हैं, परन्तु वह बहिष्कार भी हुआ और वैज्ञानिकों के यन्त्रों का निर्माण जो सर्व सत्य मानी गई है इसी प्रकार जब विचार आता है, तो यह भी तो

वाक् पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट कराते रहते हैं। कि जो राजा के राष्ट्र में शिक्षा प्रणाली है उस शिक्षा प्रणाली में उस द्रव्य का उपयोग होना चाहिए, जिस द्रव्य में दोष न हो। जिस द्रव्य में दोष होता है, वह जो द्रव्य है जो आह और दाह द्रव्य है, वह द्रव्य कदापि भी विद्यालयों को पवित्र नहीं बना सकता।

महर्षि वशिष्ठ आश्रम में

तो विचार आधुनिक काल के मैं राष्ट्र पर जाऊं या पुरातन काल के राष्ट्र पर पहुंचूं। पुरातनकाल के राष्ट्र में यह है, मुझे स्मरण है पूज्यपाद गुरुदेव ने, एक समय मुझे त्रेता के काल में यह कहा कि जाओ, तुम वशिष्ठ मुनि महाराज की आचार संहिता को दृष्टिपात करके आओ। तो मैं मानो पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा करके और देखो, हम आचार संहिता को दृष्टिपात करने के लिए हम ऋषि के आश्रम में पहुंचे और वह ऋषि माता अरुणधती एक आसन पर विद्यमान हैं परन्तु ब्रह्मचारियों को उपदेश दे रहे हैं? उनकी प्रातःकाल की जो आचार संहिता है, वह मानो देखो, आचार संहिता, हे बाल्य! प्रातःकालीन मानो सूर्य उदय होने से पूर्व तुम अपने जीवन की आचार संहिता को बनाना प्रारम्भ करो। मानो वह इसी प्रकार के ब्रह्मचारियों को जब उनका भोज्य हुआ तो जिस पंक्ति में राजा दशरथ के राजकुमार हैं, उसी पंक्ति में मानो द्रव्यहीन प्राणियों के बाल्य हैं। एक पंक्ति में विद्यमान हैं, एक पंक्ति में एक ही प्रकार का भोज्य है उसे आनन्द से प्राप्त कर रहे हैं। तो यह आचार संहिता आहारों की और वह कैसा आहार था, कि राजा दशरथ के यहाँ वह आहार था, जिस आहार जिस अन्न से देखो, जो कृषकों का अन्न था, उनका कृषक जो भूमि में उद्योग कर रहा है, वह अन्न ब्रह्मचारियों के लिए प्रसन्नता से दिया जा रहा है। मानो वह विद्यालय में भी अपनी आचार क्रियाकलापों में अपने अन्न को उत्पन्न करते रहते थे। उस उन अन्न को पान करके जब आचार्य और ब्रह्मचारी अपने में कहता चक्षु में शुन्धामि, प्राणां मे शुन्धामि मानो देखो, सब प्राण और हृदय इन्द्रियां सब पवित्र बनती चली जाती हैं। तो विचार यह राष्ट्र का क्रियाकलाप हैं, विचार क्या मुनिवरों! देखो, मुझे तो ऐसा स्मरण है कि ऋषि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मचारी

थे, ओजस्वी और ब्रह्मवेत्ता, उनकी पत्नी अरुणधती ब्रह्मचारिणी मानो देखो, ब्रह्म का उद्घोष करने वाली।

महर्षि वशिष्ठ आश्रम की आचार संहिता

अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के आदेशानुसार जब मैंने आचार संहिता को दृष्टिपात किया, तो रात्रिकाल में वही वाटिका में शान्त हो गया। तो वाटिका में विद्यमान होकर करके दृष्टिपात किया कि ब्रह्मचारी अपने कक्ष में विद्यमान हो गएं है। अध्ययन करने के पश्चात् निद्रा की गोद में चले गएं और माता अरुणधती और वशिष्ठ मुनि महाराज अपने में ब्रह्म की चर्चा करने लगे। वह ब्रह्म का उद्गीत गा रहे है। माता अरुणधती कहती है भगवन्! इन ब्रह्मचारियों को हम सुयोग्य कैसे बना सकते हैं? वशिष्ठ कहते थे कि देवी! हमारा सुयोग्य बन जाना ही ब्रह्मचारियों का सुयोग्य बन जाना है। यदि हमारा जीवन सुयोग्य नहीं बनेगा, तो हम ब्रह्मचारियों को सुयोग्य नहीं बना सकते। हम ब्रह्मचारियों को महान् नहीं बना सकते। इसी प्रकार की चर्चा करते करते मानो देखो, वह लोक लोकान्तरों की उड़ानें उड़ने लगे और दोनों की प्रतियोगिता होने लगी।

अरुणधती कहती है कि महाराज! यह वशिष्ठ मण्डल क्या है? उन्होंने कहा वशिष्ठ मण्डल अपने लोकों में अपने माला में वशिष्ठ है जैसे माला में सुमेरू होता है इसी प्रकार यह सुमेरू कहलाता है। और महाराज अरुणधती मण्डल क्या है? उन्होंने कहा अरुणधती मण्डल का उस वशिष्ठ मण्डल से समन्वय होता है और दोनों की छाया आ करके और जो बालक माता के गर्भ में देखो, नाभि केन्द्र में उसका समन्वय होता है और ब्रह्मरन्ध्र में उसकी छाया आती है, तरंगें आती रहती हैं, जैसे सूर्य की किरण होती है। इस प्रकार जब मैंने दोनों का सम्वाद दृष्टिपात किया और उन्होंने कहा प्रभु! लोक लोकान्तरों की माला कैसे बनाई जाती है? उन्होंने कहा देवी! जैसे आचार्य ब्रह्मचारियों की माला बना लेता है और ब्रह्मचारियों के क्रियाकलापों की माला बना करके एक सूत्र में पिरो देता है, ज्ञान के सूत्र में, इसी प्रकार लोक लोकान्तरों की माला बनी हुई होती है। मानो देखो, यह वाक् शान्त हो करके, अपने अपने कक्ष में जा करके विद्यमान हो गये

और मैं भी अपने आश्रम को चला आया, पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने सब वार्त्ता प्रगट की तो यह स्रोत्र कहाँ से उत्पन्न हुआ? इसका समन्वय राष्ट्र से होता है।
राष्ट्र किस प्रकार का महान् होना चाहिए, राजा के राष्ट्र में वह द्रव्य व्यवहार में होना चाहिए। जिस पर मानो देखो, किसी प्रकार का पाप कर्म न हो। मानो जब मैंने पूज्यपाद गुरुदेव को यह प्रगट किया, तो मेरे ब्रह्माण्ड नवीन बन गया। मेरे ब्रह्माण्ड की मानो एक धारा मेरे समीप आने लगी, मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करने लगा। अब मैं देखो, पुरातनकाल के राष्ट्र की चर्चाएं, मानो देखो, राष्ट्र अपने में राष्ट्र है कर्त्तव्य का पालन समाज कर रहा है, ब्रह्मचारी अपने में कर रहा है, गृहस्थ अपने में कर रहा है, और देखो, गृह को त्याग करके, वानप्रस्थी देखो, विद्यालयों में शिक्षा प्रदान कर रहे है। वह शिक्षा दे रहे हैं ब्रह्मचारियों को और ब्रह्मचारिणियों को महान बना रहे है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया, क्या ये प्रणाली मानो देखो, मुझे ऐसा स्मरण है, क्या वह प्रणाली राष्ट्रीयता में कहलाती है, वह राष्ट्रवाद से गुथी होती है, ये राजा का कर्त्तव्य है। राजा के यहाँ सबसे प्रथम देखो, वह जो विचारों को और वह जो विद्या की संस्कृति की, अपनी प्रणाली है उसे सबसे प्रथम महान् बनाना है। यदि राजा के राष्ट्र में, शिक्षा प्रणाली पवित्र बन गई है, ब्रह्मचारियों का सहवास पवित्र बन गया है तो जानों कि राजा का राष्ट्र सफलता के मार्ग पर जा रहा है। और यदि देखो, आचार्य, आचार संहिता विद्यालयों में नहीं बनी है, राजा का राष्ट्र उसे ऊँचा नही बना पा रहा है, क्रियाकलापों को पवित्र नहीं बना रहा है, तो जानों कि ये राष्ट्र की सूक्ष्मता कहलाती है। यह राष्ट्र की मृत्यु हो जाती है।

आधुनिक काल का राष्ट्र

आओ, अब मैं आधुनिक काल के राष्ट्र पर जाना चाहता हूँ, महाभारत काल के पश्चात् के राष्ट्रवादों में जाना चाहता हूँ। महाभारत का काल ऐसा दुर्भागी काल आया इस संसार में, जिस काल में बुद्धिमान और ओजस्वी और देखो, नाना प्रकार के आयुर्वेदाचार्य सबकी मृत्यु हो गई, सब चले गये। अब अन्धकार छा गया, अन्धकार के छाने पर,

यहाँ नाना प्रकार के देखो, रूढ़िवाद, नाना प्रकार के मतों का, एक विचार उत्पन्न होने लगा, क्योंकि प्रथम हमारे यहाँ देखो, महाभारत काल के पश्चात्, इस पृथ्वी पर सबसे प्रथम देखो, पारसियों का काल आया, यहूदी काल आया, बौद्धकाल आया, जैन काल आया। जैन काल के पश्चात् और नाना प्रकार के रूढ़िवादी बने, परमात्मा के नामों पर रूढ़ियां बनने लगी। जब रूढियां बनी, मानो देखो, तो जब मैं यह विचारता हूँ कि ईसा के मानने वालों ने, या यहूदी के मानने वालों ने एक मानो देखो, अपना कर्म बनाया विचारों का, और क्या कर्म बनाया? सृष्टि का प्रारम्भ लिया और मानव जीवन की उत्पत्ति ली। और मानव जीवन की उत्पति उन्होंने एक आदम से ले ली, जब एक मानव से उत्पति ले ली और एक देवी का निर्माण कहाँ से किया, उन्होंने आदम के एक अस्थि से निर्माण स्वीकार किया। जब निर्माण स्वीकार किया तो इस प्रकार यहूदियों ने इस विचार को बनाया, अपनाया। इसी कर्म को हमारे ईसा वालों ने अपनाया, इसी विचार को देखो, मुहम्मद वादियों ने अपनाया। और अपना करके देखो, जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह उच्चारण कर रहे थे कि माता अपने गर्भस्थल में निर्माण करती है वह पंक्ति में विराजमान करा करके वह ब्रह्मचारियों को उपदेश देती तो उन आचार्यों ने मेरी पुत्रियों का ह्रास किया और एक अस्थि से मेरी पुत्री का देखो, जन्म उन्होंने सिद्ध किया। एक ही अस्थि से उसके जन्म उसके शरीर की उत्पत्ति मानी जाती है और उसके मानने के पश्चात् देखो, यह ईसा के मानने वालों ने, मुहम्मद के मानने वालों ने यह स्वीकार किया और मेरी पुत्रियों का तिरस्कार होना प्रारम्भ हुआ।

अज्ञान से विलासिता

उससे पूर्वकाल में यह हुआ कि वाममार्ग में जब अज्ञान आया, यहाँ वाममार्ग की उत्पत्ति हो गई। ब्राह्मण समाज ने, मैं सबको नहीं कहा करता हूँ, केवल स्वार्थवादियों ने आ करके मेरी पुत्रियों का तिरस्कार करना प्रारम्भ किया और तिरस्कार कैसे रूप में? उन्होंने कहा यज्ञ में अधिकार नहीं है देवी को, यज्ञ में अधिकार नहीं आहुति देने का और देखो, जब इस प्रकार का तिरस्कार हुआ, मानव समाज का तिरस्कार होने लगा।

उसका परिणाम यह हुआ कि इस मानव समाज में जो प्रभु की सम्पदा है, इसी समाज में द्रव्यपतियों का और द्रव्यहीनों का एक विभक्त समाज बन गया। वह समाज कैसे बना वह कुछ सवर्ण में परिवर्तित हो गएं और कुछ असवर्ण में परिवर्तित समाज बन गया। उस समाज ने सवर्ण समाज ने देखो, वह निर्धन प्राणियों के लिए नाना प्रकार के आक्रमण किए गए। उन आक्रमणों का परिणाम यह हुआ, कि आज देखो, उनमें रक्त की धाराओं का एक स्रोत्र बनता चला जा रहा है। आज मैं इस वाक् में नहीं जा रहा हूँ। यह सबसे प्रथम मानो जिन राजाओं ने ब्राह्मण समाज की पूजा की, स्वार्थी ब्राह्मणों की पूजा प्रारम्भ कर दी, योग्य ब्राह्मण समाज की पूजा नहीं की, इन अयोग्य ब्राह्मणों ने देखो, बुद्धिमान ब्राह्मणों का ह्रास किया और उन्होंने वाममार्ग की प्रथा ला करके और मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया, यज्ञ जैसे शुभकर्म में। जो मोक्ष पहली पगडण्डी है आचार्य कहते हैं क्या यह मोक्ष की पहली पगडंडी कहलाती है। द्वितीय पगडंडी, सात पगडंडी कहलाती है मोक्ष में जाने की। परन्तु सबसे प्रथम अहिंसा परमोधर्मः वह अग्नि को प्रदीप्त करके पूजन एक नृत्त बनाया, पूजन किया, उसमें मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। सबसे प्रथम इस समाज ने इस पृथ्वी मण्डल पर जो मांस एक प्रसाद के रूप में प्रदान किया, आज वही मांस प्रत्येक गृह में विद्यमान हो रहा है समाज के प्राणियों में। जब मैं इस प्रकार की वार्त्ता प्रगट करता हूँ, मैं यह कहता रहता हूँ। मेरी पुत्रियों का ह्रास हुआ और ह्रास यहाँ तक हुआ कि देवी सवर्ण जाति बनी और उसी जातीयता में देखो, निर्धन जातीयता बनी। उन निर्धन जातियों में भी देखो, विभाजन हो गया, सर्वणता में भी विभाजन हो गया। मानो देखो, उसमें मेरी पुत्रियों का देखो, ह्रास होने लगा। एक एक सवर्ण का जो द्रव्यपति बन गया, उसने मेरी पुत्रियों का मानो देखो, जैसे पग पग्नियां होती हैं जो पगों में चरण पादुका होती है, एक एक पाद में दो दो तीन तीन पादुका के रूप में, मेरी पुत्रियों का देखो, विलासिता का क्षेत्र बन गया। यही तो विलासिता का क्षेत्र बना। परन्तु देखो, अज्ञान आने पर, विलासिता का क्षेत्र बना करता है और विलासिता अज्ञान में होती है। विलासिता ज्ञान

में नहीं होती। विलासिता अन्धकार में होती है और प्रकाश में नहीं हुआ करती है। आज मैं देखो, पूज्यपाद गुरुदेव के वाक्यों को पुनरूक्ति दे रहा हूँ मैं अपने विचार प्रगट कर रहा हूँ, महाभारत काल के पश्चात् जो नाना प्रकार के रूढ़ियों में यह धर्म परमात्मा का ज्ञान बटने लगा, ज्ञान का विभाजन होने लगा, उसी का परिणाम यह हुआ कि आज का जो मानव समाज है, वह प्रत्येक मानव आहार दूसरे गर्भ को पान करने में प्रशंसा कर रहा है, दूसरे के देखो, रक्त को पान करने में अपना गौरव स्वीकार करता है और यह कहता है, यह आज का तो अस्तित्त्व है यही मानवीयता माना जाता है। आज का प्राणी यह कहता है। परन्तु देखो, यह मोहम्मद समाज वालों ने कहा कि यह जो देवियां हैं यह ऐसी हैं जैसे पृथ्वी हैं, यह पृथ्वी है। जैसे हम अन्न को उत्पन्न करने लगते हैं, इसी प्रकार यह सन्तान को जन्म देने वाली, जैसे एक हमारी कृषि का उद्गम है ऐसे ही देवियां हैं। परन्तु जब मुहम्मद के मानने वालों ने यह कहा तो इसमें देखो, रूढ़िवाद आ गया और गो में ह्रासता को चर्चा, यह समाज की, मेरी प्यारी माताओं का ह्रास होने से, मैं यह कहा करता हूँ समाज में यदि मुहम्मद जन्म न लेता, तो यह समाज में अज्ञान नहीं आ सकता था। आज इस प्रकार के वाक्यों की मैं इसलिए प्रगट कर रहा हूँ कि अज्ञानता का वह स्रोत है। माता का तिरस्कार करना यह कोई बुद्धिमानों का कर्त्तव्य नहीं है। परन्तु देखो, ईसा के मानने वाले इसी प्रकार के अज्ञान में है। उनका कुछ तो संकेत करें और उसका परिणाम यह हुआ कि जिस पातालपुरी में महाराजा अर्जुन का संस्कार हुआ, जिस पातालपुरी में भीष्म पितामह भ्रमण करते रहते थे और शिक्षा देते रहते थे अस्त्रों शस्त्रों की और ब्रह्मज्ञान की। आधुनिक जगत् में दृष्टिपात करता हूँ उन पातालपुरी राष्ट्रों में अपनी प्राचीन लगभग उन्नीस सौ वर्ष पूर्व का कोई साहित्य उनका प्राप्त नहीं होता, कोई संस्कृति प्राप्त नहीं हो सकी। इसीलिए वहाँ का प्राणी कहता है, ईसा के मानने वाले कहते हैं कि यह सृष्टि का जो प्रारम्भ है, कोई चार हजार वर्ष पुराना है, कोई कहता है इसको दस हजार वर्ष पुराना, परन्तु यह नहीं कहते विज्ञान का आश्रय ले करके, पृथ्वी की रज को ले करके, तो अरबों वर्ष पुरानी उत्पत्ति उसमें प्राप्त होती है। परन्तु देखो, इसको विचार वैज्ञानिकों ने तो किया किन्तु

आज का प्राणी ईसा को मानने वाला अपने ह्रास में परणित हो रहा है। परन्तु इसी प्रकार देखो, नाना प्रकार की रूढ़िवाद है। मैं इस रूढ़िवाद की चर्चा कर रहा हूँ। इतना इसमें अज्ञान आया है कि दूसरे प्राणियों को भक्षण करने के लिए तत्पर रहते है। इसी प्रकार आगे चल करके ईसा के मानने वालो, मुहम्मद के मानने वालों ने मेरी पुत्रियों का ह्रास किया और उनको एक एक अस्थि से बना उनको स्वीकार किया जबकि मानव के शरीर में 72 करोड़ 72 लाख 10 हजार 2 सौ दो नाड़ियां हैं, परन्तु देखो, उसमें मुख्य अस्थियां हैं 120 मुख्य मुख्य अस्थियां मानी जाती हैं। एक अस्थि से मेरी पुत्री का जन्म स्वीकार किया गया। यह कितने अज्ञान की उपलब्धि है, कितना अज्ञान आया है इस समाज में।

आज मैं इस वाक् को इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ, क्या समाज को जानकारी होनी चाहिए। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को परिचय कराना चाहता हूँ, इस प्रकार का मानो क्रियाकलाप मानव समाज में होता रहा है। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराना चाहता हूँ। आज जो मेरी प्यारी माताओं को देखो, विद्या का अध्ययन करना है, वेद का अध्ययन करना है, आयुर्वेद का अध्ययन करना है, आयुर्वेद ही माताओं के समीप होना चाहिए। माता जानती है कौन सी औषधि किस अमुक माह में हम प्रदान कर सकते हैं, इसीलिए आयुर्वेद माताओं के द्वारा होना चाहिए, जो प्रायः अतीत के काल में रहा है माताओं के द्वारा। परन्तु देखो, वह मध्यकाल में भी हुआ है। नाना प्रकार के मत मतान्तरों का परिणाम यह हुआ और वाममार्ग का कि मेरी पुत्रियों को देखो, अज्ञानता में परणित कर दिया और शिक्षा से वंचित्त कर दिया। उसका परिणाम यह हुआ कि मानव समाज एक अज्ञानता के स्थली पर विद्यमान है। अज्ञान देखो, अविचारक पद्धति को अपनाने चला है, इसी प्रकार आज मैं यह वाक् प्रगट करने जा रहा हूँ, जब मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करता हूँ और विद्यालयों की चर्चा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने की है, यह जो वानप्रस्थ काल की शिक्षा का एक स्रोत्र है, यह महाभारत काल के

पूर्व ही समाप्त होने से बना है। महाभरत काल के पश्चात यह प्रणाली कुछ कुछ रही।

द्वेष भाव से शिक्षा

जिस समय महाभारत के काल में ब्रह्मचारियों को अध्ययन कराना था और उस समय पितामह भीष्म अपने गुरु परशुराम के द्वार ले गए, ब्रह्मचारियों को, उन्होंने कहा भगवन्! मेरे पूज्यपाद इन्हें शिक्षा दीजिए। उन्होंने जब उनके मस्तिष्कों का अध्ययन किया आयुर्वेदिक के आधार पर जन मस्तिष्कों का अध्ययन किया तो उसमें से विक्रम और पांचों पांडव और ब्रह्मे सात राजकुमार ऐसे प्राप्त हुए जो इस धनुर्विद्या में पारायण हो करके वह योग्य बन सकते थे। अहा! उस समय पितामह भीष्म से कहा, हे देवव्रत! हे ब्रह्मचारी! तुम्हारे इतने ब्रह्मचारी सात हैं, इन्हें मैं विद्या प्रदान कर सकता हूँ। उन्होंने कहा भगवन्! यह दुर्योधन इत्यादि, उन्होंने कहा यह योग्य नहीं है। यह शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, यह मल्लयुद्ध कर सकते हैं, परन्तु देखो, उसका सदुपयोग नहीं कर सकते हैं। जो विद्या को प्राप्त करके उसका सदुपयोग नहीं कर सकते है। जो विद्या को प्राप्त करके, उसका दुरूपयोग करता है वह आचार्य को और ब्रह्मचारी को दोनों को रसातल में ले जाता है। इसलिए मैं इन ब्रह्मचारियों को यह शिक्षा प्रदान नहीं कर सकता। उन्होंने यह वाक् स्वीकार नहीं किया। यही वाक् द्रोणाचार्य ने अध्ययन तो कर लिया, स्वीकार भी कर लिया, अन्तरात्मा ने परन्तु द्रुपद से संग्राम की प्रणाली उनकी इच्छा बनी हुई थी। वह द्वेष में शिक्षा दी और उसका परिणाम यह हुआ कि महाभारत का क्षेत्र एक द्वेषी क्षेत्र बन गया। यदि द्रोणाचार्य द्वेषी नहीं होते, प्रतिज्ञाबद्ध, नहीं होते, द्रोण से, द्रोण जब द्रुपद से प्रतिज्ञा करके आए कि तेरी मुक्तिता मेरे द्वार पर होगी, यही द्वेष की भावना महाभारत काल में अयोग्य को शिक्षा दी और अयोग्य योग्य का विचार न हो करके, महाभारत संग्राम का क्षेत्र बन गया। द्वेष का क्षेत्र बन गया, मेरी प्यारी माताओं के श्रृङ्गार का हनन होने लगा। परन्तु देखो, इसी का परिणाम यह है कि जो कुछ हो रहा है इसको मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन किया। उसी से वाममार्ग बनता है, उसी से नाना

प्रकार के देखो, यह रूढ़िवाद पनपा है संसार में।

पातालपुरी के राजा

महाभारत काल से पूर्व कोई साहित्य ऐसा प्राप्त नहीं होता जो परमात्मा के दर्शन के ऊपर, किसी प्रकार का विभाजन है। यह महाभारत काल के पश्चात् विभक्त क्रिया हमें प्राप्त होती रहती है। इन्हीं वाक्यों को उच्चारण करता रहता हूँ। यही विचारधारा जब मेरे हृदय में आती है, जिन गऊओं का हमारे राष्ट्र में पशुओं का पूजन होता है, उन पशुओं को आहार किया जाता है। उसके गर्भ में देखो, वाममार्ग समाज है, उसके गर्भ में राष्ट्र की प्रणाली होने का एक अद्भुत कृत्य माना गया है। वाममार्ग समाज ने यागों का तिरस्कार किया, जो भी मुहम्मद के मानने वाले आए, उन्होंने यागों के ऊपर आक्रमण किया, ईसा के मानने वाले आए, उन्होंने याग के ऊपर आक्रमण किया, **जिस पातालपुरी में उत्तानपाद का राष्ट्र सुशोभित होता था,** जहाँ के नारद मुनि थे। नारद और ध्रुव वह दोनों गुरु शिष्य की परम्परा से विज्ञान में प्रवेश हो करके, उनका यान सूर्यलोक में जहाँ उड़ान उड़ता हो, जहाँ ध्रुव की परिक्रमा करने वाला यान हो, **ऐसे जहाँ उत्तानपाद जो याग करते थे, ऐसे राष्ट्र में ईसा मसीह जैसों का जन्म हुआ** और अज्ञान छा गया और वह संस्कृति ही रसातल को चली गई। परिणाम क्या है? आज मैं इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ पातालपुरी की वार्त्ता देखो, अर्जुन का संस्कार हुआ, वहाँ की संस्कृति रसातल को चली गई। आज उसका मानव यह कहता है कि हमारी संस्कृति आनी चाहिए, कहाँ से आएगी, कहाँ है वह संस्कृति, सब रसातल को चली गई। परिणाम यह है कि जहाँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव हमारी वाणी जिस राष्ट्र में जा रही है, वहाँ राम की और कृष्ण की भूमि को यह विचारते हैं कि वहाँ संस्कृति प्राप्त हो जाए। यहाँ का राष्ट्रवाद पतित हो गया है, यहाँ का मानव समाज स्वार्थ में परणित हो करके दर्शन को समाप्त कर रहा है। परन्तु देखो, यह चर्चा तो कल ही प्रगट करूंगा, पूज्यपाद गुरुदेव मुझे समय दे ही देते हैं।

विचार विनिमय क्या है? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि देखो, मेरी पुत्रियों का तिरस्कार

हो रहा है। आज बालक को माता के गर्भ में ही माता उसे अशुद्धवाद प्रगट करती है, दाह करती है। देखो, जहाँ मेरी प्यारी माता मांस का भक्षण करना प्रारम्भ कर देती है, जैसे मुहम्मद के मानने वाले मांस का भक्षण करते हैं और उसे यह कहते हैं कि हमारे मजहब और धर्म में कहा जाता है, ईसा के मानने वाले ऐसा कहते हैं परन्तु देखो, मैं भोले प्राणियों से यह कहता हूँ हे माता! जब तू दाह दायक पदार्थों को पान करेगी, तो तेरे गर्भस्थल में जो शिशु है वह भी दाहवादी बनेगा, उसके हृदय में करुणा नहीं रहेगी। आज जिस माता के गर्भ में विद्यमान हो करके, माता क्रोधी बन रही है, पिता के, पति के अपशब्दों को सहन कर रही है, पति अपशब्द कह रहा है, पत्नी पति को अपशब्द कह रही है, वहाँ संतानों का कैसे महान् जन्म हो सकता है। वहाँ नहीं हो सकता, परन्तु देखो, वहाँ तो क्रूर द्वेष प्रवृत्ति पुत्रों का और पुत्रियों का जन्म होगा। जहाँ ब्रह्मचारियों की शिक्षा प्रदान नही की जाती, वाक् नहीं आता जहाँ मेरी प्यारी माता जहाँ मोहन भोगों को प्राप्त करती है, वहाँ देखो, मिट्टी के पदार्थों को, पृथ्वी के कणों को ले करके उन्हें पानकर रही है, कैसे सन्तान का जन्म पवित्र हो सकता है। मानो देखो, मैं बहुत से हेतु तो कल ही प्रगट करूंगा।

माता का सम्मान

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मैंने आपको यह वर्णन कराया है क्या देखो, यह समाज नाना प्रकार की रूढ़ियों में परिवर्तित हो रहा है। जब वैदिक साहित्य के ऊपर विचार करते हैं, मानव दर्शन के ऊपर विचार करते हैं, तो मेरी प्यारी माताओं का देखो, पूजन होना चाहिए। वह किसी भी रूढ़िवाद में हों माताओं का पूजन कैसे किया जाए? माता का पूजन यह है कि माता के प्रति अपशब्द नहीं आने चाहिए, माता को क्रूर नहीं रहना चाहिए और वह क्रूर जब रहती हैं जब उनके मनों की इच्छा पूर्ण नहीं हेती। माता को बाल्य काल में, ब्रह्मचर्य काल में विद्या होनी चाहिए, आयुर्वेद की विद्या, दर्शनों की विद्या। माता का जितना भी क्रियाकलाप है वह संकुचित हो जाएगा और जब यह बुद्धिमान नहीं रहेंगी, तो इनकी आवश्यकता मानो देखो, क्रूरता में परिवर्तित हो जाएगी।

विचार क्या वही क्रूरता, इस समाज को ऊँचा न बना करके मानव समाज का तिरस्कार हो जाएगा। राष्ट्रवादी उत्पन्न नहीं होंगे, परन्तु देखो, उसका परिणाम यह होगा, कि एक पंशली से मुझे एक उदधृत वाक् प्रगट हो गया।

एक समय मानो देखो, ईसा के मानने वाले, एक देवालय के पूजक थे। देवालय के पूजकों के भुजों में यह राष्ट्रवाद चला गया था। मानो देखो, एक देवी को देखो, पुजारी ने कुछ वाक् अपशब्द उच्चारण कर दिया और अपशब्द उचारण करने से, उस देवी ने, उस पर आक्रमण कर दिया और अपने मानो पगों की जो पादुका है वह उसके मुखार बिन्दु पर परणित कर दी। परणित करने से देखो, उसे अपमान प्रतीत हुआ कि इस देवी ने मेरा अपमान कर दिया। मानो वह जो उनकी विचारधारा थी, उन्होंने वह न्यायालय में प्रगट कर दी। जब न्यायालय में देवी से प्रश्न किया गया, देवी! तुमने इस देवालय के पुजारी पर आक्रमण किया? उन्होंने कहा भगवन्! मैं आक्रमण कैसे कर सकती हूँ, क्योंकि महात्मा ईसा ने, ईशु ने यह कहा है कि देवी जो एक अस्थि से इनका निर्माण हुआ है, एक अस्थि वाली कैसे सौ अस्थियों वाले पर आक्रमण कर सकती है? न्यायालय में जब यह वाक् आया, तो न्यायालय ने यह विचाराधीन शब्दों के ऊपर विचार किया और वहाँ देखो, उनकी याचिका समाप्त हो गई। उन्होंने कहा यदि यह वाक् तुम्हारे इसमें है तो अशुद्ध है, इसका शोधन किया जाएं।

तो ईसा के विचारों में वह इस प्रकार है, परन्तु न्यायालय में उसका बहिष्कार हो गया। तो परिणाम क्या है मानो देखो, इस प्रकार के जो विचार हैं ये समाज को हीनता की वेदी पर ले जाते हैं, हीनता की आभा में ले जाते हैं, परन्तु सृष्टि के प्रारम्भ से मानो देखो, एक ही बाबा आदम कहते हैं उसी से उत्पत्ति है।

हमारे यहाँ सृष्टि का काल ऐसा है कि सृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ तो मेरी पुत्रियां देखो, मानो अपने अपने योगाचार्यों की आभा से उत्पन्न हुई। यह वाक् मैं कल उच्चारण करूंगा क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे आज्ञा अब नहीं दे रहे है। विचार केवल यह है, क्या मैं यही उच्चारण करूंगा कि कल सृष्टि के प्रारम्भ में मानव की उत्पत्ति, वैदिक साहित्य में क्या स्वीकार करते हैं और यह नाना प्रकार के रूढ़िवादों में क्या स्वीकार करते हैं,

यह तो मैंने संक्षिप्त परिचय दे ही दिया है। पूज्यपाद गुरुदेव के और ऋषियों के मन्थन से यह वाक् उच्चारण किया जा सका है और मैं उच्चारण कर रहा हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव के यह चार गुण हैं जो राष्ट्रवाद जिनका निर्णय कर देता है, और वह वाक् प्रचलित हो जाता है। आज का राष्ट्र इनको यह कहता है यह पुरानी संस्कृति हो गई है, अरे, नवीनता क्या है संसार में? मैं यह जानना चाहता हूँ। अरे, जहाँ देखो, प्राचीनता ज्ञान, कोई प्राचीन नहीं होता, ज्ञान एक रस रहता है, राजा एक रस रहता है, चरित्र और मानव दर्शन एक रस रहता है। जब मानव चरित्र और मानवीयता एक रस रहती है, तो संस्कृति भी एक रस रहती है संसार में, परन्तु देखो, उसमें नवीन और वृद्धपन नहीं आया करता है। आज का मानव यह कहता है क्या संस्कृति को वृद्धपन आ गया है। अरे, भोले प्राणियों! तुम्हारे क्रियाकलापों में वृद्धपन आ गया है, संस्कृति ज्यों की त्यों रहती है। तो मेरे प्यारे! पूज्यपाद गुरुदेव आज का मानव समाज यह कहता है। ये चर्चाएं कल मुझे समय देंगे तो मैं प्रगट कर सकूंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी ने इस ब्रह्माण्ड की चर्चाएं की हैं और मानव के अदर्शन वाक् की चर्चाएं की हैं। इनका विचार, इनका मन्थन, इनका अध्ययन मुझे तो बड़ा प्रिय लग रहा है, परन्तु इनके वाक्यों में क्रूरता तो मुझे प्रतीत होती है। परन्तु क्रूरता के साथ में वाक् में सार्थकता प्रतीत होती है। यदि इस प्रकार का समाज, इस प्रकार का रूढ़िवाद समाज में है, तो यह समाज बुद्धिमानों का बनना चाहिए और इन वाक्यों का खण्डन करना चाहिए और खण्डन अपनी राष्ट्रीय स्थिति, में, ये राजा को करना चाहिए, यह विचार होना चाहिए।

तो आज का विचार अब यह समापन को जा रहा है। मेरे प्यारे! महानन्द जी का कल और हम विचार श्रवण कर सकेंगे। परन्तु आज का विचार क्या है, कि मेरे प्यारे! महानन्द जी ने बहुत सी अनोखी चर्चाएं की हैं, जो मानव अज्ञान में, अज्ञानता से सनी हुई है, अज्ञानता से गुथी हुई है। तो यह अज्ञान नहीं रहना चाहिए। हमारा वाक् तो वेद का वेदमन्त्र ज्ञान की चर्चा कर रहा है, अज्ञान की नहीं कर रहा है। विज्ञान की चर्चा कर रहा है और वह अंधकार की चर्चा नहीं कर रहा है। इसलिए प्रत्येक वेदमन्त्र उस

परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा है, उसके गुणों का गुणवादन कर रहा है और उसकी महिमा एक महानता में परणित रहती है। आज का यह विचार अब समाप्त होने वाला है। समय मिलेगा कल हम शेष चर्चाएं प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन।

१९ 14 03 1986 पुष्प 51 महानन्द जी द्वारा राष्ट्रीय समाधान

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय है। जो भी मानव उसका वरण कर लेता है, अथवा उसे वर लेता है वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है। इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र कहता है हे मानव! उसे तू अपना वरणीय बना, अपना वरणीय बना करके तू उसकी उपासना कर, क्योंकि वह तेरा उपास्य देव है, सृष्टि का नियन्ता है, निर्माण करने वाला है। तो आज हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का, अथवा उसके गुणों का गुणवादन करना प्रारम्भ करें और जो भी मानव उसका गुणवादन करता है। अथवा उसे अपने को, उसके गुणों को अपने में धारण करता है। जैसे परमपिता परमात्मा निरभिमानी है, इसीलिए मानव को भी निरभिमानी रहना चाहिए।

परमपिता परमात्मा व्यापक है मानव को भी अपने विचारों को व्यापक बनाना चाहिए, परमपिता परमात्मा विज्ञानवेत्ता है, अणु और परमाणु में निहित रहने वाले हैं, इसीलिए मानव को विज्ञानवेत्ता होना चाहिए। परमपिता परमात्मा आत्म स्वरूप है, इसीलिए मानव को भी आत्मवेत्ता बनना चाहिए। मानो वे सर्वत्र राष्ट्र के स्वामी हैं। वह राष्ट्रवेत्ता है, यह ब्रह्माण्ड रूपी राष्ट्र है उसको धारण कर रहा है, अथवा इसमें जो गति दे रहा है, वे परमपिता परमात्मा है। इसीलिए मानव को इस ब्रह्माण्ड की प्रतिभा को जानना चाहिए। मैंने तुम्हें कई कालों में, नाना प्रकार की वार्त्ताएं प्रगट करते हुए कहा था, कि विष्णु

ध्रुवा है, इसीलिए माता का नामोकरण भी विष्णु है। क्योंकि एक ही वाक् मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय दिया, विष्णु के सम्बन्ध में, कि विष्णु पालन करने वाला है। इसीलिए मानव को अपने जीवन की पालना करनी चाहिए। परमपिता परमात्मा ब्रह्माण्ड को, अपने में धारण कर रहा है। और वह इस ब्रह्माण्ड का सूत्र बना हुआ है, इसीलिए मुनिवरों! देखो, मानव के शरीर में यह जो आत्मा रहती है वह सूक्ष्म से ब्रह्माण्ड रूपी शरीर को अपने में धारण कर रहा है। तो इसीलिए धारयामि बनना चाहिए।

हमारे यहाँ तर्पण की बड़ी विशेषताएं आती हैं, मानव को तर्पयामि बनना चाहिए। तर्पयामि का अभिप्राय यह है तर्पण करना अपनी विचारधाराओं को व्यापक बनाना है। परन्तु आज मैं इन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ।

विचार केवल यह कि माता का नाम विष्णु है जो पालन करती है परमात्मा का नाम विष्णु है जो पालन करता है। सूर्य का नाम विष्णु है जो ऊर्ज्वा पालन कर रहा है। हमारे यहाँ विष्णु के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं, परन्तु आज मैं उन शब्दों की विवेचना नहीं करने जा रहा हूँ। बेटा! पुरातन काल हुआ जब, नाना ऋषि मुनियों की चर्चाएं की और उनका जो क्रियाकलाप होता रहा है, उस क्रियाकलापों की भी चर्चाएं की हैं। आज तुम्हें बेटा! उस क्षेत्र में ले जाना नहीं चाहता हूँ। मेरे पुत्र महानन्द जी मुझसे राष्ट्रवाद की चर्चाएं कर रहे थे, धर्म और मानव की चर्चा कर रहे थे, मेरी पुत्रियों की चर्चाएं कर रहे थे और महाराज अश्वपति के राष्ट्र का उदाहरण दे रहे थे। कहीं राम और अयोध्या के काल की चर्चाएं कर रहे थे। परन्तु आज उन्हें पुनः से समय प्रदान किया जा रहा है। वह अपने दो शब्द पुनः से उद्गीत गाने के लिए तत्पर हैं।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् यमा सर्वं भद्राणि विशिष्ठा रूद्राः वाचन्नमाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अथवा भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे। क्योंकि उनका एक एक जो शब्द है, वह गागर और सागर की आभा में निहित रहता है। परन्तु आज का हमारा वाक् है कि मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को नाना वार्त्ताएं प्रगट की है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव शिक्षा और दीक्षा की चर्चा करते रहते हैं, मानो शिक्षा कैसी हो? और दीक्षा कैसी हो, दोनों प्रकार की

चर्चाएं करते रहते हैं। आचार्य कैसा हो? और ब्रह्मचारी कैसा हो? माताएं कैसी हों? और पितरजन कैसे हों? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह बड़ी विचित्र वर्ताएं प्रगट करते रहते हैं। क्योंकि बहुत समय की स्मृतियां स्मरण शक्ति है नाना स्मृतियां जागरूक हो जाती हैं और उन स्मृतियों का अभिप्राय, उन स्मरण शक्ति से एक ब्रह्माण्ड की आभा की विस्तृति उत्पन्न हो जाती हैं।

अज्ञान में रूढ़ियां

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से, नाना प्रकार के रूढ़िवादों की चर्चाएं की हैं और नाना प्रकार की रूढ़ि महाभारत काल के पश्चात् इन रूढ़ियों का जन्म हुआ है और मुझे यह अनुभव रहा है कि संसार में जिस भी काल में रूढ़ियों का जन्म हुआ है उसके मूल में, उसके गर्भ में अज्ञान है क्योंकि रूढ़ियों का जन्म ही जब होता है जब अज्ञान की उत्पत्ति होती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कल बड़ा विचित्र वाक् प्रगट कर रहे थे, वह कह रहे थे कि परमात्मा निरभिमानी है, इसलिए मानव को भी निरभिमानी बनना चाहिए। कितना विचित्र वाक् है परन्तु आधुनिक काल में, वर्तमान के काल में, जिन्हें हम महापुरुष कहते हैं, अथवा जिन्हें हम सन्यस्थ कहते हैं, वे कहते हैं अहं ब्रह्मस्ति, हम तो ब्रह्म हैं। परन्तु मैं जब यह कहता हूँ कि तुम्हारे पिछरले भाग में क्या है, तो उसका उत्तर नहीं मिलता और जब उत्तर नहीं मिलता तो प्रश्न उत्पन्न होता है कि तुम ब्रह्म कैसे हो। जब तुम मानो अपने पिछरले भाग को नहीं जानते तो तुम ब्रह्म कैसे बन गए?।

अशुद्ध आहार से ह्रास

परन्तु यह भी वाक् नहीं, मैं पुरातनकाल की वार्त्ताओं में ले जाना चाहता हूँ। आधुनिक काल और वर्तमान काल, दोनों की जब मैं सन्तुलना करने लगता हूँ, तो मेरे हृदय में एक दाह की उत्पत्ति हो जाती है। जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, परम्परा के विद्यालयों में जब प्रवेश किया, तो पंक्तियों में ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मचारी विद्यमान हैं अहं ब्रह्मा वरणस्वति सुप्रजाः वह अपने में शुभकामना की कल्पना कर रहे हैं, अपने में वह महानता का दर्शन कर रहे हैं और लोक लोकान्तरों की उड़ानें उड़ रहे हैं। परन्तु जब

मैं आधुनिक काल के विद्यालयों में प्रवेश होता हूँ तो विद्यालयों में ब्रह्मचर्य का ह्रास हो रहा है। आधुनिक काल के विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, तो विद्यालयों में ब्रह्मचर्य का ह्रास क्यों हो रहा है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे प्रगट कराया कि विद्यालयों में वानप्रस्थी शिक्षा देने वाले नहीं रहे, क्योंकि युवा शिक्षा दे रहा है। उनके हृदय की जो तरंगें हैं, वह ब्रह्मचारियो के हृदयों में प्रवेश हो रही है। परन्तु उसके मूल में उनका आहार अशुद्ध बनने से, उनके व्यवहार में अशुद्ध तरंगें आने से मानो देखो, ब्रह्मचर्यव्रत का ह्रास हो गया। आज मैं कोई विशेष चर्चा नहीं करता। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अभी वानप्रस्थ क्यों नहीं रहा है? इसके मूल में स्वार्थवाद है, और वह स्वार्थवाद केवल राष्ट्रवाद के लिए है। वह स्वार्थवाद राष्ट्रवाद में निहित हैं। क्योंकि जब राजा के राष्ट्र में स्वाथर्वाद आ जाता है, ब्रह्म समाज में स्वार्थवाद आ जाता है, तो सबसे प्रथम विद्या का ह्रास हो जाता है। ये बहुत पुरातन परम्परागतों की चर्चाएं हैं, मैं आज उन क्षेत्रों में जाना चाहता हूँ। जब मैं माताओं के समीप जाता हूँ, तो वहां माता अश्वपति के राष्ट्र में, या भगवान राम के काल में या जब हम अपनी माताओं का स्मरण करने लगते हैं, तो आधुनिक काल की माताएं उससे विपरीत प्रतीत होती हैं। मानो देखो, बाल्यों को अशुद्ध शब्दों का प्रतिपादन करा रही है। यहां एक पङ्क्ति में विद्यमान हो करके पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि कागभुषुण्ड जी की माता एक पंक्ति में विद्यमान हो करके वेद का उद्घोष कर रही है। परन्तु मेरी पुत्रियों की, माताओं की, इसमें धृष्टता नहीं है, इसके मूल में जो धृष्टता है वह मानव समाज के अज्ञान की है। क्योंकि मानव समाज में महाभारत काल के पश्चात वाममार्ग समाज आया, जैन काल का भी कुछ राष्ट्र रहा है, परन्तु उन्होंने मेरी पुत्रियों का ह्रास करना प्रारम्भ किया।

रूढ़िवाद से भ्रष्टता

मैंने पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया कि जो भी यहाँ रूढ़िवादी बना, उन्होंने याग और माताओं के ऊपर आक्रमण किया। याग को उन्होंने भ्रष्ट किया है और माताओं के सतीत्व को हनन किया है। दो ही कारण रहे हैं इस संसार में, महाभारत

काल के पश्चात्, चाहे वह पारसी की परम्परा में आए हों, चाहे वह ईसा के मानने वाले हों, चाहे वह मुहम्मद के मानने वाले हों। परन्तु मैंने अभी अभी वर्णन किया कि सृष्टि के प्रारम्भ में मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज से बहुत पुरातन काल हुआ जब एक वाक् कहा था कि सृष्टि में मानव का जन्म कैसे हुआ।

सृष्टि सृजन का वैदिक स्वरूप

जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ, परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया, तो मानव समाज की उत्पत्ति कैसे हुई? मुनिवरों! देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया, क्या जिस समय यह ब्रह्मा की रात्रि और दिवस होता है, मानो प्रलय काल को ब्रह्मा की रात्रि कहते हैं और सृष्टि के एक कल्प को मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने वर्णन किया है कि उसे ब्रह्मा का दिवस कहते हैं दोनों दिवस और रात्रि इस को एक अहोरात्र कहते हैं। मानो देखो, यह सृष्टि के प्रारम्भ में पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया जब प्रलयकाल होती है तो कुछ आत्मा ऐसी होती है जो मोक्ष के निकट होती है, उनका मोक्ष नहीं हुआ, परन्तु कुछ आत्मा ऐसी होती हैं जो मोक्षवत् होती हैं। उनमें पुत्रियां, उनमें देवियां भी होती हैं, और पुरुष भी होते हैं जिन्होंने देवियों के शरीरों को धारण करके योगाभ्यास किया है, वह भी मोक्ष के निकट गई हैं और मानव भी मोक्ष के निकट गया है। मानव शरीर में, परन्तु जो मोक्ष के निकट होते हैं वह प्रकृति के प्रत्येक क्रियाकलाप को जानने वाले होते है। प्रकृति के एक एक परमाणु को जो गति कर रहा है जैसे अग्नि का परमाणु है, वह तेजोमयी है और जल का परमाणु अपने में वृत्तियाँ कहलाता है और पृथ्वी का परमाणु गुरूतव है और इन परमाणुओं को गति देने वाला वायु है और इनको स्थिर करने वाला अन्तरिक्ष है, जिसमें यह गति कर रहा है।

तो परिणाम यह होता है कि पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया क्या जब सृष्टि की रचना होती है और यह मानो शीतल होना प्रारम्भ होती है, तो प्राण सत्ता से यह स्थावर सृष्टि का जन्म होता है। उसके पश्चात् मानव समाज का जन्म हो जाता है और योगाभ्यास के कारण मानो वह युवावस्था में अपने परमाणुओं को, अपनी यौगिक क्रियाओं से अपने

शरीरों का निर्माण हो जाता है और वह जब निर्माण होता है तो युवापन में होता है। परन्तु देखो, इसी प्रकार वनस्पति के सहयोग से पृथ्वी की आभा से सबका मिश्रण हो करके और यह नाना प्रकार की और योनियां का जन्म हो जाता है। परन्तु देखो, मानव समाज का जो जन्म हुआ है वह योगाभ्यास व यौगिक परमाणुओं के द्वारा हुआ है, मानो देखो, युवा अवस्था में वह युवा हुए हैं। मानो देखो, वह आगे चल करके जो सृष्टि का कर्म है, मानो सहयोग है और देखो, बिन्दु की निर्धारितता उसी के आधार पर मानव समाज का, सृष्टि का आरम्भ हो जाता है। जब यह प्रारम्भ हो जाता है तो ऐसा माना जाता है। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक मान्यता तो यह प्रगट कराई।

सृष्टि सृजन की आधुनिकताएं

अब आधुनिक वर्तमान की मान्यताएं स्वीकार की जाएं, यहूदियों के काल में देखो, ईसा के काल में कुछ बुद्धिमानों का एक समूह विद्यमान हुआ। उन्होंने अन्न से इस मानव को अपनी परप्त वृत्तिता से इनको जानने की इच्छा प्रगट की। तो उन्होंने यह विचारा कि बाबा आदम हुए और बाबा आदम को मानो देखो, उसको बेहूत किया। उसको मानो देखो, एक आवेश में लाया गया और उसकी पंसली से मेरी पुत्री के जन्म को स्वीकार करते हैं। परन्तु यह तो वाक् यहूदी काल का रहा। इसी यहूदियों के मान्यताओं को स्वीकार करने वाले, ईसा के मानने वाले रहे और इसी वाक् को मुहम्मद के मानने वाले रहे। परन्तु देखो, इन वाक्यों को ले करके, यह समाज कुछ का कुछ बन गया। परन्तु देखो, एक महानता तो यह है कि एक पसली से मेरी पुत्री की रचना स्वीकार की जा रही है और एक महानता वह है कि योगीजनों में, जो मोक्ष के निकट है, जिन्हें सृष्टि कर्म की परमात्मा से प्रेरणा प्राप्त हुई, उसी से वह युवा बन करके सृष्टि का कर्म प्रारम्भ हुआ और मानो देखो, उसमें जो विज्ञान का जो तत्त्वावधान है, मानो वैज्ञानिक वाक्यों से यह वाक् यथार्थ माना जाता है कि कि युवा युवतियों का जन्म हुआ। यह वाक् तो वैज्ञानिक सिद्ध है। परन्तु देखो, एक पसली से या एक अस्थि से मेरी पुत्री का जो जन्म स्वीकार करते हैं, उससे अज्ञान का प्रादुर्भाव होता है, उसमें अज्ञान प्रतीत

होता है। जब हम देखो, वैज्ञानिक रूपों में प्रवेश करते हैं तो उसमें एक एक अज्ञान ऐसा दृष्टिपात आता है, जिसमें हम मानो मौन हो जाते है।
विचार विनिमय क्या? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन किया और आधुनिक काल के रूढ़िवाद की चर्चाएं कीं, परन्तु देखो, इसी आभा को ले करके वाममार्ग समाज के मानो दर्शनों में यह विचार आया और यह विचार लिया जैसे एक चने का दाना होता है परन्तु वह दो विभागों में रहता है और उसमें एक अंकुर होता है, उत्पन्न शक्ति वाला, जीवन शक्ति वाला तो ऐसा मानो देखो,उन्होंने देखो, वाममार्ग में उनकी विद्वानों से यह उपनिषदों में चर्चा चली। परन्तु यह वाक् मेरे विचारों में नहीं आया। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कहा क्या, ऐसा स्वीकार करते हैं कि देवियों का और मानव का जन्म ऐसे हुआ, जैसे चने का दाना होता है अथवा एक अंकुर होता है। तो यह वाक् विचारणीय दृष्टि से, दर्शनों की मीमांसा रही है। यह वाक् मेरे विचारों में नहीं आया। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मन्थन भी कराया, परन्तु यह वाक् हमारी दृष्टि में अमान्य पहुंच गया, अमान्य हो गया। क्योंकि देखो, युवा युवती अंकुर जो हैं, वह दोनों के मध्य में उसके पश्चात् भी रहता है। केवल देखो, अन्न का उदाहरण देने से, अन्न में जो वह अंकुर शक्ति होती है, वह जीवन शक्ति होती है ये स्वीकार तो किया जा सकता है, परन्तु देखो, उत्पत्ति काल ऐसा स्वीकार नहीं किया जा सकता। मानो देखो, हम अन्नाद् को ले करके, अन्नाद् को पान करते हैं उसमें जीवन शक्ति है, उसी जीवन शक्ति के आधार पर, हम अपने जीवन को ऊँचा बनाते हैं अथवा महान् बनाते हैं।
मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने कई काल में वर्णन कराया परन्तु यह वाक् यहूदियों की मान्यता रही है और यहूदियों की मान्यताएं, मानो देखो, ईसाकाल में ईसा के मानने वालों में गई, वही विचार मुहम्मद वादियों के विचारों में गया। परन्तु देखो, यह वाक् ऐसा प्रतीत होता है, जैसा एक मानो देखो, अज्ञान की सूक्ष्मता से इन वाक्यों की रचना हुई हो। परन्तु आगे चल करके इन वाममार्ग में ही इन वाक्यों को अपनाने का प्रयास किया। जैन काल आया, जैन काल भी महाभारत काल के पश्चात् स्वीकार करते है। परन्तु देखो, जैन काल की यह मानता रही है कि कृष्ण और देखो, बलदेव जी यह

दोनों जैनी कहे जाते हैं। परन्तु देखो, यह स्वीकार और उनकी मान्यताएं क्या कृष्ण जी नरक में हैं और देखो, बलराम वह स्वर्ग में हैं वहाँ स्वीकार करते हैं। परन्तु देखो, यह विचारा नहीं जाता, ये मान्यताएं किस अज्ञानता से इन शब्दों की रचना हुई है। वह कहते हैं राम नरक में है और लक्ष्मण स्वर्ग में है। जब यह मान्यताएं इनके जीवन की मुझे प्रतीत होती हैं तो इन भोले प्राणियों को यह प्रतीत नहीं कि नरक और स्वर्ग कहते किसे हैं? परन्तु यही नहीं माना गया है, मेरे विचार में यह आता है कि नरक कहते हैं जिस मानव का जीवन अपंग हो, जिस मानव के जीवन में अज्ञानता हो और जिस मानव के जीवन में अकर्त्तव्यवाद हो, वह नरक में चला जाता है। परन्तु देखो, जिस मानव के जीवन में केवल देखो, कर्मठता हो, महानता हो, सुदृढ़ता और दूसरों का सहयोग करने वाले हों और मान्यताओं में अपना विचार सामूहिक देने वाले उस मानव का जीवन स्वर्ग में रहता है। वह स्वर्गगामी बना करते हैं, परन्तु जो मानव इस अपंगवाद को त्याग करके, इस माया के, इस प्रकृतिवाद को परमाणुवाद को जानता जानता और वह एकोकी चरण में चला जाता है और प्रकृति के मण्डल को त्याग करके, वह मण्डल मुक्त हो करके वह परमात्मा के राष्ट्र में चला जाता है वह उसको आत्मवेत्ता कहते हैं। यह आत्मवेत्ता है, आत्मा में ही लीन रहने वाला है, वह मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण कर लेता है।

परन्तु देखो, मैंने यह वाक् इसलिए कहा क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे वर्णन कराते रहते है। परन्तु देखो, रही यह मान्यताएं, मेरे विचारों में प्रतीत नहीं होती, भगवान् कृष्ण का जीवन संसार में कर्मठता में रहा है और यह मूर्ख समाज उसको यह कहता है वह नरक में विद्यमान है। परन्तु यह पामरों की चर्चा नहीं तो और किसकी है, परन्तु देखो, राम जैसे सखा को जिन्होंने मानो देखो, अपने जीवन में महानता का क्रियाकलाप किया है, उसको वह नरक में कहते हैं। हनुमान जी को कहते हैं कि एक लोक में गया, तो सातवें लोक में है और मानो देखो, स्वर्ग में है। सातों लोक मानों उसके गुरूतव से

सातों लोक उसके नीचे दबे हों।

अज्ञानता में साहित्य

ऐसे ऐसे विचार जब स्मरण आते हैं, अरे, भोले प्राणियों! तुम वहीं तक सीमित रहो, जहाँ तक महात्मा महावीर ने तप किया है और तप करके, उन्होंने वेद का अध्ययन तो कराया नहीं, वेद की पोथी का अध्ययन नहीं कराया, उन्होंने अपने मनमाने विचारों को ले करके मानो तुम्हें अपंग बना दिया, तुम्हें याग से दूरी कर दिया। महात्मा बुद्ध ने वही किया, तपस्या का जहाँ तक प्रसंग है वह यथार्थ है, तपस्या उनकी बड़ी विचित्र रही है, परन्तु देखो, जहाँ उन्होंने कहा, अहिंसा परमोधर्मः अरे, वेद के अहिंसा परमोधर्मः को न जान करके, इस संसार को, भारत भूमि को जहाँ उन्होंने जन्म लिया उसको मानो देखो, मुहम्मद के मानने वाले, ईसा के मानने वालों के अधीन बना दिया। मानो देखो, ये सब महात्मा बुद्ध की रचना थी। विचार आता है जो वेद के अहिंसा परमोधर्मः को स्वीकार कर लेते, वेद की पोथी का निर्माण करना वेद की पोथी से अपने समाज का निर्माण करते, तो यह समाज पवित्र बन जाता। मैं इन अज्ञानता की चर्चाएं नहीं करना चाहता हूँ, केवल यह कि वेद को मानव ने याग और वेद के ऊपर आक्रमण किया, मेरी पुत्रियों के ऊपर आक्रमण किया, नाना रूढ़िवादी आए, तो माता को नरक का द्वार उच्चारण किया और कैसे कैसे उन्होंने उदधृत विचार दिए हैं।

साहित्य का दूषित रूप

ऐसे ऐसे विचार कि महाभारत काल को मानो देखो, उस पोथी को दूषित कर दिया और कैसा दूषित किया। माता कुन्ती का जीवन कितना विचित्र माना जाता है, एक स्थान में तो माता कुन्ती और तारा इनको कन्या के तुल्य माना जाता है, मन्दोदरी भी उसी में आती है और देखो, जब उनके जीवन की गाथा गाते हैं वह कैसी अभद्र है क्या मानो वह कहते हैं कि देवताजन आते थे, उनसे आलिंगन करके, वह संतान देती रहती थी। परन्तु देखो, यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि जो पवन देवता है जो संसार में प्राण बन करके रहता है, जो इन्द्र मानो विद्युत बन करके रहता है, जो धर्म मानव

की प्रत्येक इन्द्रियों का सजातीय विचार है, सजातीय बना दिया इन्द्रियों को, परन्तु वह आ करके, आह्वान मन्त्र उच्चारण करती, वह धर्म आता आलिंगन करता, उससे धर्मराज की उत्पत्ति और देखो, इन्द्र से अर्जुन की उत्पत्ति और अश्वनी कुमारों से मानो देखो, नकुल और सहदेव की उत्पत्ति, पवन से भीम की उत्पत्ति मानी जाती है। वाह रे, कैसा जगत् बन गया, कैसा साहित्य दूषित किया है? और यह उदाहरण दिया कि पांडु को पांडुरोग, और रुग्ण के कारण मानो संतान के सुयोग्य नहीं था। परन्तु यह नहीं माना जा सकता। यह मुझे इन मान्यताओं को जब मैंने इस संसार को पुरातन काल में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे एक समय बहुत पुरातन काल हुआ, जब उस काल का भ्रमण किया, मानो देखो, पांडु रोग नहीं वह मृत्यु को प्राप्त हो गए, परन्तु पांच संतानों को जन्म दे गए थे। पांच संतानों को जन्म दिया, उसके पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हुए, परन्तु देखो, ऐसा विचार आता रहता है हमारे यहाँ पुरातन काल में और भी नाना इस प्रकार की मान्यताएं है। इन मान्यताओं का मैं खण्डन किया करता हूँ। खण्डन ही नहीं उनका मण्डन भी किया जाता है। माता कुन्ती के गर्भ में जब अर्जुन आ गए, तो इन्द्र की तपस्या कर रही है, इन्द्र देवता की विद्युत की तपस्या कर रही है, इन्द्र वायु है। हे देवताजनों! मेरे गर्भ से इन्द्र के पराक्रमों वाले पुत्र का जन्म हो। जब भीम गर्भ में हैं जैसे पवन कौशल हैं वह किसी से भी रुष्ट नहीं कर पाती, यह प्राण मानों एक सखा है, निस्वार्थ है। इस प्रकार वायु की उपासना, करना पवन की उपासना करना, उसके पवन पुत्र का जन्म हुआ। मानो यह तपस्या का प्रतिशोध है। पाण्डु जब देवी के समीप, वह भी तपस्वी थे, जहाँ बिन्दु प्रवेश हुआ देवता रक्षा करने पहुंचे, माता का विचार उसी प्रकार का बन गया, सम्भवं मानो देखो, वह ब्रह्मः धर्मा ब्रह्माः जब वह धर्मराज माता के गर्भस्थल में बिन्दु रूप में शिशु आए, तो माता धर्म का निर्माण करने लगी, धर्म की चर्चा करने लगी। माता के नेत्रों में धर्म समाने लगा, तो उन्हीं तरंगों से बालक का जन्म हुआ। तो मानो देखो, यह मण्डन का एक विषय है। अश्वनी कुमार उनकी तपस्या माता कर रही है, कुन्ती, माद्री से तप करा रही है, दोनों अश्वनी कुमार जो विशाल वैद्यराज माने जाते हैं उनके गुणों का आयुर्वेद में से लेती रहती, अध्ययन कराती रहती

और माता माद्री को शिक्षा दे करके मानो दोनों राजकुमारों का जन्म हुआ। तो विचार तो मानो ये तो इसका मण्डन है और यह खण्डन है कि मन्त्र से देवता आते, आलिंगन करके चले जाते, यह मेरे विचार में नहीं आ पा रहा। जबकि विद्या का जो एक अंकुर है, वह यह कह रहा है कि जिस विद्या की तुम उपासना करोगे, ये विद्याएं तुम्हारे समीप आ जाएगी। परन्तु रहा यह वाक् कि हम यह स्वीकार करें कि अपने में किस प्रकार अपने जीवन को महान् बनाएं इसके ऊपर देखो, प्रत्येक मेरी माता का जीवन है, क्योंकि माताओं का आयुर्वेद का अध्ययन करना चाहिए। महाभारत काल के पश्चात् मेरी प्यारी माता, पुत्रियों का ह्रास किया गया और इनको निकृष्टता से दृष्टिपात किया। उसके मूल में कौन है एक वाममार्ग है, उसके मूल में नाना प्रकार के धर्म के ऊपर रूढियां कही जाती हैं। मुहम्मद के मानने वालों ने देवियों का तिरस्कार किया और देखो, यही विचार यहूदियों में पहुंचा, यही विचार ईसा मसीह के विचारों में चला गया। परन्तु देखो, मेरी पुत्रियों का ह्रास और याग के ऊपर आक्रमण हुआ।

सबसे प्रथम महाभारत के काल से पूर्व कोई हिंसा प्रवृत्ति नहीं थी राष्ट्र में भी। जब महाभारत काल के पश्चात् वाममार्ग ने विद्या को न जान करके, चक्षुम्मे शुन्धामि, प्राणम्मे शुन्धामि और देखो, यह प्रत्येक इन्द्रियों की शुन्धामि के वाक्यों को ले करके वह उन्होंने देखो, यागों में मांस की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया। यहाँ याग का ह्रास हुआ, ह्रास होने के पश्चात् अश्वमेध याग में अश्व की घोड़े की आहुति देना अजामेध में बकरी के मांस की आहुति देना, कन्या याग में कन्या के अंगों की आहुति देना। परन्तु देखो, जब इस प्रकार की अंगम् प्रवृत्ति बन गई, तो मानो देखो, ऐसा प्रतीत हुआ है मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया कि इसी वाक् को ले करके बुद्ध ने अपने मार्ग को दूरी पर दूरी जाना, परन्तु उन्होंने अध्ययन नहीं किया। देखो, महावीर ने भी अपने मार्ग को द्वितीय अपनाया और वाममार्ग ने उनकी अवहेलना नहीं की। उसका परिणाम यागों का भ्रष्ट होना ही मांसों की आहुति देना, यहाँ तक चला आया। इस काल में जो वर्तमान का काल पृथ्वी मण्डल का है इसमें से सौ में से पिच्यानवें प्राणी हैं जो देखो, मांस का भक्षण करने वाले है। उसी का परिणाम है परन्तु देखो, महाभारत के काल में ये प्रवृत्तियां

उत्पन्न हो गई थी। परन्तु महाभारत के काल में पचानवें प्राणी ऐसे थे जो अहिंसा परमोधर्मः का पालन और देखो, पांच प्राणी ऐसे थे जो मांस का भक्षण करते थे। राम के काल में प्रत्येक गृह में यागों की घोषणा थी। राम के काल में देखो, हिंसक प्राणी नहीं था। रावण के काल में लंकापुरी में, जो रावण का काल था उसमें हिंसा प्रवृत्ति नहीं थी। उसमें हिंसक प्राणी नहीं था। आधुनिक काल के प्राणियों में, मांस के भक्षण करने वालों ने राम के काल में, मीन देखो, मछलियों का वर्णन किया गया है, और देखो, रावण के भ्राता कुम्भकरण को जब वह छह माह को निद्रा ले करके आते थे तो वहाँ देखो, प्राणियों का, पक्षियों का, इनके श्वास के साथ चले जाए ऐसा वर्णन है। परन्तु मेरे विचार में नहीं आता।

महर्षि भारद्वाज ऋषि के आश्रम में गमन

मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय भारद्वाज मुनि के आश्रम में आज्ञा दी थी कि जाओ पुत्र! तुम भारद्वाज मुनि के आश्रम में चले जाओ। मानो जब मैं भारद्वाज मुनि के आश्रम में चले जाओ। मानो जब मैं भारद्वाज मुनि के आश्रम में पहुंच गया तो भारद्वाज मुनि के यहाँ देखो, वहाँ महाराजा कुम्भकरण जिनका नाम सुनेत ब्रह्मचारी था वह अध्ययन कर रहे हैं और उन्होंने बारह बारह वर्ष के इस प्रकार के अनुष्ठान किए, जो गऊओं के दुग्ध का आहार करते थे, और दुग्ध का आहार करके वह गायत्री छन्दों में अपने को ले गए और वह छह माह तक देखो, भारद्वाज के विद्यालय में वह विज्ञान की शिक्षा लेते रहते थे और छः छः माह तक वह अज्ञातवास हो करके हिमालय की कन्दराओं में चले जाते थे, और छः छः माह आ करके लंका में विद्यालयों में, विश्वविद्यालयों में विज्ञान की शिक्षा देते थे ब्रह्मचारियों को। परन्तु जिसका जीवन इस प्रकार का आदर्शवादी हो, इस समाज में अपने स्वार्थपरता से अपने पूर्वजों के जीवन को भ्रष्ट कर दिया। परन्तु मेरे विचार में यह आता है कि यह समाज कहाँ जाएगा? मैं यह चिन्तित हो जाता हूँ। किसी किसी काल में कि यह समाज कहाँ जा करके इसकी

सीमा बन सकती है।

रावण कालीन विज्ञान

परन्तु देखो, यहाँ राजा रावण का जीवन कितना प्रिय था। उनके जीवन में दर्शनों का अध्ययन करना, मानवता की मानवीयता उनके समीप रहती थी। परन्तु विज्ञान कितना विशल था। आधुनिक काल का वैज्ञानिक तो चन्द्रमा की यात्रा कर पाया है और रावण के काल में पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया, मुझे दृष्टिपात भी है कि एक यान इनके आश्रम से उड़ान उड़ करके और बहतर लोकों में भ्रमण करके वह यान लंका में पुनः आ रहा है। इस प्रकार का विज्ञान आधुनिक काल का विज्ञान अब तक ईकाई में नहीं पहुंच पाया, ईकाई में भी नहीं गया है। परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान मृत्यु यन्त्रों का निर्माण करता चला जा रहा है। आज के विज्ञान में मानव के जीवन का कोई यन्त्र का निर्माण अब तक नहीं हो पाया है। परन्तु देखो, मैंने बहुत वाक् पुरातन काल में भी प्रकट किए हैं।

आधुनिक काल में स्वार्थवाद

परन्तु आधुनिक काल का जो विज्ञान है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आज मैं वैज्ञानिकों की चर्चा करूं तो बड़ा विचित्र असुक्तियां होगी और मैं उन वाक्यों को स्वीकार करता हूँ। इन वाक्यों के उच्चारण करने में पुरातन काल का विज्ञान कहता है कि मानव का निर्भयता रहनी चाहिए, मानव को अवृत्त रहना चाहिए। आधुनिक काल का विज्ञान यह कहता है कि मानव को भयभीत बना करके, उन्हें त्रास दे करके और मानव समाज अपने में, अरे, कैसा निकृष्ट बन गया है। मानव मानव के भयभीत हो रहा है। इसके मूल में क्या है? इसके मूल में विज्ञान है, इसके मूल में अज्ञान है। इसीलिए अज्ञान को और देखो, इसको त्यागने का प्रयास करो। आज मैं इन वाक्यों में विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने आज्ञा दी है, आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है, जब मैं आधुनिक काल के राष्ट्रवाद में प्रवेश होता हूँ आधुनिक काल का राष्ट्र कैसा है? मानो देखो, आधुनिक काल का राष्ट्र स्वार्थवादी

है, स्वार्थ में व्याप्त हो रहा है, स्वार्थ में रत्त हो रहा है। अरे, यह राष्ट्र स्वार्थवाद नहीं होता है। राष्ट्र तो इसलिए होता है कि राजा के राष्ट्र में प्रजा अपने कर्त्तव्य का पालन करें, राजा स्वयं कर्त्तव्य का पालन करे और जब राजा देखो, प्रजा के श्रृङ्गार को हनन करके, उनके द्रव्यों को हनन करके अपना स्वयं लखपति बनता है, और वह कहता है कि मैं राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता हूँ यह असम्भव है। वह राष्ट्र ऊँचा नहीं बना करता है। राष्ट्र ऊँचा जब बनता है जब राजा अहिंसा परमोधर्मी हो। जो राजा बन करके देखो, यही सूक्ष्म सूक्ष्म प्राणियों को ले करके उन्हें अग्नि में तपा करके, उनका रस बना करके वह पान करके अपने आसन को त्यागता है, तो राष्ट्र में राम राज्य की कल्पना कर रहा है यह असम्भव है। मानो यह ऐसा एक विचित्र वाक् है कि वह अपने वेद और संस्कृति के ऊपर एक आक्रमण होता है और उसी आक्रमण से मानव समाज अपने में तिरस्कारित हो रहा है।

आज मैं विचार देने के लिए विशेष नहीं आया हूँ। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया है क्या हे प्रभु! यह जो राष्ट्र है मेरी प्यारी माताओं की जो शिक्षा प्रणाली है या मानवीय प्रणाली है यह बड़ी भ्रष्ट है। आज का प्राणी जो है, राजा को देखो, शिक्षा में उस द्रव्य को देता है। पुरातनकाल का राष्ट्र तो राष्ट्र को शिक्षा में उस द्रव्य को देता था जो अहिंसा परमोधर्मः से सना हुआ हो, जो हिंसक न हो। आज का प्राणी एक का दो बनाता है और दो के चार बनाता है। उस चार वाले द्रव्य को शिक्षा प्रणाली में परणित कर रहा है। वह कैसे मस्तिष्क का निर्माण हो, यह विचार नहीं आ रहा है। माता कौशल्या निर्माण कर रही है, गर्भस्थल में निर्माण हो रहा है। माता मल्दालसा निर्माण कर रही है गर्भ में देखो, स्वयं कला कौशल कर रही है। आज मेरी प्यारी माता नाना प्रकार के अशुद्ध द्रव्यों से निर्माण किया जाता है। यह बाल्य कदापि नहीं, जिस प्रणाली से जिसका जन्म होता है, वह उसी प्रणाली को नष्ट कर देता है। यह सिद्धान्त है प्रकृति का, कि जो माता जिस भावना से बालक को जन्म देती है यदि वह अशुद्ध आहार से करेगी, तो वह बालक अपने में रजोगुणी बन करके माताओं के श्रृङ्गार को हनन करने वाला बनेगा। परन्तु देखो, जो राजा इस प्रकार आज के राष्ट्र की जो पद्धति है वह

कोई महान् पद्धति नहीं है। उसको मैं महान नहीं कहा करता हूँ। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराया कि मूर्खों के समाज से, पामरों के समाज से चुना हुआ जो राजा होता है, वह भी एक पामर कोटि में कहा जाता है। परन्तु उस राजा को कदापि नहीं देखो,। मुझे स्मरण है जब यहाँ महाराजा अज का निधन हो गया था तो दशरथ को राष्ट्रीय अयोध्या का राजा बनाना था। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! हम भी मानो विद्यालयों को त्याग करके चले गए, ब्रह्मचारी व्रतेन्तु इत्यादि भी और देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज इत्यादि, हिमालय से आए महाराजा शिव आए और उनका निर्माण, जब एक सभा हुई और देखो, जब दशरथ का निर्वाचन होने लगा, तो मस्तिष्क का अध्ययन किया गया और निर्माणवेत्तओं ने, बुद्धिमानों ने, वेद के मर्म जानने वालों ने, योगियों ने, भयंकर बनों से आ करके राष्ट्र का निर्माण किया। अरे, वही तो राजा महापुरुषों की सेवा कर सकता है और जो पामर प्राणियों का अज्ञानी अपठित प्राणियों का चुनौती किया हुआ राजा राजा बनेगा, वह मानो देखो, महापुरुषों की सेवा नहीं कर सकता वह अपने राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणियों को जन्म नहीं दे सकता। वह उनको उस कोटि में परणित नहीं कर सकता। यह हमारे यहाँ चुनौती की प्रणाली परम्परागतों से मानी गई है। परन्तु बुद्धिमानों के द्वारा, योगियों के द्वारा, जो निष्पक्ष हो, उनके द्वारा राष्ट्र का निर्माण होना चाहिए और जब राष्ट्र का निर्माण केवल जातीयता पर होगा और भी निकृत्तियों से होगा तो यह ऊर्ध्वा में नहीं ले जा सकते। यह समाज को चरित्र और मानवता नहीं दे सकता।

राजा का कर्त्तव्य

देखो, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराया है, और यह कहा है हे पूज्यपाद गुरुदेव! यह जो मानव समाज है ये ऊँचा कैसे बनेगा? आज भी मैं इसका निराकरण दिए देता हूँ। मैंने बहुत पुरातन काल में यह वाक् प्रगट किया था। पुनः जितने भी रूढ़िवादी आचार्य हैं, रूढ़िवादियों में जितने आचार्य हैं, वेद के आचार्य हैं, इनका एक समूह एक स्थली पर विद्यमान हो जाने चाहिए। एक स्थली पर विद्यमान हो करके राजा

को वेद का अध्ययन, उपनिषदों का अध्ययन करना चाहिए और ब्रह्मवेत्ता बन करके इनके मध्य में विराजमान हो करके इनका शास्त्रार्थ होना चाहिए और जब इनका शास्त्रार्थ हो और जो विज्ञान और मानवीय दर्शन से जो भी जिस रूढ़िवाद का विचार आ जाए, मानो देखो, उसी संस्कृति को अपनाना चाहिए। यह देखो, राष्ट्र की एक राष्ट्रीयता कही जाती है। परन्तु यदि राष्ट्रीयता को एक सूत्र में लाना है, तो यह विचार देखो, स्वीकार करने होंगे, अन्यथा देखो, यहाँ एक दूसरा प्राणी इस धर्म के नामों पर, परमात्मा के नामों पर, स्वार्थ की वेदी पर आ करके प्राणी प्राणी को नष्ट करता रहेगा। परन्तु देखो, राजा ऊँचा होगा, तो समाज ऊँचा बन सकेगा और जब राजा यह चाहता है कि प्रजा में संघर्ष होगा तो तेरा नामोकरण ऊँचा होगा, मानो तेरी चुनौती अच्छी बनेगी, तुझे राष्ट्रीयता प्राप्त हो गई। अरे, मानव! तेरी आत्मा तो तेरे राष्ट्र में रूढ़िवाद में जब संघर्ष हो गया तो तेरा आत्मा तो वहीं मृत्यु को प्राप्त हो गया। मानो देखो, जब मृत्यु को चला गया है तेरा जीवन कहां रहा है, जीवन तो तेरा उसमें हैं कि तेरे राष्ट्र में एक ही विचार वाला प्राणी रहना चाहिए, धर्म और दर्शनों की प्रतिभा का प्राणी रहना चाहिए, जो विज्ञान की आभा में नियुक्त हो जाए। उसी सिद्धान्त को अपनाना यह राष्ट्र का कर्त्तव्य माना जाता है। आज मैं देखो, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह निराकरण की चर्चा कर रहा हूँ। यदि राष्ट्र को ऊँचा बनाना हो तो इस प्रकार बन सकता है और यदि कहें कि नानक के मानने वाले हमें सहायता दे दें, मुहम्मद के मानने वाले सहायता दें मूर्ख बन करके और यदि यहूदी दें इसी प्रकार के विचारों में राजा लगा रहेगा तो एक समय वह आयेगा कि प्राणी प्राणी में देखो, रक्त की धाराओं का चलन उत्पन्न हो सकता है, होने जा रहा है, हो नहीं सकता, होने जा रहा है जो मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ।

हे राजन्! यदि तू ऊँचा बनना चाहता है तो तुझे प्रत्येक प्राणी की रक्षा करनी है। भगवान् मनु ने मछली की रक्षा की, क्योंकि मछली समुद्र में प्राणी की रक्षा कर रही है। वह आज का प्राणी गो को रक्षा में लगा हुआ है, प्राणियों की रक्षा में लगा हुआ है, परन्तु रक्षा नहीं हो पा रही। रक्षा करना चाहता है, रक्षा हो नहीं पा रही है। राष्ट्र के एक राष्ट्रीय समूह बन करके, राष्ट्र में देखो, राजा को अपशब्द कहने वाला बन जाता

है, इसलिए वह रक्षक होते ही उसका भक्षक हो जाता है।
तो यह विचार आज मैं इसलिए प्रगट कर रहा हूँ कि जो वर्तमान काल में हो रहा है, मैं पूज्यपाद गुरुदेव को इसका मैं निर्णय देता रहता हूँ समय समय पर। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा, क्योंकि मैंने अपने विचारों को बहुत ही प्रगट किया है। आज मैं अपने पूज्यपाद गरुदेव से यहीं विचारों का विराम देना चाहता हूँ। क्या हे प्राणियों! मेरे विचारों का अभिप्राय यह कि एक तो अपने पूर्वजों को, उस आभा उस कोटि में मत लाओ, जिस कोटि में आधुनिक समाज बना हुआ है। अपना जो साहित्य है उन साहित्यों को ऊँचा बनाने का प्रयास करो। उसके पश्चात् देखो, तुम्हारे यहाँ जो अपने पूर्वजों को किसी को पक्षी कहते हैं, किसी को गरुड़ कहते हैं, उनसे मानव के राष्ट्रों की चर्चाएं हो रही हैं वह तुम्हारी मीमांसाएं आगे चल करके अशुद्ध वाक् आते हैं। इसीलिए देखो, यह अशुद्धवाद न रह करके मानवीयता पवित्रता में रत्त रहना चाहिए आज अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा रहा हूँ। आज मैं वाक्यों को इसलिए उच्चारण कर रहा था क्योंकि मैंने इन विचारों को श्रवण किया है और उन्हें लाने का प्रयास किया है। अब पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा।
पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी ने राष्ट्रीय चर्चाएं प्रगट की। परम्परागतों से ही, राष्ट्रवाद की चर्चा इसी आभा में और इसी कोटि में निहित रही है परन्तु इनका विचार बड़ा मार्मिक और एकता के सूत्र में लाने का प्रयास है। परन्तु एकता के सूत्र में आना है और न आया जाएगा। तो जैसा महानन्द जी ने कहा यह अशुद्धम्भव। परन्तु आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा तो चर्चाएं प्रगट करेंगे आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन।

२० 15 03 1986 पुष्प 51 माताओं की महानता

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता

परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है। मानो वह सर्वत्र विद्यमान है, कोई स्थली ऐसी नहीं है, जहाँ वे परमपिता परमात्मा न हो। मानो वह सर्वत्र विद्यमान है, आज का हमारा वेदमन्त्र, हमें कुछ प्रेरणा दे रहा था और हमे यह प्रेरणा दे रहा था हे प्राणां ब्रह्मा वरणास्वस्ता हे मानव! तू संसार में जितने भी क्रियाकलाप कर रहा है, उन सर्वत्र क्रियाकलापों में मानो उस परमपिता परमात्मा की प्रेरणा से ही, संसार के नाना क्रियाकलापों को करता रहता है, उन क्रियाकलापों में रत्त रहता है। जितना भी ब्रह्माण्ड है और यह मानवीय जगत् है सर्वत्र ब्रह्माण्ड में एक प्राणी प्राणी से प्रेरणादायक है, वह प्रेरणा से ही प्रेरित हो रहा है, एक दूसरा प्राणी एक दूसरा मानव, मानव से प्रेरणा पा रहा है। एक एक वेदमन्त्र के ऊपर, विवेचना कर रहा है और वह विवेचना भी कोई प्रेरणा है। मानव उस प्रेरणा से प्रेरित हो करके, वह वेद की आभा में रत्त हो जाता है।

गौ मेध याग

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें यह उच्चारण कर रहा था कि हे मानव! तू गो मेघ याग करने का अधिकारी बन और तू गो मेघ याग कर। वेद का वाक्, गो मेघ याग के सम्बन्ध में बहुत ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ रहा है। गो नाम के पशु के रूप में उसका वर्णन किया गया है और द्वितीय रूपों में गो नाम इन्द्रियों के मानो वृत्तियों को गो मेध कहते हैं और गो मेध आगे चल करके, विचारों की रक्षा करने का नाम भी गो मेध याग है। तो बेटा! हमारे यहाँ याग के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की चर्चाएं होती रही हैं। परन्तु मानो एक न एक वाक्यों से ही याग के वाक्यों से प्रेरित होता रहता है और उस प्रेरणा को पा करके, मानव अपने में सजातीय बन जाता है। मुझे स्मरण आता रहता है जब मैं मानो एक बुद्धिमानों के काल में प्रवेश करता हूँ, और माताओं के उस क्षेत्र में प्रवेश करता हूँ जहाँ मेरी प्यारी माता गो मेध याग करती है। मानो गो मेध याग, जो गर्भ में शिशु है उसकी जो रक्षा हो रही है उसमें जो ज्ञान की तरंगे प्रवेश की जा रही है, वह भी एक गो मेध याग है, उसको निर्वाणाऽवति वाचक भी याग कहते हैं। परन्तु वेद का

वाक्, गो मेध याग की यह विवेचना कर रहा है। बेटा! हमारे यहाँ गो नाम का पशु है आयुर्वेद की दृष्टियों में वह गो नाम का पशु, हमें मानो प्रकार के दुग्ध आहार करा करके और पय को प्रदान करके उसकी मानो पालना कर रहा है, तो वह अपने में गो मेध याग है। परन्तु यागों का बड़ा विचित्र बड़ा विस्तृत विचार हमारे ऋषि मुनियों ने परम्परागतों से माना गया है। याग का अभिप्राय यह है कि मुनिवरों! देखो, गो नाम की इन्द्रियों की हमें रक्षा करनी है। जहाँ गो नाम के पशु का वर्णन आता है वहाँ गो नाम इन्द्रियों का भी वर्णन आता रहता है।

परन्तु आज मैं इन्द्रियों के सम्बन्ध में, कोई गंभीर विचार विनिमय देने वाला नहीं हूँ। केवल विचार यह कि हमारे यहाँ गो नाम के नाना पर्यायवाची माने जाते हैं।

आज मैं तुम्हें बेटा! गो मेध याग जो विद्यालय में होता है, मैं उस विद्यालय में जाना चाहता हूँ, जिन विद्यालयों में गो मेध याग मानो ब्रह्मचारी और आचार्य अपने आसन पर विद्यमान हो करके, जो याग हो रहा है, वह कहता है आचार्य हे ब्रह्मचारी! मुझे गो मेध याग करना है। ब्रह्मचारी कहता है प्रभु! मैं कैसे गो मेध याग करूं। उन्होने कहा गो मेध याग का अभिप्राय यह है कि अपनी इन्द्रियों को तुझे संयम में बनाना है। कोई ब्रह्मचारी को कहता है, तू गो मेध याग कर, तो याग का अभिप्राय यह कि पशु का पालन और पशु के संयम, बेटा! एक पशु जो बाह्य जगत् में है और एक पशु इन्द्रियों के रूप में विद्यमान हैं, दोनों पशुओं को मानो अपने नियन्त्रण में लाना ही तेरा गो मेध याग है। गो मेध याग की विवेचना करते हुए, आचार्य कहते हैं कि एक पंक्ति में ब्रह्मचारियों को विद्यमान करके, हे ब्रह्मचारियों! आओ, देखो, तुम गो मेध यागी बनो। ब्रह्मचारी प्रसन्न हो रहे है। वह कहते हैं महाराज गो मेध याग कराइए।

मुझे स्मरण आता रहता है नाना ऋषि मुनियों का वह काल जिस काल में विद्यमान हो करके मानव ऊँची ऊँची उड़ानें उड़ता है, विचित्र विचित्र प्रकार की उड़ानें उड़ता है, जिन उड़ान उड़ने वालों ने, बहुत ऊँचे ऊँचे अपने विचार दिए हैं। उन विचारों में आज मैं तुम्हें बेटा! ले जाना तो नहीं चाहता हूँ, परन्तु गो नाम हमारे यहाँ पृथ्वी को माना है। जब मानव पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करता है, तो वह गो मेधयाग कर रहा है और

वह गो मेघ याग करता हुआ अपने मानव जीवन को विचित्र और महानता की वेदी में लाने का प्रयास कर रहा है। तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार क्या कह रहा है? मेरे प्यारे! महानन्द जी ने इससे पूर्वकाल में, अपने ऐसे विचार दिए, जिन विचारों को हम श्रवण भी नहीं कर पा सकते, इन्होंने अपने विचारों में माताओं की इस विद्या का वर्णन किया, जिस विद्याओं में माता देवता की पूजा करती है, माताओं को देवताओं की पूजा करनी चाहिए और प्रातःकालीन याग करना चाहिए, प्रातःकालीन याग में परणित रहना चाहिए। मुझे स्मरण आता रहता है मैं जब उस काल में प्रवेश करता हूँ।

माता कुन्ती का तपस्वी जीवन

हमारे यहाँ मेरे पुत्र महानन्द जी ने इससे पूर्वकाल में प्रगट किया। उन्होंने द्वापर की वार्त्ता को लेते हुए कहा है, द्वापर के काल के शब्दों को ले करके उन्होंने कहा है कि हमारे यहाँ, देखो, राष्ट्रीयकरण में महाराजा शान्तनु का वर्णन आता रहता है, राजा शान्तनु की चर्चाएं आती रहती है, और उनकी देवी जो गंगोत्री थी उसकी भी चर्चाएं आती रहती थीं। मुझे महानन्द जी ने तो अपभ्रंश वार्त्ता का प्रगट किया है परन्तु मैं शुद्ध और विशुद्ध रूपों से उन्हें स्वीकार करता रहता हूँ और विचार यह दिया इन्होंने, कि गंगा के तट पर माता अपने ब्रह्मचारी को विद्या प्रदान कर रही है। एक ही वाक् नहीं है। कई कालों में मैंने तुम्हें प्रगट कराया है। हमारे यहाँ माताओं का इस संसार के ऊर्ध्वा बनाने में, गृहों को पवित्र बनाने में, राष्ट्र को ऊँचा बनाने में बड़ा सहयोग रहा है। उस सहयोग की चर्चाएं आज मैं तुम्हें करने वाला हूँ। माता कुन्ती अपनी स्थली पर विद्यमान रहती थी और माता कुन्ती जब मानो देखो, उसके गर्भस्थल में, एक समय महाराजा पांडु बोले कि हे देवी! मैं अपने विद्यालय में जब अध्ययन करता था और विद्यालय में जब मैं विचारधारा लेता रहता था तो कहीं मैंने देखा गृह वार्त्ताओं का अध्ययन किया है, गृह वृत्तियों का अध्ययन किया है कि हे देवी! मैं इस वाक् को स्वीकार करता हूँ, परन्तु आज मैं तुमसे ये जानने की इच्छा प्रगट कर रहा हूँ कि मैं यह अध्ययन किया है कि माता के गर्भस्थल में, जब शिशु का प्रवेश हो जाए। तो माता

को तपस्या करनी चाहिए। तो देवी! तुम तपस्वी बनो। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे भगवन्! हमने पुत्रयाग किया है हमारे यहाँ यागों का वर्णन करते हुए वैदिक साहित्य में बेटा! जितने भी शुभ कर्म हैं, जितने भी पिंड और ब्रह्माण्ड से मिलान करने वाले, जितने भी शब्दों को रचना होती है, उन सर्वत्र रचनाओं में मानो देखो, इस याग का वर्णन आता है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने परम्परागतों से ही, बेटा! एक वाक् बहुत प्रिय कहा है कि सर्वत्र विचारों को याग से उन्होने बेटा! कटिबद्ध किए हैं, याग से उनका समन्वय किया है। जैसे सूर्य की नाना प्रकार की जो किरणें हैं उन किरणों का समन्वय हमारे यहाँ इस पृथ्वी से होता है, पृथ्वी प्रेरणा पाती है सूर्य से और सूर्य अपने में मानो प्रकाशवान् है।

इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, वह अप्रतम् ब्रह्मा पुनः देखो, महाराजा देखो, महाराजा पाण्डु यह कहा करते थे उनका नाम ही पंडकेश्वर कहलाता था। मानो देखो, पंडकेश्वर नामक उनका नामोकरण था। परन्तु मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे प्रगट कराया था, इन्होंने वर्णन कराया कि वह पांडु रूग्ण में रहते थे। परन्तु पांड उनके यहाँ रूग्ण नहीं था, उनका पंडकेश्वर नामोकरण कहा जाता था। जो अपने में देखो, तपस्वी हो, पंडकेश्वर मानों जो पञ्चमहाभूतों को अच्छी प्रकार अंग और उपांगों से जानने वाला हो, उसका नामोकरण पंडकेश्वर कहा जाता है। देखो, पांडु का बाल्यकाल, का नाम श्वेतकेतु था, अहा बाल्यकाल का नाम श्वेतकेतु और विद्यालय में उनका नाम पंडकेश्वर नियुक्त किया गया परन्तु देखो, उनको पांडु नामों से उद्गीत गाने लगे। जब इस प्रकार का उद्गीत गाया जाने लगा तो कुछ मुझे ऐसा स्मरण है कि वही पंडकेश्वर अपने गृह में प्रवेश हुए और गृह में प्रवेश हो करके कुन्ती से तपस्विनी ब्रह्मवर्चोसि का पालन करने वाली ब्रह्मयागी जो पुरुष होते हैं उनमें बड़ी विचित्र एक विशेषताएं होती है। बेटा! वह पंडुकेश्वर देखो, दोनों अपने में बुद्धिमान थे, कुन्ती अपने में बुद्धिमान, जब गर्भ में शिशु का प्रवेश हुआ तो मानो देखो, सबसे प्रथम धर्मराज युधिष्ठिर का धर्मम्ब्रह्मः जो धर्म क मर्म को जानने वाले थे, उनका जब प्रवेश हुआ तो वह प्रत्येक इन्द्रिय को सजातीय बनाने लगी प्रत्येक इन्द्रिय को सजातीय बनाते हुए मानो धर्म में इन्द्रियों को पिरोने लगी और जो

भी अन्नाद् पान करती वह भी धर्म है। मानो धर्म किसे कहते हैं? धर्म कहते हैं, उन गुणों को अपनाने को जो उसमें इस प्रकार के गुण होते हैं जो धर्म है। धर्म कहते हैं जैसे वाणी का धर्म है, सत्य उच्चारण करना है और मुनिवरों! देखो, श्रोत्रों का धर्म सत्य को निहारना है और श्रोत्रों का धर्म ही सत्य को श्रवण करना है और इसी प्रकार त्वचा का धर्म क्या है? सम्भूति ब्रह्म लोकां हिरण्यं रथा वह अपने में एक महा पवित्रता की वेदी कही जाती है जब माता इस प्रकार प्राणम् मे प्राहि, चक्षुम्मे पाहि, प्राणम् मे पाहि, श्रोत्रों मे पाहि, और घ्राणं पाहि त्वचा में पाहि वह सब में धर्म ही देखता है। हे माता! जब तू अपने में इन इन्द्रियों में धर्म ही देखती रहती है तो मानो तेरे गर्भस्थल से धर्मराज पुत्र का जन्म होता है। मानो ये विद्या तू जानती है इसी प्रकार के मन्त्रों का अनुष्ठान करना और देखो, उसी प्रकार का आहार करना, आहार भी धर्म से पिरोया हुआ होना चाहिए, मानो देखो, राष्ट्रीय जो अन्नाद् है, वह हमें रसातल की वृत्तियों में ले जाता है परन्तु जो धर्म से पिरोया हुआ होता है वह यज्ञम्, वह अन्नाद् हमारे लिए पवित्र माना गया है।

मैं अपने पुत्र महानन्द जी के विचारों पर टिप्पणी तो देना नहीं चाहता हूँ, परन्तु विचार यह कि जो महाभारत काल में माताओं का कितना सहयोग रहा है। तो माता कुन्ती ने अपने में तपस्वी बन करके मानो पांचों पुत्रों को जन्म दिया। इसी प्रकार अग्रणीय बन करके मुनिवरों! आगे वेद का आचार्य कहता है, सम्भूति ब्रह्म वाचो देवं ब्रह्माः मेरे प्यारे! देखो, माताएं अपने में सहयोगी बन करके उसका उद्गीत गा रही है, उसकी आभा में परणित कर रही है जिससे हमारा जीवन, एक महानता की वेदी पर रत्त हो जाए। तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, माता कुन्ती इस विद्या को जानती थी, वह कैसे मानो प्रातःकालीन रात्रिकालीन कैसे अपने को तपस्या में ले जाए और अपने गर्भ के आत्मा से धर्म की गाथा प्रगट करने वाली हों। परन्तु देखो, मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने जैसा प्रगट कराया, कल इनके विचारों में, यह वाक् आ रहा था, ये विचार आ रहा था, उन विचारों में एक महावृत्तियां आ रही थी कि वह देवताओं का नियोग माना जाता है। देवां ब्रह्मा वृणां वृहे मानो वह देवताओं की चर्चा में रत्त रहा है, ऐसा मुझे स्मरण

कराया है। परतु मैं इन विचारों को नहीं दे रहा हूँ, केवल विचार यह है कि यह एक पुनः एक विद्या है, इस विद्या का अध्ययन करना, विचारों में लाना, महानता का दर्शन करना, एक मानवीयतव माना गया है।

लिंगन रहित आत्मा

परन्तु मेरे प्यारे! महानन्द जी ने एक वाक् बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रगट किया था कि सृष्टि की जब रचना हुई तो सृष्टि की रचना में इन्होंने एक वाक् कहा है कि कुछ मोक्ष के निकट आत्माएं, कुछ पुरुष और कुछ देवियां, मेरा अभिप्राय यह है कि यह जो आत्मा है मानो यह स्त्री और पुलिंग नहीं कहलातीं, यह आत्मा तो एक रस रहने वाली है, इसमें कोई लिंगन नहीं होता है। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने उसको लिंगन किया है, देखो, कुछ देवियां, कुछ माताओं की आत्माएं, कुछ पुरुष आत्माएं, परन्तु आत्मा पुरुष और देवी नहीं होती, आत्मा तो एक रस रहने वाला है। हां यह कह सकते हैं कि कुछ माताएं ऐसी हुई हैं जिन्होंने मोक्ष को प्राप्त किया है, कुछ माताएं ऐसी हुई हैं, जिन्होंने मोक्ष को लिया है। तो मेरे प्यारे! महानन्द जी का कथन यह है कि आधुनिक विद्वान या उससे पूर्व के विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि देवियों की मुक्ति न हो। परन्तु यह वाक् यथार्थ है जब उनका शरीर धारण है और वह जन्मदाता है, पुत्र को जन्म दे देती हैं तो इनका जीवन तो कोई महापुरुष उत्पन्न हो जाए तो माता का नामोकरण तो वैसे ही पवित्र बन गया।

माता कौशल्या पर रावण का आक्रमण

परन्तु मुझे स्मरण आता रहता है, माता मल्दाल्सा के जीवन की घटनाएं मैंने तुम्हें कई कालों में प्रगट की है और देखो, माता कुन्ती की चर्चा चल ही रही है कि जिस समय धर्मराज मानो कहीं उद्गीत हो करके और वह यशोगान गाते थे और वह कहते थे कि यह माता का मुझे सहयोग है, माता स्वर्ग में कैसे जाती है, यह आज मैं तुम्हें वाक् प्रकट करना चाहता हूँ कि माता स्वर्ग में नहीं, मोक्ष में कैसे चली जाती है। यह वाक् आता है देखो, विद्वानों ने यह कहा है कि यह माताएं पतित रहती हैं, इसलिए ये मोक्ष

नहीं जा सकती। यह वाक् उनका यथार्थ है कि माताएं पतित नहीं होती है। माताओं को पतित किया जाता है। मानो माताओं को पतित कैसे किया जाता है? मानव समाज में सदियों से मानो देखो, ये वाक् माना गया है कि इनके ऊपर नाना प्रकार का आक्रमण होता है, जैसा महानन्द जी ने कहा है। यह आक्रमण जो प्रणाली है। देखो, त्रेता के काल में भी कहीं कहीं उन पर आक्रमण हुआ है। मैं यह नहीं कहता हूँ कि आधुनिक काल में आक्रमण विशेष हुआ है, परन्तु उस काल में आक्रमण एक मानो अपवाद में माना गया है। जैसे हमारे यहाँ कौशल्या का देखो, राम के काल में जीवन आता है। माता कौशल्या का जो जीवन था बड़ा पवित्र और विदुषी जीवन था। राजा रावण ने कहीं यह जान लिया कि यह जो कौशल्या है, इसके गर्भ में तेरे मृत्यु के मूल का जन्म होगा। तो उस समय कौशल्या को उन्होंने राजा के यहाँ से, कौशल देश में जा करके राजा के यहां से कन्या को मानो एक आसन पर विद्यमान करके उसे देखो, एक संदूक वृत्तियों में बन्द करके और समुद्र में त्याग दिया था। जब समुद्र में त्याग दिया तो कैकेई और राजा दशरथ कहीं युद्ध में गएं और वह उन्हें प्राप्त हो गई। तो उसमें से वह राजा के यहाँ उस कन्या का आगमन हुआ और राजा दशरथ से उसका संस्कार हुआ। इस प्रकार के अपवाद तो माने जाते है, परन्तु उसके पश्चात् जो कौशल्या का सहयोग रहा है, जो कौशल्या का तप रहा है, वह मुझे स्मरण है। वह बड़ा अद्वितीय कहा जाता है।

महर्षि कागभुषण्ड जी का जीवन

तो इसीलिए मैं माताओं की चर्चा क्या, मैं एक वार्त्ता प्रगट कर रहा हूँ। परन्तु मानव अपने स्वार्थ में आ करके आक्रमण कर सकता है, अपने प्रभुत्व में आ करके आक्रमण कर जाता है। परन्तु उस आक्रमण में भी कोई न कोई रहस्य होता है। तो विचार क्या? देखो, मेरे पुत्र ने पूर्वकाल में यह प्रगट किया था कि आत्माओं का मोक्ष होना, मानो देखो, मेरी देवियों ने भी कई कालों में, जैसे देखो, मैत्रेयी का जो जीवन था और वह बड़ा विचित्र था। मैत्रेय जब तपस्या करती रहतीं, याज्ञवल्वय मुनि महाराज विद्यालय में

तप करते रहते थे और माता मैत्रेयी अपने को भयंकर वनों में, वह तपस्या में गायन में रत रहती थी। मुझे स्मरण कराया महानन्द जी ने कि मध्यकाल में ऐसा हुआ है, पश्चात् काल में ऐसा हुआ कि मेरी पुत्रियों को वेद के शब्दों का अधिकार नहीं रहा। तो यह आक्रमण किसने किया है? यह पामर प्रवृत्तियों वाले प्राणियों ने आक्रमण किया है। मैं महानन्द जी के शब्दों की विचारधारा प्रगट कर रहा हूँ। विचार क्या मेरे पुत्र ने यह वर्णन कराया मानो देखो, इस प्रकार के जब आक्रमण होते हैं तो समाज में कुरीतियां आ जाती हैं, इनके संतानों का जन्म नहीं होता है। उनके संतान का जन्म जब होता है जब माता स्वतन्त्र रूप से तपस्वी होती है और तपस्या करने वाली होती है। कैसे तपस्या करती हैं? देखो, मुझे कागभुषुण्ड जी की वार्त्ता स्मरण आ गई है। महर्षि कागभुषुण्ड जी की जो माता थी, स्नेहलता, मानो वे उनकी लोरियों में बालक पान आनन्द लेता रहता था, मधुर अमृत को पान करता रहता था, तो माता एक पंक्तियों में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारियों को महान बनाना और कागभुषुण्ड जी को माता ने प्रीति में आ करके उसको कागा कहा करती थीं। उनका नाम तो कोंडली ब्रह्मचारी था बालक नाम कोंडली ब्रह्मचारी और देखो, जब वह प्यार प्रीति में आती थीं तो माता उसे कागा कहा करती थी। वह कागा क्यों कहती थी, क्योंकि बाल्यकाल में जो दो विधाता और थे उनके अन्न को भी वह पान कर जाता था। जब वह उनके अन्न को पान कर जाता था तो माता मग्न हो करके यह कहती तू कागा है, तू कागा प्रवृत्ति वाला है। तो माता ने जब ऐसा कहा तो उनका नाम कागा हो गया, परन्तु देखो, कागभुषुण्ड जी उनके नामों को उच्चारण करने लगे। भुषन्डी उस काल नामोकरण, यह लोमश मुनि ने उनका नाम भुषण्डी रख दिया। देखो, कागा तो माता का दिया नाम था और भुषन्डी वह महर्षि लोमश जी कहते थे और वह क्यों कहते थे मानो जब वह विद्यालय में अध्ययन करते थे, तो महर्षि लोमश और महर्षि कागभुषुण्ड जी के मानो गुरु थे आचार्य श्रुति ऋषि महाराज। श्रुति ऋषि महाराज के द्वारा जब अध्ययन करते थे तो वह दोनों संग संग प्रीति से योगाभ्यास करते थे। जब योगाभ्यास करते, व्याकरण का अभ्यास करते, शब्दों की रचना करते रहते थे और परमपिता परमात्मा के स्वरूप का दर्शन करने लगते थे।

तो मानो वह उनको भुषण्डी जी कहते थे और भुषण्डी जी क्यों कहते थे क्या उनकी बुद्धि किसी किसी काल में मानो निर्धन हो जाती थीं जब बुद्धि निर्धन हो जाती तो मानो देखो, उसको लोमश जी भुषण्डी जी कहते थे मग्न हो करके। तो इस प्रकार के नामोकरणों की रचनाएं हुई, जब रचनाएं हुई, इन्हीं रचनाओं का प्रादुर्भाव यह हो सकता है, कि समाज में उनको कागभुषुण्ड जी, एक कागा के नामों से उसके अर्थो का अनुमोदन करना प्रारम्भ कर दिया हो।

माता गार्गी का जीवन

परन्तु देखो, इस वाक्य को न लेता हुआ विचार क्या, कि इस प्रकार मेरे प्यारे! महाननद जी ने यह उच्चारण किया, कि कुछ माताओं का आत्मा का मोक्ष हुआ है। मातां मोक्ष को गई हैं और वह मोक्ष के निकट भी गई हैं जैसे हमारे यहाँ देखो, चाक्राणी गार्गी का वर्णन आता है, तो चाक्राणी गार्गी को मोह नहीं होता था। एक समय उसके पिता भी विद्यमान थे और विद्यमान हो करके पिता ने अपने में प्राणायाम करके अपने शरीर को त्याग दिया। तो चाक्राणी गार्गी अपने पिता को अग्नि के मुख में प्रवेश करके और यह कहा हर्ष ध्वनि करते हुए, कि जैसे तेरा अन्तरात्मा गया है चित्त के मण्डल को पार करके, ऐसे मेरा आत्मा चला जाए। वह मोह ममता में नहीं एक संकल्प कर रही है। तो गायत्रियों का जपन कर रही है और उनकी वृत्तियां इस प्रकार की थीं कि सर्पराज उनकी ध्वनि को श्रवण कर रहा है, मृगराज जो हिंसक है, वह ध्वनित हो रहा है। तो मानो उसकी वाणी में कितना तप होगा, बेटा! यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता। किसी किसी में कोई ऐसी जो अप्रत्तियां हैं कि जिसके मापदण्ड से मापा नहीं जा सकता, इन वाक्यों को, मानो ये उच्चारण कर सकते है। जिसकी वाणी में इतना तप हो, उसकी प्रत्येक इन्द्रियों में तप है, वह धर्म और मानवीयता से सजातीय है। तो मानो देखो, जब चाक्राणी गार्गी का प्राणान्त होने लगा, जाने लगी, तो मानो वह वेद का गान गा रही है, सामगान गा रही है। सामगान उन्हें बड़ा प्रिय लगता था, जब वह सामगान गाती थीं तो तरंगें आती रहती थीं। देखो, चन्द्रमा की आभा उनमें निहित होती रहती

थी। मानो देखो, जब वह गान गाने लगीं, तो वहीं भयंकर बन में सर्पराज है, मृगराज हैं, वहीं सिंहराज विद्यमान हैं, महर्षि स्वाति मुनि महाराजा भी विद्यमान हैं। वह कहती है अपने प्रभु से वेदवाणी का उद्गीत गाती हुई, मैं तेरी ही पगडण्डी को पान करना चाहती हूँ। मानो ये उच्चारण करते करते मानो प्राण सखा उस आत्मा को ले करके, चित्त के मण्डल में, चित्त के मण्डल से अपने प्राणों में प्रवेश करके, मानो देवी का मोक्ष हो गया। मोक्ष का अभिप्राय क्या, कि जिसके जितने व्यापक विचार बन जाएं, जो मानव में, मनुष्य में और देखो, सर्पराज में, हिंसक और अहिंसक में, किसी प्रकार मतभेदन नहीं रहता है विचारों में, उस मानव का आत्मा पवित्र बन जाता है, आत्मा एकरस रहने वाला है। एक रसता में जब परणित हो जाता है, तो प्रभु! की पगडन्डी को प्राप्त कर लेता है।

संकल्पमयी जगत्

परिणाम क्या है? मेरे प्यारे! महानन्द जी ने कहा है कि यह देवियां मानो कुछ मोक्ष के निकट थीं, कुछ मानव ऋषि मुनि निकट थे, उन्होंने अपने पांचों तत्त्वों के आभा को अपने में ग्रहण कर लिया। आत्मतत्वों में सत्ता होती है मानो इतनी एक संकल्प शक्ति बनी रहती है और संकल्पमयी जगत् होता है। हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के जगत् होते हैं, एक रचनात्मक जगत् होता है, एक हमारे यहाँ सकल्पोमयी जगत् होता है। मानो देखो, मानव अपने को पवित्र बना लेता है, तो संकल्प आया कि मेरी देवी पवित्र बन जाए, तो वह देवी पवित्र व संकल्पमयी से उसके कर्म की आभा को अपने अन्तःकरण में निहार लेता है।

तो परिणाम यह संकल्पमयी सृष्टि है, एक संकल्पमयी क्रिया कलाप है, एक मानव विद्यमान है, वह प्राणों का संकल्प कर रहा है, प्राण आ रहा है, प्राण जा रहा है, वह संकल्पोमयी प्राणायाम् कहलाता है। **जब इतना मानव का संकल्प विचित्र बन जाता है कि एक एक प्रहर का एक एक श्वांस की गतियां प्रबल बन जाती है। तो जिस समय वह योगेश्वर अपने शरीर को त्यागता है, तो वह भी मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण को**

लेता है। तो परिणाम क्या? एक व्यापक विचारों का बनाना है, हमें संकीर्णता से इस संसार को निहारना नहीं है। विचार क्या है, मानो देखो, इस प्रकार मेरी प्यारी माता अपने जीवन को क्रियात्मक बना लेती है।

संकल्प शक्ति से महान आत्मा का जन्म

एक समय मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण है माता वृहे वस्तुतम् ब्रह्मा माता मैत्रेय के हृदय में यह संकल्प जागा, एक समय मधुविद्या का पान करा रहे थे, याज्ञवल्क्य मुनि महाराजा। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से देवतव मध्यरात्रि में बोली कि हे प्रभु! मैं अपनी आत्म तृप्ति के लिए पुत्र याग करना चाहती हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रिय, तो मानो मैत्रेयी ने पुत्र याग किया और नौ माह उसके पश्चात् उनके गर्भ से एक बालक का जन्म हुआ। तो माता मधुविद्या का अध्ययन कर रही है, मधुविद्या का अध्ययन करते हुए संसार के सम्पर्क में नहीं है, केवल प्रभु से, आत्मा से वार्त्ता प्रगट कर रही है। वही ब्रह्मचारी आगे चल करके मुनिवरों! देखो, महर्षि श्वेतकेतु के रूप में बना, वही आगे चल करके गोरवृत्ति देखो, ऋषि बना, और वही आगे चल करके रेणकेतु मुनि बन गया।

माता मल्दालसा का जीवन

तो विचार क्या मुनिवरों! माता तो जन्म देती है, पालना करने वाली है और पालना में भी ज्ञान देती है और ज्ञान दे करके, जब माता इस प्रकार की होती है, तो वह माता अपने को धन्य है मोह ममतामयी नही कर रही है, प्रीति कर रही है और प्रीति में जीवन होता है, प्रेम में जीवन होता है, मोह में मृत्यु होती है। इसलिए मानव को विचारना है, माता यह जानती थी मैत्रेयी कि तुझे प्रेम करना है, मानव तुझे मोह ममता नहीं कर रही है, मोह नहीं कर रही है, ममता नही कर रही है, प्रीति करनी है, प्रेम करना है। क्योंकि देखो, प्रेम से जुड़ा हुआ यह संसार है, ये प्रेम से संकल्प हो रहा है। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में, जब मानव प्रकृति से अपनी प्रीति की, तो यह जगत् पिंड बन गया, जब मानो देखो, और प्रीति की तो उग्रगति आ गई, उग्रगति से इस संसार का विभाजन हो गया। ये ब्रह्माण्ड के रूप में दृष्टिपात आने लगा। मानो

देखो, इसका नाम है प्रेम, इसका नाम है स्नेह। स्नेह और प्रीति करनी है, मोह नहीं करना है, मोह करोगे तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। मानो देखो, जो माता यह जानती है कि तुझे कुछ योग्य बनाना है, माता मदालसा की भांति, माता मदालसा ने जब वह मनुवंश में संस्कृत मानो हुई और उन्होंने जब तीन पुत्रों का जन्म हुआ, तीनों पुत्रों से प्रेम किया, मोह नहीं किया, और मोह न करने से प्रेम किया और प्रेम ने उन्हें ब्रह्मवेत्ता बना दिया। पांच वर्ष का ब्रह्मचारी ब्रह्म की उड़ान उड़ रहा है, ब्रह्म से वार्त्ता प्रगट कर रहा है, माता से प्रश्न कर रहा है, शास्त्रार्थ कर रहा है और वह माता प्रेम से उन्हें ब्रह्म का उपदेश दे करके, ब्रह्मवेत्ता बना रही है। वही माता मोक्ष को चली गई। माता मल्दाल्सा का जीवन जब स्मरण आता है, तो वह तीन सन्तानों को जन्म दे करके एक को राजा बना करके और गायत्री छन्दों का पठन पाठन करके, मानो देखो, वह श्रुति में परणित हो करके, परमपिता परमात्मा को इच्छा प्रकट कह करके शरीर को प्राण के द्वारा त्याग दिया। प्राण के द्वारा त्याग करके वह मोक्ष के आंगन में प्रवेश हो गई। मोक्ष नहीं हुआ, मोक्ष के निकट हो गए, मानो देखो, निकटतम में अगले अरूप लोकों में जन्म ले करके उसका मोक्ष हो गया।

तो परिणाम क्या? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ महानन्द जी के विचारों के ऊपर टिप्पणियां दे रहा हूँ, और वह टिप्पणियां क्या है कि मानव को विचारना है, क्या देखो, हम व्यापक विचारों में जब हम चले जाएंगे, तो हमारा वास्तव में मोक्ष हो जाएगा। मानो देखो, यह विचार एक आक्रमणीय विचार है कि देवियां मोक्ष में नहीं जा सकतीं। अरे, जब यह आत्मा है, जब यह ज्ञानी बन सकती है, देखो, ज्ञान और कर्म इनकी आत्मा का मौलिक गुण, वह सर्वत्रता में इस प्रकार का क्रिया कलाप जब कर सकते हैं, तो मोक्ष में क्यों नहीं जा सकते। आज का देखो, यह विचार, क्या मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय दिया है।

मुझे स्मरण आता रहता है, मैं त्रेता के काल की, द्वापर के काल को भी चर्चा करता रहता हूँ। मानो देखो, जब मुझे यह वाक् स्मरण आता है कि रामं ब्रव्हे राम वन को जा रहे हैं और माता कौशल्या प्रसन्न हो करके कह रही हैं, जाओ, वन चले जाओ।

माता रूदन नहीं कर रही है, मोह नहीं कर रही है क्योंकि वह यह जानती थीं कि तूने तपस्वी बालक को जन्म दिया है। मेरे पुत्रों! मेरे प्यारे! महानन्द जी ने एक समय मुझे इसकी नाटकीय चर्चा प्रगट कराई, मैं यह कहता रहता हूँ, क्या नाटकीय चर्चा नहीं होनी चाहिए, इससे साहित्य और महानता का ह्रास होता है। माता रूदन नहीं कर रही है, मानो देखो, वह कहती है कि राजा को मोह है, राजा की मृत्यु हो गई है और मुझे मोह नहीं है, जाओ, तुम वन जाओ। मानो देखो, राजा की मृत्यु होने वाली है, माता ये कह रही है, क्योंकि वह यह जानती थी कि राजा की मृत्यु हो जाएगी, इस मोह में। मेरे प्यारे! माता प्रसन्न हो रही है, और कहती है कि भयंकर वन में जा करके इस समाज को तुम्हें ऊँचा बनाना है, इस समाज को तुम्हें महान् बनाना है। मैंने तुम्हें जन्म दिया, यह कहकर के राम को आज्ञा दी। देखो, कैकेई की तो आज्ञा द्वेषपूर्ण नहीं थी, कौशल्या की भी भावना पवित्र थी, जब माता के इस प्रकार के विचार होते हैं। उन विचारों में स्वर्ग आ गया है और वही विचार जब ऊर्ध्वा गति में चले जाते हैं वही विचार उदान के साथ में चित्त के मण्डल से पार हो करके मोक्ष की पगडंडी को प्राप्त कर सकते हैं। तो इस प्रकार का विचार मैं देना चाहता हूँ। मुझे वह साहित्य स्मरण आता रहता है, कौशल्या जी से बहुत ऋषि मुनियों ने कहा, आचार्यों ने कहा कि तुम राम को आज्ञा दे रही हो? उन्होंने कहा, मैंने इसको तो जन्म दिया है, मेरे जन्म का अभिप्राय यह नहीं है, वास्तव में इसका जन्मदाता प्रभु है, और मैंने इसको विचार दिया है इन विचारों से मैं अपनों को सार्थक बनाना चाहती हूँ, यह माता कौशल्या ने कहा था।

तो विचार विनिमय क्या? मैं ये बिखरे विचारों को तुम्हें इसलिए दे रहा हूँ कि मेरे प्यारे! महानन्द जी ने वर्णन कराया कि कुछ देवियों का मोक्ष हुआ। परन्तु देखो, यह तो हम कह रहे हैं, यह कहते हैं कि कुछ देवी आत्माएं थीं परन्तु वाक् इनका विकृतता में चला गया। वह वाक् यथार्थ नहीं, क्योंकि आत्मा तो एक लिंग है वह पुलिंग या स्त्रीलिंग नहीं कहलाता। इसलिए उनका यह अद्भुत उच्चारण करना, यह व्यर्थ बन जाता है। विचार विनिमय क्या? उस समय ब्रह्मयन् ब्रह्मः कृतानाम् तो इसीलिए विचार मेरा यह चल रहा

है कि संसार में प्रेम होना चाहिए। संसार में कर्त्तव्य होना चाहिए, अकर्त्तव्य में मोह आ जाता है। अकर्त्तव्य में विड़म्बना आ जाती है। वही विड़म्बना राष्ट्र और समाज का विनाश कर देती है। तो विचार विनिमय क्या? आज का विचार हमारा क्या कह रहा है, कि बिना विवेक के राष्ट्र का पालन नहीं हुआ करता है, यह परम्परागतों का वाक् है। राजाओं ने देखो, परम अतीत के काल में अनुष्ठान किए हैं, तपस्याएं की हैं और जब उन्होंने ब्रह्मवेत्ताओं ने उन्हें राष्ट्र की उपाधियां प्रदान की हैं।

युद्धोपरान्त भगवान राम का तप

मुझे स्मरण आता रहता है जब राम लंका को विजय करने के पश्चात् अयोध्या में आए, प्रतीक्षा हो रही है और देखो, सर्वत्र नगर प्रतीक्षा कर रहा है। जब राम अयोध्या में पधारे तो ऋषि मुनि भी प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब राम आए तो उनका ऋषि मुनियों ने स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात् देखो, उन्होंने यह वाक् अगले दिवस यह उच्चारण किया कि मैं राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूँ। उन्होंने कहा वशिष्ठ मुनि बोले राम! तुम क्यों नहीं अधिकारी हो? उन्होंने कहा मैंने एक राष्ट्र को क्रान्ति की है, (पुस्तक से) कर्त्तव्य में, अपने विचारों को मेरे अन्तःकरण में जो संस्कार संग्राम के बने, जो भी विचित्र वृत्तियां बनी हैं, उन्हें जब तक मैं समाप्त नहीं कर लूंगा, सात्विकता नहीं आयेगी, तब तक मैं राष्ट्र का या प्रजा का पालन नहीं करूंगा। तो राम ने बारह वर्षों तक और तप किया और तप करने के पश्चात् जब वे इस अयोध्या में आए, तो उस समय वशिष्ठ मुनि, महर्षि लोमश ने और आदि आदि ऋषियों ने राम का राजतिलक किया और वह राष्ट्र के अधिकारी बने। उन्होंने प्रजा में कहा कि मैं अब राष्ट्र का अधिकारी बन गया हूँ, मेरे में गायत्री माता का प्रभाव आ गया है, वेदध्वनि मेरे में ध्वनित हो गई है, मुझे विवेक हो गया है। मैं वास्तव में राष्ट्र को चाहता नहीं हूँ, परन्तु जब ऋषि मुनियों की आज्ञा है, तो मैं इनकी आज्ञा का पालन करूंगा, मैं राष्ट्र का अभिलाषी नहीं हूँ। तो राम ने यह वाक् कह करके और राष्ट्र को अपनाया। तो राम की जो स्थापना हुई है राष्ट्र की, वह बड़ी विचित्र रही है। राम ने माताओं का पूजन किया और यह घोषणा की राष्ट्र

में कि मेरे राष्ट्र में एक मानव हो तो एक उसकी देवी होनी चाहिए, परन्तु दोनों का परस्पर प्रेम होना चाहिए। द्वितीय नियम उन्होंने लगाया कि राष्ट्र में याग होना चाहिए, याग विचारों का हो, ब्रह्मयाग का हो अथवा देखो, देवयाग, वेदों की ध्वनि प्रत्येक गृह में से आनी चाहिए। मेरे गृह में भी यही ध्वनि आती रहेंगी। तो राम ने यह नियमावली बनाई और राष्ट्र के बहुत से उद्गीत बनाए परन्तु वैज्ञानिक हुए, उन वैज्ञानिकों की धाराओं में रत्त रहने लगे।

तो विचार विनिमय क्या, राम ने यह कहा कि राष्ट्र हमारा याग रहेगा और यज्ञ राष्ट्र में रहेगा और राष्ट्र यज्ञ में रहेगा। तो प्रत्येक मानव कर्त्तव्य का पालन करेगा और जब कर्त्तव्य का पालन करेगा तो राष्ट्र में एक दूसरे में कुरीति नहीं आएंगी। अपने अपने सामान्यता में, अपने क्रिया कलापों को करता रहेगा। तो राम ने देखो, यह घोषणा की और अयोध्यापुरी स्वर्ग बन गया, अयोध्यापुरी महान् बन गया।

विचार विनिमय यह है कि बिना तप के राष्ट्र का पालन नहीं होता, क्योंकि तप होगा तो बुद्धि होगी और बुद्धि होगी तो ज्ञान होगा और ज्ञान होगा तो कर्तव्य का पालन कर सकेगा और प्रजा में एक महानता का दर्शन करा सकेगा। मानव दर्शन कर सकेगा और देखो, वह महापुरुषों की आज्ञा पा करके राष्ट्र को त्यागते समय, उसे विडम्बना नहीं होगी। वह राष्ट्र को त्याग करके पुनः तपस्या भी कर सकता है और जब तक तपस्या नहीं आती, तब तक देखो, राजा के राष्ट्र में विकृतता रहती हे, मृत्यु हो जाती है। हे राजा! तेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए, वेद का ऋषि कहता है। तेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए और तेरी मृत्यु किस काल में होती है, जब होती है, जब तेरे राष्ट्र की प्रजा एक दूसरे प्राणी से मानो विडम्बित रहती है और राजा तेरे से प्रजा विडम्बित रहती है। परन्तु देखो, इस प्रकार जो राष्ट्रीय प्रणाली है, वह विचित्र होनी चाहिए। यदि, जिस राजा के राष्ट्र में मेरी पुत्रियां अपने शृङ्गार को हनन करके अपने उदर की पूर्ति करती हैं, वह राष्ट्र नहीं हुआ करता है। यह वाक् ही तो हमारे यहाँ पुरातनकाल के ऋषि मुनियों ने कहा है और जैसे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे प्रगट कराया है और इन्होंने अपना वक्तव्य दिया है, मानो अपना विचार दिया है। इन्होंने विचार देते हुए कहा हे सम्भवा लोकां

ब्रह्म वाचो प्रवह्लं मेरे प्यारे! महानन्द जी ने विचार यह दिया कि राजा हिंसक बना हुआ है। अरे, हिंसक नहीं अहिंसा परमो धर्मः का पालन करना है, भगवान् मनु के राष्ट्र का अनुमोदन करो, भगवान् राम की विचित्रता और भगवान् राम और मनु जी के सिद्धान्त को लो। मनु जी जैसे एक मछली की रक्षा कर रहे हैं और देखो, वही आज मेरे प्यारे! महानन्द जी यह कहते हैं कि उनका भक्षण किया जाता है। यह कोई राष्ट्रीयता की नियमावली नहीं है।

प्रतापी राजा दिलीप

आज का हमारा विचार यह कहता है कि मानव यह कहता है कि आहार कहाँ से आए, यदि इसका भक्षण न करें। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने एक समय कहा था, उसका उत्तर यह महानन्द जी ने दिया और हमने भी उसमें कुछ टिप्पणियां दीं कि मानव को तो, प्रत्येक मानव को अपने विचारों को महान् बनाना है। परन्तु देखो, वह दूसरे के विचारों को महान् उसी प्रकार की टिप्पणियां न देता हुआ, जब प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक मानव अपने में कर्त्तव्य का पालन, अपने में अहिंसा परमोधर्मः का पालन करता रहेगा, तो यह समाज महान् पवित्र बनेगा। सर्पराज तुम्हारे आंगन में खिलवाड़ करेंगे, सिंहराज आ करके तुम्हें भक्षण नहीं करेंगे, जैसा मैंने पुरातनकाल में पुत्र को वर्णन करते हुए कहा था कि महाराजा! दिलीप जब नन्दनी के पीछे अपना गमन कर रहे थे, ब्रह्मवर्चोसि का पालन कर रहे थे, तो मृगराज ने नन्दनी के ऊपर आक्रमण किया और राजा कहता है हे सिंहराज! तू मुझे आहार कर, यह मेरी पूज्य है। तो सिंहराज उनके तप के आगे मौन हो गया और नन्दनी को त्याग दिया और यह अपने विचारों में कहा कि मैं ऐसे प्रतापी राजा का आहार नहीं कर सकता, जिसमें हमारी मृत्यु न होती हो, जिस राजा के राष्ट्र में कोई मृगराजों पर, सिंहराजों पर आक्रमण करने वाला नहीं मनुष्य है, तो ऐसे प्रतापी राजा को ऐसे विवेकी राजा को जो गो की रक्षा कर रहा है, प्रत्येक प्राणी की रक्षा कर रहा है, उसकी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। तो मैं बहुत दूरी न चला जाऊं, इस संसार को बहुत समय हो गया दृष्टिपात करते हुए, ब्रह्माण्ड मस्तिष्क में विद्यमान

है। मैं इस ब्रह्माण्ड में से वार्त्ता ला ला करके तुम्हारे समीप लाता रहता हूँ। विचार विनिमय क्या है, जब माता के शरीरों में आत्मा है, मानवता है और उत्पन्न करने की शक्ति है, शिक्षा देने की महानता और क्षमता है तो वह मोक्ष को क्यों नहीं प्राप्त हो सकती। मुझे कोई उत्तर नहीं देता इस वाक् का संसार का प्राणी, कोई भी उत्तर नहीं देता। यह कहते हैं कि संकीर्णता है, तो मानव मानव को दमन करते रहो तो उसमं संकीर्णता आ जाएगी। मेरे प्यारे! पुत्र ने बहुत से वाक् बड़े विचित्र प्रगट किए, परन्तु आज का हमारा विचार केवल उन विचारों की टिप्पणी पर चला गया है।

गर्भस्थ शिशु के लिए याग

विचार क्या है? आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, याग जैसे कर्मों को जो हमारे ऋषि मुनियों ने यह कहा है कि हे माता!तू पुत्र को जन्मीय संस्कार करना चाहती है, गर्भ में बिन्दु का प्रवेश करना चाहती है तो उसके पश्चात् भी तू याग कर। जब गर्भ में तीन माह का बिन्दु हो जाएं, वहाँ भी याग कर, जब वह आपूर्त्त हो जाएं, वहाँ भी याग कर, जन्म हो जाए, संसार में आज, वसुन्धरा से पृथ्वी की गोद में आ जाए, तो वहाँ भी याग कर। यागों से मानव का जीवन साहित्यकारों ने भरण कर दिया है। वाह रे साहित्यकारों! तुम्हें धन्य है, तुमने वैदिक वाक्यों में इसे नाना प्रकार के विचार दिए हैं। मुझे स्मरण आता रहता है एक हमारे यहाँ अगस्त मुनि हुए हैं जो मैंने कई कालों में प्रगट किया है वहाँ उनकी माता का नाम अरुणकेतु था। अरुणकेतु माता ने अपने विचार दिए हैं एक पोथी उन्होंने लेखनीबद्ध की है और उस पोथी में मानव के देखो, बिन्दु के प्रवेश और जन्म होने से पूर्व से उन्होंने लेखनियां बद्ध कीं। गर्भ में क्या, बाल्यकाल में क्या, युवा तक देखो, उस अन्नाद् को प्राप्त होने तक उन्होंने लेखनियां बद्ध कीं। और वह पोथी विद्यमान है। उसको हमारे यहाँ जीवन सारिणी पोथी कहा जाता है। उस पोथी में संसार की सर्वत्र वार्त्ताएं है। जब यह विचार मेरे समीप आते रहे हैं तो माताओं का कितना ऊर्ध्वा सहयोग रहा है और माता तपस्या करते करते बालक को योगी बना दिया, पति देवयोगी बन गए।

स्वतः योग में प्रवेश हो करके मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण कर लिया।

परमात्मा की आराधना

तो विचार विनिमय क्या, आज का विचार यह कि परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, तू मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण कर। हे मानव! तू अपने आनन्द की पगडंडी को ग्रहण कर। हे मानव! तू प्राणशक्ति को जानने वाला बन। आज का विचार क्या, आज के विचारों का उचारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, और गो मेध याग करते चले जाएं। गो मेध याग का वर्णन क्या है कि अज्ञान से प्रकाश में जाने का नाम गो मेध याग कहा जाता है। जो मानव गो मेध याग करना जानता है, गो कहते हैं देखो, पशु को, गो नाम इन्द्रियों का है, गो नाम बुंद्धि का है, गो नाम पृथ्वी का है, गो के नाना पर्यायवाची शब्द है। परन्तु विचार यह है उनके मूल में यह कि जो गो है जो अन्धकार से प्रकाश में पहुंचाता है वह गो मेध याग कर रहा है।

यह है आज का वाक् कल मुझे समय मिलेगा, शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मानव जीवन को सार्थक करें। आज मैं याग के ऊपर अपना एक विचार दे रहा हूँ आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन।

२१ 16 03 1986 पुष्प 51 महानन्द जी द्वारा आधुनिक समाज का वर्णन

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय माने गए हैं और जो भी मानव उसका वरण कर लेता है, अथवा उसे वर लेता है वह

प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है। आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की आनन्दमयी, श्रोत्रमयी महिमा का गुणगान गाता चला जा रहा था। क्योंकि प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाता रहता है, मानव उसी आभा का वर्णन कर रहा है। इसलिए हमें वेद मन्त्रों को अपने में गान रूपों में गाना चाहिए, क्योंकि वही तो गाता रहता है, वही तो आभा में नियुक्त रहने वाला है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, प्रायः अनुसंधान करता रहता है। हमने इससे पूर्वकाल में महानन्द जी के विचारों के ऊपर अपनी नाना प्रकार की टिप्पणियां प्रगट कीं। उन टिप्पणियों को देते हुए हमारे यहाँ साहित्य की जो कुरीतियां नहीं रहनी चाहिए, क्योंकि महानन्द जी ने मुझे साहित्य की कुरीतियों के ऊपर अपनी चर्चाएं की है। जब भी साहित्य में कुरीतियां हो जाती हैं, उसी काल में मानव समाज का ह्रास हो जाता है। नवीन जो प्राणी आता है संसार में वह भिन्न भिन्न प्रकार के प्रश्न और प्रायः उत्तर करता रहता है। परन्तु जब उनका उत्तर हमें प्राप्त नहीं होता, तो हम उसमें मौन हो जाते हैं और मौन होने का अभिप्राय यह कि ज्ञान से शून्य हो गया है। इसी प्रकार हमें विचार विनिमय करना है।

मानव जीवन की चार धाराएं

आज मैं पुनः से इस वाक्यों को प्रकट कर रहा हूँ जैसा मेरे पुत्र महानन्द जी के विचार रहते है। परन्तु उन विचारों में एक सार्थकता, निर्भयता का हमें बोध होता है। हमारे यहाँ नाना प्रकार की ज्ञान की धारायें हमें उपलब्धियों में प्राप्त होती रही है क्योंकि ज्ञान और विज्ञान का मानव के आत्मतत्त्व से उसका समन्वय रहता है। इसीलिए हमें आत्मतत्व के ऊपर विचार विनिमय करना है, क्योंकि दो प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, मानवीय मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है, एक भौतिक विज्ञान है और एक आध्यात्मिक विज्ञान है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता तो यह कहता है कि मैं आत्मा को जान करके प्रभु के राष्ट्र में जाना चाहता हूँ और वही मुझे मृत्युञ्जय बनना है। परन्तु भौतिक विज्ञानवेत्ता यह कहता है कि वह राष्ट्रवाद मानव समाज को एक अणुवाद और परमाणु

चित्रवलियों में ले जाना चाहता है। परन्तु दोनों प्रकार का विज्ञान अपने में अनूठा है। बहुत पुरातन काल हुआ, जब इस विज्ञान के ऊपर हमारे यहाँ एक बड़ी विचित्र उपलब्धियां रहीं है और अपने में मानव अनुसंधान करता रहा है और विचार विनिमय करता रहा है कि हमारे जीवन की सार्थकता इन वार्त्ताओं को प्रगट कर रहा है। (शब्द ध्वनि से) एक मानव दर्शन है, मानव दर्शन उसे कहते हैं जब मानव अपने को स्वतः अपने में दर्शन करता है। अपने में दर्शन करता हुआ, मानव अपनेपन की आभा को नियुक्त करता रहता है। हमारे यहाँ नाना ऋषि हुए है। नाना राष्ट्रवेत्ता हुए हैं, जिन्होंने अपने आत्मीयता को जान करके मानव जीवन के दर्शन में जाने का उन्होंने प्रयास किया है।

मेरी प्यारी माताओं के सम्बन्ध में, इससे पूर्वकाल में नाना विचार प्रगट कर चुका हूँ और प्रगट करता हुआ यह उच्चारण कि मानव के जीवन की चार प्रकार की धाराएं होती है। सबसे प्रथम ब्रह्मवर्चोसि है जिसका ब्रह्मचर्य बन गया है, जिसका ब्रह्मचर्य ऊर्ध्वा में गति कर गया है, तो वह मानव का प्रारम्भिक जीवन, महान् बनना चाहिए। उसके सहयोग के लिए माता पिता और आचार्य और गुरुजनों की मानो एक सद्भावना होती है और द्वितीय गृह आश्रम में प्रवेश हो करके, दर्शनशास्त्रों का, दर्शनों का अध्ययन करते हुए, परमात्मा का चिन्तन करते हुए, उसमें ज्ञान की जो हमने बाल्यकाल में जाना, अपने में उपार्जन करा है उस उपार्जन से हमें अपने जीवन को ले करके चलना है। उसके पश्चात् वानप्रस्थ परम्परा आती है। वह जो अग्नि गृह वैश्वानर नाम की अग्नि की वह पूजा करता हुआ, मानव अपने को सजातीय ब्रह्मवरणो ब्रह्म में लीन होने के लिए, वह विद्यालयों में आचार्य और ब्रह्मचारियों को शिक्षा देना है। परन्तु उसके पश्चात् जब उससे भी उपराम होता है मानो इस भौतिक विज्ञान से, ज्ञान से और इस प्रकृतिवाद से जब मानव का अन्त समय आता है, वह उपराम होता रहता है। और जब वह इससे उपराम हो जाता है तो आगे चल करके इसकी उपलब्धियां मानो देखो, आग्नेय विचारों में परणित हो जाती है। हमारे यहाँ एक काल है, एक समाज है। जिसे निर्माण करते हुए कहा है कि इस मानव समाज में एक संन्यास आश्रम आता है जो अन्तिम चरण

है, जीवन का। उस संन्यास आश्रम में जब जाता है, तीनों आश्रमों से (पुस्तक से) वह उपराम हो जाता है, उससे वह महानता की प्रतिभा में परणित हो जाता है। तो संन्यास किसे कहते हैं?

सन्यास का स्वरूप

मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने प्यारे महानन्द जी को यह प्रगट कराया, यह वर्णन कराया कि संन्यास उसे कहते हैं जब ज्ञान में इतना रत्त हो जाता हो जैसे अग्नि की धारा होती है, जैसे अग्नि रूपों में परणित होती रहती है अपने में इसी प्रकार आग्नेय वस्त्रों को संन्यास अपने में कहता है, विचार देता है कि इस संन्यास को ले करके मैं मोक्ष की पगडंडी को ग्रहण करना चाहता हूँ। मैं संसार से उपराम होता हुआ ज्ञान की उपलब्धियां करता हुआ, मैं अपने जीवन को बनाता हुआ, मैं क्रियाओं में जाना नहीं चाहता हूँ और केवल तपस्या के क्षेत्र में जीवन बिताऊं तपस्या किसे कहते हैं? बुद्धि, मेधा दोनों के क्रियाकलापों का नामकरण क्षेत्र माना गया है। परन्तु जब यह आगे चल करके बुद्धि और मेधा को जान करके जब ऋतंभरा में प्रवेश होता है, उस संन्यास की दशा को हमारे यहाँ ऋतंभरा में प्रवेश होता है, उस संन्यास की दशा को हमारे यहाँ ऋतम्भरा कहा जाता है। जहाँ वह सर्वत्र प्रकृति के मण्डल को जान करके, चित्त के मण्डल को जान करके, आत्मवेत्ता बनने के लिए वह तीनों आश्रमों को त्याग करके,उस संन्यास के क्षेत्र में पहुंच जाता है, वहाँ पर प्रभु का चिंतन करता है। अपने विचारों को अग्नीय बना लेता है जैसे अग्नि यज्ञशाला में प्रदीप्त हो रही है, उसका जैसा रंग रूप माना गया है वही आभा में नियुक्त होता हुआ, वह संन्यास उसे इसी प्रकार की आभा में नियुक्त करा देता है।

तो विचार आता रहता है बेटा! मैं तुम्हें उच्चारण कर रहा हूँ कि परमात्मा के क्षेत्र में जाने के लिए मानव संघर्ष को प्राप्त होता है। वह आचार्य को संन्यासी ब्रह्मवेत्ता को अपने को समर्पित कर देता है और समर्पित करके सर्वभूतेषु बन जाता है। सर्वभूतेषु किसे कहते हैं,जो जितनी भी भूतादि ब्रह्मा चाहे वह प्रकृति का मण्डल हो, चाहे वह

मानो जड़वत् हो, चाहे चैतन्य हो उस सब में उस अपने प्रभु को निहार करके वह मौन हो जाता है, निहारता रहता है और निहारकर वह मौन हो जाता है और वह जो मौन प्रवृत्ति है, वही उसकी देखो, विज्ञान के, आध्यात्मिक विज्ञान के क्षेत्र में ले जाती है मनसा वाचा कर्मणा इनको त्याग देता है। प्रकृति का मण्डल भी शान्त हो जाता है। यह संन्यासी क्या करता है कि यह लोक लोकान्तरों में क्या, एक एक अणु और परमाणु में वह मानव दार्शनिक बन करके प्रभु का दर्शन करता है। उस समय जब यह प्रभु का दर्शन करता है, उसी के पश्चात् आभा का जन्म होता है, कौन सी आभा है, जिसमें लोक लोकान्तरों का अध्ययन करता हुआ, लोक लोकान्तरों की प्रतिभा में रत्त होता हुआ, इस ब्रह्माण्ड में उस प्रभु का ही जो दर्शन करता है। वही तो मानवीय दर्शन है, उसी दर्शन के आधार पर आग्नेय जीवन बन जाता है। संन्यास का अभिप्राय यह है कि जिस समय हम अपने वस्त्रों को परिवर्तित करते हैं, अपने वस्त्रों को आग्नेय जीवन या सबसे प्रथम मानव की आग्नेय प्रवृत्ति होनी चाहिए, आग्नेय ज्ञान होना चाहिए क्योंकि देखो, ज्ञान अग्नि है। ज्ञान दाह करने वाली है, वह पापों का शोषण करने वाला, ज्ञान हमारे समीप आना चाहिए। इस प्रकार हमारा वैदिक साहित्य कहता है। वैदिक साहित्य में कहते हैं कि संन्यास में ज्ञान होना चाहिए। संन्यासी में ज्ञान होना चाहिए वह परमात्मा के निकट जाने वाला हो, अन्यथा देखो, वह नार्किक जीवन बन जाता है तो विचार विनिमय क्या है? आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् शमं ब्रह्मा दिव्यां रथं ब्रह्मणौ व्रत्याः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मेरे भद्र ऋषि मण्डल, मेरे मानव समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे। इनका वाक् एक बड़ा विचित्र चल रहा था। आज जिस स्थली पर यह हमारी आकाशवाणी जा रही है, उस स्थली पर यागों का पूर्णत्व को प्राप्त होने वाला याग हुआ है। मेरा हृदय बड़ा प्रसन्न रहता है जब मैं इन यागों की ध्वनियों को वेदध्वनियों को, अपने में श्रवण करता रहता हूँ। क्योंकि जब मेरा बाल्यकाल

था, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा जब मैं अध्ययन करने लगा।

याग मे साकल्य

तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यागों के क्रियाकलाप में लगाया और वह याग भौतिक याग जैसे यह साकल्प अग्नि में प्रदान किया जाता है तो इस अग्नि साकल्य में तीन प्रकार के पदार्थों का प्रतिपादन किया जाता है। एक सुगन्धित होता है एक पौष्टिक होता है, एक रूग्णनाशक होता है। तो तीन प्रकार के पदार्थों, साकल्यों को ले करके हम यज्ञशाला में आहुति प्रदान करते है। सुगन्धि से वायुमण्डल पवित्र होता है, और पौष्टिक पदार्थों से यजमान के हृदय में, होताजनों के हृदय में पुनः से देखो, उनका हृदय विचित्र और पौष्टिक बन जाता है, सूक्ष्म तरंगों के द्वारा, वही पौष्टिक पदार्थ मानो देखो, एक तरल पदार्थों के रूप में, अन्तरिक्ष में छा जाता है। वही अन्तरिक्ष में जब छायमान होता है, मानो देखो, वही वृष्टि के मूल में परणित हो जाता है और द्वितीय वाक् यह रोग नाशक, तृतीय ब्रहे रोगनाशक, रूग्णवादी हृदयों में जब वह परमाणु जाता है, तो उनके हृदय में मानों एक चेतनता जागरूक हो जाती है।

बरनावा का पूर्वकाल

तो मैं इस याग की चर्चा इसलिए कर रहा हूँ कि याग का समापन हुआ है, याग के कर्मकाण्ड की पद्धतियों से मानव विचित्र हुआ है। विचार विनिमय क्या? मैं तो यजमान् का साथी बना रहता हूँ, यजमान् के हृदय को सदैव यह उल्लास देता रहता हूँ हे यजमान्! तेरा मानवीय हृदय पवित्र होना चाहिएं, हे यजमान्! तेरे हृदय की कामनाएं सदैव मानो देखो, पूर्णता को प्राप्त होती रहे। यजमान् यज्ञशाला में विद्यमान हो करके हूत कर रहा है, अपनी श्रद्धामयी, घृतमयी आभा की आहुतियां प्रदान कर रहा है। परन्तु देखो, इन वाक्यों को ले करके मैं अग्रणीय नहीं बनाना चाहता हूँ। आज जिस स्थली पर यह चतुर्वेद पारायण याग हो रहा है मेरा अन्तर्हृदय इससे प्रसन्न रहता है कि बहुत समय के पश्चात् हृदय का मङ्गल हुआ, सूर्य का उदय हुआ। देखो, यहाँ मुझे स्मरण है, मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव स्मरण कराते रहते थे, भ्रमण कराते रहते थे, जिस स्थली

पर यह चतुर्वेद पारायण याग हो रहा है। कुछ भाग तो इस स्थली का नदी के देखो, नदी की बहती धारा में समाप्त हो गया, परन्तु देखो, कुछ भाग रह रहा है इस भाग पर विद्यालय रहा है, वह भाग कुछ नदी के आंगन में भी प्रवेश हो गया है। परन्तु यहाँ इन यागों ब्रह्म बाह्य इसी भूमि पर किसी काल में कौन ब्रह्मः है पाण्डु पुत्रों ने यहाँ शिक्षा का भी अध्यापन किया है और गुरु द्रोणाचार्य ने यहाँ शिक्षा की प्रणाली बड़ी विचित्रता में लाने का प्रयास किया है। परन्तु देखो, यही भूमि काल आता रहा है जहाँ यागों का चलन होता रहा, तपस्वी अपने में तपस्या करते रहे, वही काल आने के पश्चात् मानो समाज में महाभारत काल के पश्चात् जो निर्लज्जता संसार में इस काल में आई, कुछ वाममार्ग से आई, कुछ जैन काल से आई है, कुछ यवनकाल में आई है। मेरी पुत्रियों का हनन करना, मानो देखो, मेरी पुत्रियों के सतीत्व को हनन करने का क्रियाकलाप भी होता रहा है। आज मैं साहित्य तो देना नहीं चाहता हूँ केवल ये मेरा उद्गार है कि जिस भूमि पर मानो देखो, शमशान बन जाता है वहाँ पुनः से देखो, वेदों की ध्वनि का प्रसार हो गया है। यह मेरा हृदय मानो देखो, पवित्रता में परणित होता हुआ यह कहता है हे मानव समाज! मानो देखो, यह सौभाग्य का विषय है, जब वेद के मन्त्रों के आधार पर आहुति साकल्प प्रदान कर रहा है, वायुमण्डल पवित्र हो रहा है, मानो ब्राह्मण अपना अपना उद्गीत गा रहा है। यह तो मेरे आनन्द का एक विषय है। आज मैं बहुत पुरातनकाल से इस वायु मण्डल में भ्रमण करता रहता हूँ। मेरे जीवन में पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे जीवनमुक्त बनाया, परन्तु देखो, मुझे मोक्ष नहीं दिया। विचार क्या? मैं मोक्ष चाहता भी नहीं, मेरा तो जीवन मुक्त, जीवन बना रहे, तो मानो देखो, मैं इस संसार को निहारता रहूँ। मैं ब्रह्माण्ड को निहारता रहूँ और ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ता में पूज्यपाद गुरुदेव के उस आभा में उनके वाक्यों का पालन करता रहूँ। मेरा तो हृदय इसी में निहित है।

पूज्य महानन्द जी का जीवन

परन्तु देखो, मोक्ष और देखो, यह जीवन मुक्तता क्या है? मानो मेरे जीवन में पूज्यपाद

गुरुदेव ने मुझे याग के माध्यम से इस भौतिक याग से ले करके आगे आध्यात्मिकवाद में ले गएं और आध्यात्मिक वाद में उस परमाणुवाद में ले गये, जहाँ मानव अपने परमाणुओं को जान करके जैसे माता के गर्भस्थल में परमाणुओं से शिशु का निर्माण होता है, ऐसे ही योगीजन जो जीवन मुक्त होते हैं, जो चित्त के मण्डल से प्रवृत्तियों में उपराम हो जाते है। मानो देखो, उनका जीवन एक अभ्योदय होता रहता है। मैंने इससे पूर्वकाल में वर्णन किया था, मैं इन वाक्यों को जानने लगा था। इससे पूर्व यह वाक् मैंने प्रगट किया पूज्यपाद गुरुदेव ने भी इसकी टिप्पणियां की है। मानो देखो, जैसे मानव समाज है, मानव समाज का सृष्टि के प्रारम्भ में जो जन्म हुआ है मानो देखो, वह यौगिक आभाओं से हुआ है, मानो देखो, जीवन मुक्तवादी प्राणियों ने परमाणुओं से किया है, वह परमाणु से अपने स्थूल शरीर को भी प्राप्त हो जाते हैं, सूक्ष्म शरीर को भी प्राप्त हो जाते हैं और कारण इनमें जा करके मोक्ष की पगडंडी उसे प्राप्त होती है। परन्तु देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं तो इतना ही जानता हूँ कि सूक्ष्म कारण और स्थूल शरीरों की प्रतिक्रिया जान करके, मैं उसे स्थूल ही बना लेता हूँ और मानो इसे सूक्ष्म भी बना लिया जाता है और कारण में जा करके प्रभु के, चित्त के दर्शन में मैं परणित हो जाता हूँ। ऐसी अनन्य आत्माएं इस वायुमण्डल में भ्रमण करती रहती हैं। आज मैं इस आभा में भी जाना नहीं चाहता हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक वाक् जैसे मेरे वाक्यों पर इन्होंने टिप्पणियां की, कि मानव समाज का जीवन तो ऐसे हुआ, जैसे मानो यह जो सिंहराज है और जो नाना प्रकार की जो योनियां हैं इनका जन्म कैसे होता है, ये बड़ा एक विचारीणाय प्रसंग है। इस संसार में मैं इस विचार को पुनः से देता रहता हूँ, क्योंकि योगीजन जो होते हैं यह अपनी अपनी भूमिका में सब योनियों को प्राप्त हो जाते है। वह योनियां प्रभु के नियम के मानो देखो, आधार पर उन कणों को के करके, कोई सिंहराज बनता है, कोई मृगराज बनता है, और मानो देखो, कोई किसी प्रकार के देखो, गो आदि योनियों को प्राप्त हो करके अपने अपने सृष्टि के कर्म का प्रारम्भ हो जाता है। सृष्टि का कर्म इसी प्रकार प्रारम्भ होता है क्योंकि मैंने बहुत पुरातनकाल में पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया था, वह जो स्थावर सृष्टि है वह एक

दूसरे के सहयोग से वायुमण्डल, प्रकृति के, ब्रह्म के सहयोग से स्थावर सृष्टि का जन्म होता है सबसे पूर्व। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, कोई आत्मा अंडज में प्रवेश कर गयी, कोई अंडज सृष्टि की प्रकृति में से परमाणु ले करके कोई जंगम बन गयी, कोई उद्भिज बन गई और यह सृष्टि का कर्म प्रारम्भ हो गया।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में इसके ऊपर विचार दिया। और यह कहा कि हे पुत्र! गहे किरणास्वस्ती सुप्रजाः ऐसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा, मानो देखो, उन विचारों में, मैं तो जाना नहीं चाहता हूँ, मैं केवल तुम्हें संक्षेप से देने के लिए आया हूँ कि युवावस्था में देखो, सब प्राणियों का जन्म होता है। जिससे पालना में मानो देखो, सहयोगिता को प्राप्त होते रहते हैं जैसा मैंने बहुत पुरातनकाल में अपने तीनों शरीरों को जान करके वह स्थूल, सूक्ष्म और कारण मानव प्रवृत्तियों में मानो इस आत्मा को देखो, इस शरीरों में भ्रमण कराता रहता हूँ। इसी प्रकार अहम् आत्मा में एक आत्मा हूँ, परन्तु देखो, आत्म ब्रह्मा, ब्रह्माण्ड और देखो, विज्ञानवेत्ता भी मानो देखो, उसका सार्थक बन जाता है।

यज्ञ में बलि का अभिप्रायः

तो विचार विनिमय क्या, आज मैं पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन करा रहा हूँ, वहीं आना चाहता हूँ, आज जो यज्ञमान् याग कर रहा है, मेरी अन्तरात्मा बड़ी प्रसन्न हो रही था। परन्तु यागों की ध्वनि में अपने में ध्वनित होता हुआ। समाज अपनी आभा में रत हो रहा है। इसी प्रकार हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। परन्तु देखो, महाभारत काल के पश्चात् मानो देखो, विकृति आना प्रारम्भ हुआ। याग जैसे कर्मों में यज्ञमान् को प्रसाद दिया जाता है और वह प्रसाद देखो, हिंसा का प्रसाद ले करके देखो, अहिंसा न रह करके वह देखो, गो मेध याग में, गो के मांस की आहुति देना और अजामेध याग में बकरी के मांस की आहुति देना, इसी प्रकार देखो, अश्वमेध याग में घोड़े के मांस की आहुति देना और इसी प्रकार बलि की प्रथा प्रारम्भ हुई। इस मानव समाज ने बलि को नहीं जाना फिर बलि कहते किसे हैं? वाजपेयी यागों में बलि का

वर्णन है और भी नाना यागों में बलि का वर्णन माना गया है। परन्तु बलि का अभिप्राय यह नहीं है कि प्रत्येक मानव के जीवन को हमारे ऋषि मुनियों ने उसको याग से कटिबद्ध किया है, याग से उसका समन्वय किया है और वह याग से कैसे समन्वय किया है? मुनिवरों! देखो, बलि का अभिप्राय यह है कि अपने जीवन को क्रियात्मक बनाना और अपने को हूत कर देना। हूत का अभिप्राय यह कि मैंने अपने जीवन में परिश्रम किया है, परिश्रम का देखो, ऊर्ध्वा में नाम एक बलि के रूपों में परणित किया गया है। बलि का अभिप्राय यह नहीं है कि प्राणी को हनन किया जाए। यह वाजपेयी यागों में बैल के बछड़े की बलि का वर्णन आता है। यह सब पामरों का विचार है। परन्तु वैदिक साहित्य वालों का यह विचार रहा है, हमारा यह विचार रहा है, पूज्यपाद गुरुदेव आदि, ऋषियों का यह विचार रहा है कि बैल की बलि का वर्णन आता है कि पृथ्वी से वृष्टि होती है, वृष्टि हो करके ही मानो देखो, याग का प्रतीक है, उस समय बैल की बलि का वर्णन है। बल की बलि का वर्णन यह कि पृथ्वी के मांस को उस देव की चमड़ी को उधेड़ करके, उसके मांस में बीज की स्थापना की जाती है। तो देखो, वह परिश्रम का नाम एक बलि के रूपों में परणित किया है। तो जो मन से देखो, अपने को समर्पित कर देता, वही तो बलि के आभा में परणित होता है। परन्तु देखो, महाभारत काल के पश्चात् वेदों के मन्त्रों के ऊपर टिप्पणियां की, उसके ऊपर अनर्थ हुआ और वेदमन्त्रों में देखो, हिंसा का चलन किया, इन स्वार्थियों ने, इस वाममार्ग समाज ने, मानो देखो, ब्राह्मण समाज ने उसी प्रकार उन वाक्यों को अपना करके अपना व्यवसाय बनाया। देखो, वह धर्म ले ले करके, व्यवसाय बना, व्यवसाय बन करके वही हमारे अज्ञान का मूल बन गया।

बहुत पुरातन काल में यही आभा एक यूनान नामक राष्ट्र है, यूनान नाम करके राष्ट्र के व्रीतकेतु नामक एक पुरुष था, वह बैल की बलियों का वर्णन करता रहता था। उन्होंने वाममार्ग समाज से किया, उन्होंने भी उसका खण्डन किया, परन्तु उसके पश्चात् बैल की बलि का वर्णन है। वह अप्रतं ब्रह्मा वृहा **यह जो जैन काल से पूर्व, जो मूसा का काल आया, मूसा के काल में, इन वाममार्गियों ने यह प्रथा ले ली।** प्रत्येक दिवस आता

है वह मुहम्मद के मानने वालों में भी आता है। मुहम्मद ने इस वाक् के ऊपर यह कहा है कि यह बैल की बलियां जो दी जा रही हैं, यह बन्द होनी चाहिएं, मानो देखो, अजामेध की यह अशुद्ध है। यह नहीं देना चाहिए। परन्तु देखो, यह योगियों की प्रथा व मुहम्मद समाज के मानने वालों ने प्रतीत हुई और उसी का देखो, मुहम्मद के वाक् को न मान करके, अपनी रसना के स्वाद में आ करके, देखो, यहाँ प्राणियों की हिंसा प्रारम्भ की, इनका वध प्रारम्भ किया। वह उनकी कुर्बानी कहने लगे, बलि कहने लगे। अरे, यह सब वाममार्ग से ही प्रथा, दूसरे विचारों में परणित हुई है। उन्होंने वाममार्ग की अपनी रसना का स्वाद तो ले लिया, परन्तु देखो, वेद के मन्त्र को नहीं विचारा। वेद के मन्त्र को, साहित्य को नही विचारा उसका परिणाम यह हुआ कि मुहम्मद के मानने वाला हो, चाहे ईसा के मानने वाला हो, चाहे मानो देखो, राम की ध्वनि करने वाला हो, किसी भी प्रकार का प्राणी हो, राम जैसे जिन्होंने अपने जीवन में देखो, वह सात्विक आहारों को पान करते थे। राजा हो करके यागों का चलन करते थे। आज उनके नामों का कीर्तन है। परन्तु गृहों में मांस का भक्षण हो रहा है। जब मैं यह दृष्टिपात करता हूँ, अरे, यह कैसा दुर्भाग्य है। भगवान् कृष्ण भी महारानी रूक्मिणी से यह कहते देवी! संसार में आहार पवित्र होना चाहिए, आहार नहीं होगा तो व्यवहार नहीं बनेगा और व्यवहार नहीं बनेगा तो हमारी मानवीयत्व नहीं बनेगी और मानवीयत्व नहीं बनेगी तो किसी को ऊर्ध्वा में पहुंचा नहीं सकेंगे। हम अपने विचारों से समाज को महान् नहीं बना सकते। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है भगवान् कृष्ण जब रूक्मिणी से यह कहते थे। आधुनिक काल में देखो, कृष्ण का कीर्तन हो रहा है। राधा जो अपने जीवन में दुर्गन्ध पदार्थों का पान नहीं करती थी, उसे कहते हैं राधा और द्वितीय रूपों में उसे कृष्ण पत्नी कहते है। राधा कृष्ण दोनों का संकीर्तन हो रहा है परन्तु देखो, कीर्तनवादी, मुझे ऐसा दृष्टिपात आता है कि वह मांस का भक्षण कर रहे है। उनका जीवन, उनका विचार, विचारों को त्याग दिया है केवल यह चाहते हैं कि हमारे नाम कीर्तन से हमारी मुक्ति हो जाए। **अरे, मुक्ति तो उस काल में होगी, जब मानव अपने कर्म वचन से ऊँचा बनेगा, जब मन कर्म वचन तीनों उनके होंगे**, तभी तो यह मानव समाज ऊँचा बनेगा।

जब मैं विचारता रहता हूँ राम का काल, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे प्रगट कराते रहते हैं, मुझे भी उस काल को दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। **उनके जीवन में केवल कन्दमूल का आहार करते थे, तपस्या काल में उन्होंने देखो, अड़ूषा से पत्रों को पान किया और अड़ूषा से कृत पत्रों को पान करके उसमें औषधियों का पान करके बारह बारह वर्ष जब तक अनुष्ठान करते रहते थे। तपस्या का जीवन तपस्या का होता है।**

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे वर्णन कराते रहते है। आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह कि मानो देखो, इस प्रकार का यागों का चलन यागों के ऊपर जब आक्रमण प्रारम्भ हुआ, वही मनोविज्ञान उसमें वैज्ञानित हो गया प्रत्येक याग की प्रतिभा का व्रत न ले करके, अज्ञानता की वेदी पर परणित हो रहा है। आज मैं विचार यह देने के लिए आया हूँ, और मेरा विचार यह था कि मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव एक विचार दे रहे थे, और विचार यह था कि अन्तिम चरण मानव के जीवन का संन्यास है। जब मैं संन्यास के क्षेत्र में आधुनिककाल में जाता हूँ, तो आधुनिककाल का समाज संन्यासी यह कहता है अहम् ब्रह्मऽस्मि मैं ब्रह्म बन गया हूँ। परन्तु जब उसके एक कांटा भी लग जाता है, तो ब्रह्म को अपने से दूरी कर देता है, परन्तु उस समय ब्रह्म की आभा समाप्त हो जाती है। जब मैं यह विचारता हूँ कि वह दुर्गन्ध पदार्थो का पान कर रहे हैं, अपने ऐश्वर्य में रसना को इतना दूषित विचार लिया है कि देखो, मानो देखो, बीस के लगभग प्राणी उसके जीवन से अपने जीवन को हनन कर लेते है। वह मानो देखो, भगवा वस्त्रों से कोई लाभ नहीं होता है। मानो देखो, वह सुरापान में लगा हुआ है, आधुनिक काल का पूज्यपाद सन्यास भी सुरा पान में लग गया है, देखो, मानो सुल्फावाद में लग गया है, वह अपने जीवन को समाप्त कर रहा है। तो मुझे तो इस पर दुखदता ही प्रतीत होती है। मानो देखो, जिन महापुरुषों ने संन्यास लेने के पश्चात् वह घोषणा राजा को कर रहे हैं, राजा से कहते हैं, राजा राष्ट्र को ऊँचा बना, अन्यथा हम तेरे से आ करके विरोध करेंगे। परन्तु देखो, राजा नम्र हो करके ऋषि के चरणों को छू रहा है। आज का राजा ऐसा है कि संन्यासी घोषणा करते हैं उसकी मृत्यु कर

देता है। जब मैं यह वाक् लाता हूँ कि उसकी मृत्यु होने जा रही है देखो, यहाँ प्राणियों के ऊपर कहते हैं, संन्यासी कहता है मृत्यु बन्द होनी चाहिए राष्ट्र में, परन्तु राजा उनके वाक्य को प्रजा की दृष्टि से नहीं दृष्टिपात कर रहा है। उनके वाक्यों को एक आभा में परणित होने जा रहा है।

अश्वपति के राष्ट्र में गुरुदेव

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक समय में महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में पहुंचे भ्रमण करते हुए और राजा ने अपना आश्चर्य स्वीकार किया कि ऋषि का आगमन कैसे हुआ। उन्होंने कहा प्रभु! आइये आप कुछ पान कीजिए। तो पूज्यपाद गुरुदेव ने यह कहा कि मैं इस अन्न को पान नहीं करूंगा। राष्ट्र का अन्न दूषित अन्न होता है, राष्ट्र का अन्न मानो दूषित होता है, मैं इसको पान नहीं करूंगा। परन्तु देखो, आधुनिक काल का संन्यासी का कोई द्रव्यपति, विशेष द्रव्यपति राष्ट्र से जिसका सम्बन्ध हो गया है, वह शिष्य बन जाए तो वह अपने में यह स्वीकार करता है कि मेरे द्वारा तो राजा महाराजा शिष्य बने हुए है। उन्हीं का आहार करके अपनी आत्मा का हनन कर रहे है। मानो देखो, उस अन्न को पान करके वह अपना हनन कर रहे है। इसीलिए देखो, महापुरुषों का एक तिरस्कार हो रहा है। महर्षियों का तिरस्कार हो रहा है। अरे, सन्यास का ह्रास हो रहा है। उच्चारण करना तो प्रियता है, परन्तु मौन रह करके राजा को या समाज को ऊँचा बनाना, यह ज्ञानी पुरुषों का कर्त्तव्य रहा है। यह परम्परागतों से रहा है। मैं यह कहता रहता हूँ मैं पूज्यपाद गुरुदेव को आधुनिक काल में संन्यास की परम्परा का वर्णन, विलासियों का जीवन स्वीकार किया। संन्यासियों का जीवन दृष्टिपात करो, उनमें विलासिता है, लोलुपता है, द्रव्यता है। उच्चारण करने की क्षमता तो उनमें आ जाती है, परन्तु देखो, आत्मा को शोधन करने की क्षमता नहीं आ पाती। परन्तु देखो, मैं उच्चारण कर रहा हूँ कि आधुनिककाल में मेरा जो ऋषियों का समाज है वह कितना दूषित हो गया है, वह कितना भ्रष्ट हो गया है। तपस्वियों के यहाँ राजा जाते हैं और राजा नम्रता से चरणों को स्पर्श करके ये कहते कि भगवन! हमें कोई मार्ग दीजिए, जिससे हम आत्मकल्याणी

बनें। उन राजाओं को ऋषि मुनि देखो, शिक्षा देते थे, ऋषि मुनि राजाओं को संन्यास दे करके ब्रह्मवेत्ता बनाते थे। मानो देखो, आज यदि उन राजा से साधु की, संन्यासी की मित्रता हो जाए, तो अपना सौभाग्य वह स्वीकार कर रहा है, अपने में सौभाग्यशाली बन रहा है। परन्तु देखो, यह विचारा नहीं कि राजाओं को तो मार्ग देने वाले ऋषि मुनि होते हैं, तपस्वी होते हैं, जो अपने मन और प्राण का समन्वय करना जानते हैं, ओ३म् को अपनी आभा में रत्त करना जानते हैं, वही तो समाज को एक मार्ग दे सकते हैं, विचित्रता प्रदान कर सकते हैं। परन्तु देखो, मानव भी प्रसन्न हो रहा है। हमारे यहाँ एक महापुरुष तप रहा है। वह मानो बारह वर्ष हो गए हैं, वह विश्राम भी नहीं कर रहा है, वह मानो देखो, खड़ा ही रहता है, परन्तु देखो, उसमें अवगुण कितने हैं। उसको कोई नहीं दृष्टिपात कर सकता। परन्तु देखो, वह सुरापान कर रहा है, सुल्फापान कर रहा है, अपने अच्छाई के परमाणुओं को नष्ट कर रहा है, और वह समाज को और दूषित कर रहा है। भगवान् कृष्ण ने ऐसे तप का निषेध किया है। हम परम्परागतों से निषेध करते चले आए हैं क्योंकि देखो, हमारे यहाँ तो यह है कि अध्ययन करना चाहिए आत्मकल्याण के लिए, मानव का दर्शन होना चाहिए। जहाँ मानव का दर्शन होता है वहीं तो मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाता है, ज्ञानी अपने में पवित्र कहलाता है।

इसी प्रकार जब में यह विचारता हूँ तो मैं मैं साधुओं की निन्दा नहीं कर रहा हूँ, मैं केवल उनके अवगुणों की चर्चा कर रहा हूँ और गुणों का प्रतिपादन कर रहा हूँ। उनमें मानो देखो, गुण होने चाहिए, जहाँ चला जाय वहाँ आनन्द की वृष्टि होती चली जाए। आधुनिककाल में देखो, एक विचार देता है, अपनी लोलुपता के लिए एक सन्यासी विचार देता है कि देखो, अमुक अम्रहे में, राष्ट्र में चला गया, मुझे ऐसी सिद्धियां हो गई, उन सिद्धियों से मैंने दूसरे राष्ट्रों में भ्रमण किया। परन्तु भ्रमण करने से राष्ट्रों में तू ऊँचा नहीं बन गया। तू ऊँचा तो जब बनेगा जब मानो देखो, द्वितीय राष्ट्र के प्राणी तेरे तपोमयी जीवन को पान करने के लिए तेरे चरणों की वन्दना करेगा। मानो देखो, तू जाता है, भ्रमण कर रहा है बड़ी विचित्रता है, परन्तु यह कोई आश्चर्य नहीं है। आश्चर्य जब होता है जब वह राजा आ करके तेरे चरणों की वन्दना करते हैं। राष्ट्र का राजा

तेरी वन्दना करता है, और मानो तू अपने ऋषि मुनियों के वेद का उपदेश दे करके और उनको सदमार्ग पर ले जाता है। तो तेरी सादगीयता उस काल में महान् और पवित्र बन जाती है।
परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह प्रगट कर रहे थे कि संन्यासी अग्नेमय जीवन होता है, ज्ञानी होता है। अग्नेमय का अभिप्राय यह कि जैसे अग्नि प्रदीप्त होती है और प्रदीप्त हो करके अग्नि के द्वारा न उसके साथ में सिंह आता है, न मृगराज आता है, अग्नि का दाह हो रहा है। परन्तु देखो, इसी प्रकार जब सन्यासी अपने में ज्ञान रूपी अग्नि का याग करता है, हृदय में तपस्या का स्रोत बह रहा है, वही अपनी इन्द्रियों का साकल्य बना करके आत्मीय याग कर रहा है। उस सन्यासी, उस सन्यासी महापुरुष के द्वारा प्रत्येक राजा और प्रत्येक प्राणी उसके चरणों की वन्दना करता है और वन्दना करता है, उसके तप की सुगन्धि सुगन्धित हो जाती है और सुगन्धि को ले करके देखो, अपनी आभा को प्राप्त हो जाता है।
मानो मैं अपना विचार विशेष नहीं देना चाहता हूँ, क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी मानो नाना वाक् प्रगट किए हैं। मैं उन्हीं वाक्यों को ले जा करके कह रहा हूँ कि आधुनिक काल का न गृह रहा है, न ब्रह्मवर्चोसि रहा है, और न देखो, वानप्रस्थ रहा है, क्योंकि राजा की पद्धति भ्रष्ट होने पर ये तीनों आश्रम अपने आप ही भ्रष्ट हो गए हैं। इसी प्रकार देखो, जब यह तो राष्ट्रीय क्रिया कलाप है, क्या ब्रह्मचारियों को वानप्रस्थ शिक्षा दे और गृह आश्रम, मानो देखो, अपने पन में पनपता रहे, अपनी सत् क्रिया में लगा रहे और देखो, ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ताएं प्राप्त करके अन्त में वह त्यागी बन करके भयंकर वनों में तप करने वाला ब्रह्ममयी याग करने वाला हो। वह सन्यास को प्राप्त हो जाता है, ये मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी प्रगट किया है। मैं अपने विशेष चर्चा न देता हुआ, मैं अपने विषय पर वहीं आना चाहता हूँ कि मानव ब्रह्म वर्णा देखो, यागां रुद्र भव सम्भवा अव्रसम्व्रहे हे यजमान्! मेरा तो अन्तरात्मा तेरे साथ रहता है, तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, आयु में पवित्रता आ जाए, यह मेरी सदैव कामना

रहती है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा चाहता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपना बड़ा विचित्र पुनः से मेरे हृदय में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। जैसे विचारों की क्रान्ति, इनके हृदयों में रहती है, हमारे हृदयों में उस क्रान्ति का पुनः से प्रादुर्भाव न हो जाए, इनके विचारों को श्रवण करके। परन्तु विचार केवल इतना ही है कि मानव को अपने जीवन में महान् और तपस्या में परणित हो जाना चाहिए, दुर्गुणों को त्यागना है और अच्छाइयों को ग्रहण करना है, ये हमारे इन वाक्यों का अभिप्राय है। परन्तु देखो, सृष्टि की वार्त्ताएं मेरे पुत्र ने प्रगट की। इसके ऊपर टिप्पणी प्रगट करेंगे, आज इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है। आज का विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, सबमें सब देखो, सबकी सम्मति महान बनें, सबके विचार पवित्र हों, राष्ट्र ऊँचा बनें, अपने देखो, विधि विधान वाला हो। आज का वाक् अब समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन। ओ३म् ब्रह्मगणा देवं रथाः मा वाचन गता। ओ३म् सर्वं मया देवं रथाः ।